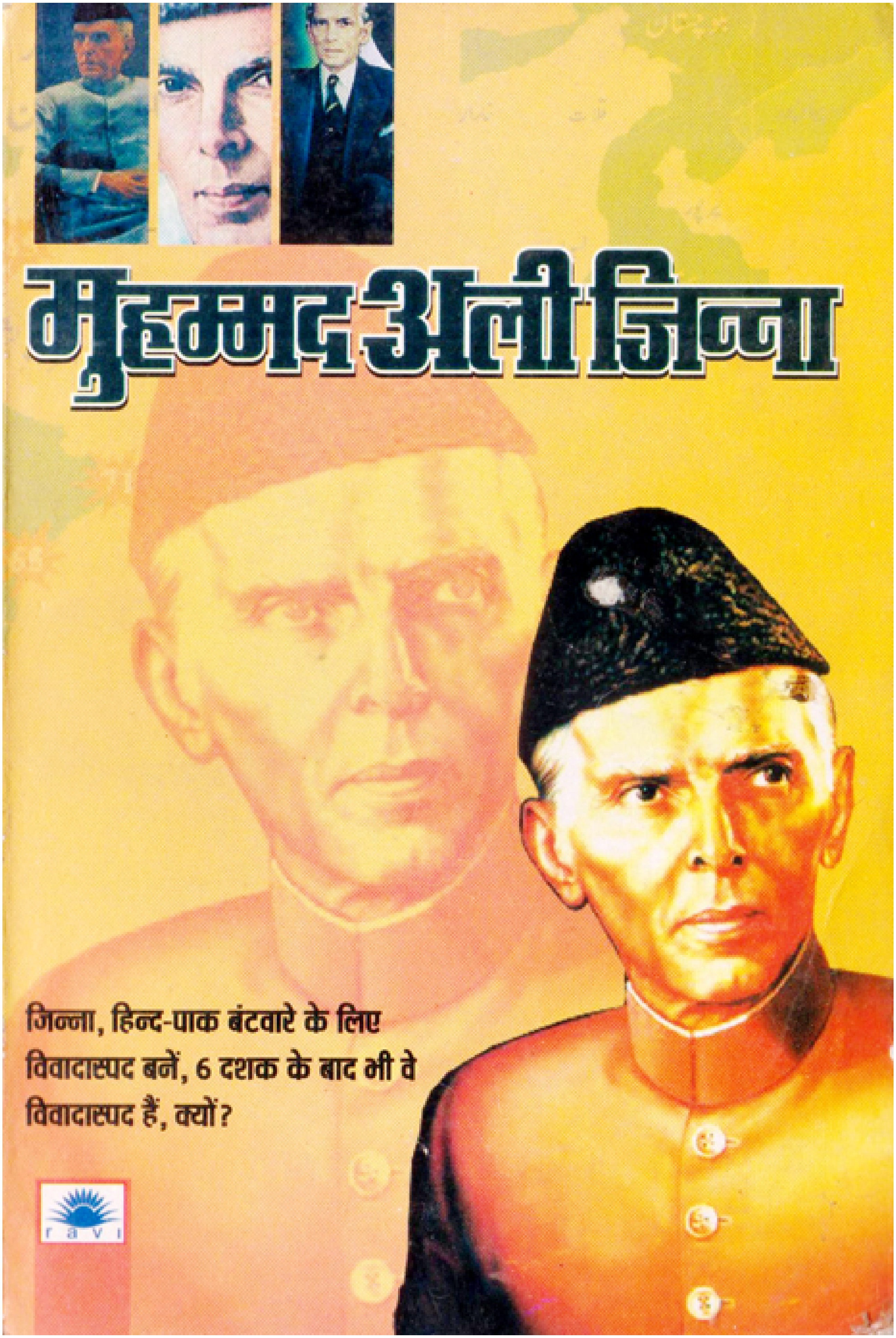

मुहम्मद अली जिन्ना
जिन्ना, हिन्द-पाक बंटवारे के लिए विवादास्पद बनें, 6 दशक के बाद भी वे विवादास्पद हैं, क्यों?
ravi

# मुहम्मद अली जिन्ना



मुहम्मद अली जिन्ना राजनीति के कुशल खिलाड़ी थे। जब भारत को स्वतंत्रता की आवश्यकता थी तब वे कांग्रेस के सरगर्म नेता के रूप में नज़र आये। पाकिस्तान को अलग राष्ट्र बनवाने का जब वक्त आया तो उन्होंने मुस्लिम लीग का चोला धारण कर लिया।


प्रकाशक

ravi

रवि पॉकेट बुक्स

33, हरी नगर , मेरठ शहर—250 002

मूल्य : ₹ 20 (बीस रुपये केवल)

❑ पुस्तक मुहम्मद अली जिन्ना
❑ प्रस्तुति मुहम्मद तारिक
❑ प्रकाशक रवि पॉकेट बुक्स
33, हरी नगर, मेरठ–250002 (उ०प्र०)
फोन : (0121) 2531011; फैक्स : (0121) 2521067
❑ लेजर टाइप सैटिंग : हिना कम्प्यूटर्स, मेरठ।
❑ मुद्रक : न्यू ऋषभ ऑफसैट प्रिन्टर्स, मेरठ।

## दो शब्द

मुहम्मद अली जिन्ना विश्व के राजनेताओं और राजनीति में एक ऐसा नाम है जिसका महत्व दो देशों में स्थापित है। भारत में उनका शुमार स्वतंत्रता संग्राम के शीर्ष नेताओं में किया जाता है तो पाकिस्तान के तो वे कायदे आज़म हैं। उन्होंने भारत की स्वाधीनता के साथ पाकिस्तान का बंटवारा कराकर ही दम लिया। भारत की स्वाधीनता से एक दिन पहले वे पाकिस्तान को, भारत से अलग एक स्वतंत्र राष्ट्र के रूप में मान्यता दिलाकर रहे। भारत का स्वतंत्रता दिवस 15 अगस्त को मनाया जाता है तो पाकिस्तान 14 अगस्त को अपना स्वतंत्रता दिवस मनाता है। दोनों देशों की स्वतंत्रता का वर्ष 1947 ई० है।

जिन्ना ने भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन के नेताओं के साथ कंधे से कंधा मिलाकर देश की आज़ादी की माँग की। उस समय को लेकर कहा जा सकता है—महात्मा गाँध ी से कहीं पहले वे भारतीय राजनीति में छा गए थे। सन् 1905 ई० में वे कांग्रेस के जाने-पहचाने नेताओं में गिने जाने लगे थे। उन्हें गोपाल कृष्ण गोखले के राजनीतिक शिष्य के रूप में जाना जाता था।

सर फिरोजशाह मेहता से जिन्ना की अत्यंत नज़दीकियाँ थीं। इंग्लैंड प्रवास के दिनों में दादाभाई नौरोजी के वे प्रिय थे। सरोजिनी नायडू उनकी राजनीतिक सूझ-बूझ से काफी प्रभावित थीं।

कई वर्षों तक भारत के स्वतंत्रता संग्राम में सक्रिय भूमिका निभाने वाले मुहम्मद अली जिन्ना की विचारधारा यकायक ही कैसे बदल गयी? यह आज भी लोगों की सोच का विषय है। पूरी तरह सेक्युलर विचारधारा अपनाने वाले मुहम्मद अली जिन्ना ने मुस्लिम लीग विचारधारा क्योंकर अपना ली; यह समझ में आने वाली बात नहीं। उन्होंने मुस्लिम लीग राग अलापा तो फिर अलापते ही चले गए। कांग्रेस छोड़ मुस्लिम लीग की सदस्यता अपना ली।

जिन्ना को पाकिस्तान के रूप में अलग राष्ट्र बनवाना था; बनवाकर माने। उस जैसे दूरदर्शी राजनीतिज्ञ को यह बात भी मालूम थी कि अलग राष्ट्र बनने का परिणाम क्या होगा—जानते हुए भी जिद पर अड़े रहे। परिणाम वही सामने आया जिसकी अपेक्षा थी। पाकिस्तान से रिफ्यूजी बनकर जो लोग बे-घर-बार होकर भारत आए, जो लोग भारत से पाकिस्तान विस्थापित होकर गए उनके बीच फसाद ने जन्म लिया। एक ऐसी त्रासदी लोगों ने झेली जिसकी उन्होंने कभी कल्पना भी न की थी।

पाकिस्तान बनवाकर जिन्ना को क्या मिला? सिर्फ पाकिस्तान के वे गवर्नर जनरल बने। वे चाहते तो राष्ट्रपति और प्रधानमंत्री भी बन सकते थे। इससे बड़ा सम्मान, इससे बड़ा पद तो उन्हें अखण्ड भारत में ही मिल सकता था; पर पद के लालच में जिन्ना ने भारत-पाकिस्तान बंटवारे का बीड़ा न उठाया था। इसके मूल में कुछ और कारण थे। पुस्तक में उनके जीवन परिचय में उन कारणों पर प्रकाश डाला गया है। आशा है जिन्ना के व्यक्तित्व को सही रूप में समझने में यह पुस्तक पूरी तरह सहायक सिद्ध होगी।

*शुभकामनाओं सहित!*

**प्रकाशक—**

काफी प्रभावित किया और उन्होंने 1905 ई० में अपने खिलाफ लगे राजद्रोह के मामले की सुनवाई के लिए जिन्ना को अपना वकील मुकर्रर किया। जिन्ना ने कोर्ट में तर्क दिया कि अगर भारतीय स्वशासन और स्वतंत्रता की माँग करते हैं तो यह राजद्रोह नहीं है। इसके बावजूद तिलक को सश्रम कारावास की सजा हो गई।

## जिन्ना इंग्लैंड में

लंदन पहुँचने के बाद दादा भाई नौरोजी जिन्ना के शुभ-चिन्तक बनकर उनकी जिन्दगी में आए। उस समय गाँधी जी भी पढ़ाई के लिए लंदन गए हुए थे, उन्होंने अपने लंदन के दिनों को स्मरण करते हुए यह लिखा था—

"मेंने देखा कि भारतीय छात्र किसी भी समय नौरोजी के पास बिना किसी रोक-टोक के आ जा सकते हैं। भले ही छात्र किसी भी प्रान्त या धर्म के हों; नौरोजी सभी के लिए पिता समान थे। नौरोजी उन्हें सलाह देते थे और उनकी मुश्किलों में राह दिखाते थे। में हमेंशा से नायक पूजा करता रहा हूँ, इसलिए दादाभाई मेर लिए सचमुच के दादा बन गए।"

जुलाई 1892 में दादा भाई नौरोजी हाऊस ऑफ कॉमर्स के लिए चुने गए। भारतीय छात्रों ने इस चुनाव का बड़े जोश के साथ प्रचार किया था; किन्तु जिन्ना इसमें भाग नहीं ले सके थे क्योंकि जुलाई माह सन् 1892 ई० में वे कराची में ही थे। लेकिन जिन्ना के 23 जनवरी, 1893 ई० को अभिनन्दन सभा में भाग लेने की जानकारी सामने आती है।

उसके बाद जिन्ना एक दर्शक बनकर नियमित रूप से हाउस ऑफ कॉमन्स की कार्यवाहियों को देखा करते थे। एक बार उत्साह में उन्होंने कहा भी था—

"में लंदन में निवास करना और ब्रिटिश संसद हाउस ऑफ कॉमन्स का मेंम्बर बनना चाहता हूँ और मुझे आशा है कि में वहाँ कुछ प्रभाव डाल सकूँगा। वहाँ में ब्रिटिश राजनेताओं से बराबरी के स्तर पर मिलूंगा।"

जिन्ना को यह उत्साह दादाभाई नौरोजी के कारण ही मिला था। उनकी बहन फातिमा जिन्ना उन दिनों को याद करते हुए लिखती हैं—

"मेर भाई ने मुझसे कहा था—जब मेंने यह जाना कि 'लार्ड साल्सबरी' ने अपने एक भाषण में दादाभाई को 'काला आदमी' कहकर उनकी हँसी उड़ाई और फिन्सबरी क्षेत्र के लोगों से उन्हें नहीं चुनने के लिए कहा, तब में क्रोध से भर उठा। अगर दादाभाई काले थे तो में उनसे भी काला था और अगर हमारे राजनीतिक स्वामियों की यह मानसिकता है तो हम कभी उनके हाथों अपने लिए बेहतरी की उम्मीद नहीं कर सकते।

उस रोज से में हर तरह के रंगभेद का घोर शत्रु बन गया हूँ। मैंने प्रतिशोध की भावना के साथ दादाभाई के लिए काम किया और सौभाग्य से वह तीन वोटों से जीत गए थे। हालांकि जीत का अन्तर बहुत कम था मगर फिर भी लंदन के भारतीय छात्रों ने इस विजय को शानदार ढंग से मनाया। जब में कॉमन्स सभा की दीर्घा में बैठकर इस सभा में दादाभाई का पहला भाषण सुन रहा था तो मुझे अपने अन्दर एक नए रोमाँच का अनुभव हुआ था।"

दादाभाई नौरोजी के प्रति जिन्ना के मन में काफी श्रद्धा व सम्मान था। आगे चलकर नौरोजी ने उनकी राजनीतिक पहचान पर महत्वपूर्ण प्रभाव डालना शुरू कर दिया था। 'ओल्ड मेंन' के जिन्ना समर्पित मित्र थे। जबकि जिन्ना आयु में उनसे बहुत छोटे थे। फिर भी दोनों ने एक साथ मिलकर भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अस्तित्व के शुरुआती दिनों में इसे मजबूत करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी थी।

बैरिस्टरी पढ़ाई का सुखद संयोग

1893 ई० का साल जिन्ना के सौभाग्य से आखिरी साल था। उस समय कानून को अपना पेशा बनाने वाले को एक परीक्षा में सफल होने पर प्रवेश मिल जाता था। इस परीक्षा का विचित्र नाम 'लिटिल गो' **(Little go)** था। इसके बाद नियम बदलने लगे।

1893 ई० के बाद अगर जिन्ना प्रवेश लेना चाहते तो उन्हें बॉर तक पहुँचने के लिए दो साल ज्यादा लगाने पड़ते। इसलिए उन्होंने अक्लमन्दी से काम लिया और ग्राहम्स की अप्रेंटिसशिप छोड़कर 'लिटिल गो' परीक्षा में बैठने का दृढ़ निश्चय कर लिया।

इसके अन्तर्गत उन्हें अंग्रेजी भाषा, इतिहास और लैटिन भाषा तीन पेपरों का इम्तिहान देना था। तीसरा पेपर भारत के विद्यार्थियों के लिए कुछ कठिन था और आगे भी कठिन बना रहा।

लैटिन की शुरूआती शिक्षा में ही उन्हें कम से कम दो साल का समय लग जाता और तब तक प्रवेश परीक्षा में ढील की सुविधा बन्द हो जाती। लेकिन इसके साथ एक ऐसा नियम भी था जिसके तहत भारतीयों को लैटिन के पर्चे से छूट मिल जाती थी।

बशर्ते संबंधित पीठ के शिक्षक, अभ्यार्थी छात्र के बाकी के प्रदर्शन से संतुष्ट हों। जिन्ना ने इसी छूट के लिए आवेदन किया था।

उसके बाद 'लिंकन्स इन' की विशेष परिषद मास्टर्स ने उनकी अर्जी मन्जूर कर ली और प्रारंभिक परीक्षा के लैटिन परचे से उन्हें छूट दे दी गयी। 25 मई 1893 ई० को परीक्षा हुई थी। जिन्ना इस परीक्षा में पूरी तरह से सफल हुए थे।

फिर जिन्ना ने यहीं पर अपने नाम के साथ अनावश्यक 'भाई' शब्द को सदा के लिए हटा दिया। उसके बाद उनका नाम मुहम्मद अली जिन्ना हो गया। जो अन्त तक उनके साथ चला।

उनके नाम में एक और बदलाव भी हुआ था। जिन्ना ने अपने नाम की (Spelling) में भी बदलाव कर दिया था। यह बदलाव एक बार नहीं कई बार किया गया था। जेणा भाई के जगह पर 'जिन्ना' और ऐसा ही कुछ परिवर्तन उन्होंने 'मौहम्मद' व 'अली' की स्पैलिंग में भी किया था।

कोई भी सामाजिक मनोवैज्ञानिक इन छोटे-छोटे परिवर्तनों में भी कोई आशय जरूर निकाल सकता है; इसलिए यह कोई मामूली बात नहीं थी। उनका नाम उनकी शख्सियत के विकास के साथ परिवर्तित होता रहा। सम्भवतः एक नौजवान के मन में भी यही सोच थी कि जिन्ना को एक ऐसा नाम चाहिए था जो आने

वाले वर्षों में उसके व्यक्तित्व की गरिमा से मेंल खाए।

सन् 1896 ई० में अपनी पढ़ाई पूरी करके जिन्ना इंग्लैंड से वापस भारत आ गए। किन्तु वह कराची नहीं गए, वहाँ से वह सीधे बम्बई (मुम्बई ) आ पहुँचे थे।

जिस समय वे इंग्लैंड में थे उसी दौरान उनकी पत्नी एमी बाई और माँ दोनों का देहान्त हो गया था, इसी कारण से आगामी वर्षों में बम्बई ही उनका निवास स्थान बन गया था।

वकालत की राह

सबसे पहले जिन्ना एक रेलवे होटल में ठहरे थे, जो उच्च न्यायालय के पास था। वहीं वह अपने मुवक्किलों की प्रतीक्षा करते रहते थे। जिन्ना का यह समय काफी कठिनाइयों से भरा हुआ था।

जिन्ना के जीवन पर बनी एक फिल्म में सैयद पीरजादा ने बताया है कि उन दिनों के विषय में जिन्ना कहा करते थे—"जब मैंने शुरुआत की, तब मेरे पास इतने पैसे भी नहीं थे किं बस या ट्राम से जा सकूँ। में ज्यादातर अपना सफर पैदल ही तय करता था।"

"शिखर पर हमेशा जगह होती है, मगर वहाँ जाने के लिए कोई लिफ्ट नहीं है, संघर्ष करना पड़ता है। सीढ़ियाँ पैदल चलनी पड़ती हैं।"

इसी तरह जिन्ना ने भी अपनी जिन्दगी में काफी संघर्ष किया था। जिन्ना का कहना था कि जब पहले वह दो-तीन साल तक मजिस्ट्रेट नहीं बने थे तब तक उनका समय बहुत खराब गुजर रहा था, वह हर दूसरे दिन सड़क पार कर वाटसंस होटल जाते थे। वह होटल उन दिनों काफी मशहूर होटल था।

वह वहाँ बाज़ी के लिए बिलियर्डस खेलते थे और इस तरह अपने खर्चे पूरे किया करते थे, क्योंकि उस समय उनकी कमाई काफी कम थी। वर्तमान में वाटसंस होटल एक खण्डहर में बदल चुका है। 'वाटसंस' के अस्तित्व की एक अकेली यादगार होटल की रेलिंग ही बची हुई है, वह है एक 'W' का निशान।

सन् 1896, 24 अगस्त के दिन जिन्ना को बम्बई में हाईकोर्ट ऑफ ज्यूडिकेटर में नामाँकित किया गया। फिर जल्दी ही उन्हें एडवोकेट के रूप में शपथ भी दिलवाई गई थी।

इस तरह बम्बई के हाईकोर्ट बॉर के सदस्य के रूप में जिन्ना का नामाकांन 24 अगस्त 1896 को हुआ। जब गाँधी जी इंग्लैंड से अपनी पढ़ाई पूरी करके लौटे तब इसके सदस्य बने थे।

जिस समय जिन्ना हाईकोर्ट बार के सदस्य बने थे उस समय उनकी आयु 20 वर्ष थी। एक विराट कानूनी व राजनीतिक जीवन उनके सामने था। यह उनका सर्वप्रथम कदम था। जिस समय जिन्ना भारत आए थे उस समय उनके पिता कराची की जिला अदालत में बड़े गम्भीर मुकदमें में फँसे पड़े थे। जिन्ना ने इसमें खुद जिरह करने की जिम्मेदारी लेते हुए बचाव पक्ष का मोर्चा सँभाला था और मुकदमें में अपने पिता को जीत दिलायी थी।

यहीं से जिन्ना के पेशेवर कानूनी व्यवसाय का भी आरम्भ हो चुका था। जल्दी ही वह बम्बई के अच्छे वकीलों में गिने जाने लगे। इसके पश्चात उन्हें बम्बई के

उस समय के कार्यकारी महाधिवक्ता जॉन मोलेस वर्थ मेंक्फेर्सन के चैंबर में शामिल किया गया।

सरोजिनी नायडू के शब्दों में—"यह बड़ा ही भद्र अनुमोदन था, जो पहली बार किसी भारतीय को मिला था और पाने वाले ने इसे हमेंशा अपने शुरूआती संघर्ष की निराशा के अधंकार में उम्मीद के दीपस्तंभ की तरह याद किया है।"

सर चिमन लाल सीतलवाड़ ने टिप्पणी की है—"मेंक्फेर्सन की वकालत काफी अच्छी चलती थी, उनकी भाषा सधी हुई और शब्दों का चुनाव बड़ा सटीक था। उनके सहायक के रूप में जिन्ना को न्यायिक क्षेत्र की बुनियादी समझ मिली।"

वंश और परिवार परिचय

कहा जाता है कि शिया मुसलमानों तथा इस्माइली आगा खान के अनुयायी खोजाओं को जब ईरान मुल्क में काफी परेशान किया गया, तो वह लोग तंग आकर वहाँ से चुपचाप भाग निकले थे। उन लोगों ने वहाँ से भागकर भारत में शरण ली थी। 'जिन्ना' इसी खोजा वंश में उत्पन्न हुए थे।

जिन्ना के पिता का नाम जिणाभाई पोंजा था। उनका जन्म सन् 1850 ई० में हुआ था। उनसे बड़े उनके दो भाई और भी थे, जिणाभाई अपने भाइयों में सबसे छोटे थे। उनकी परवरिश बड़े साधारण ढंग से हुई थी।

जब वह बड़े हुए तो उनकी शादी मिठीबाई नाम की एक लड़की से हो गई। मिठीबाई एक नेक प्रवृत्ति की महिला थी। शादी के कुछ दिन बाद ही जिन्ना के पिता को धन कमाने की इच्छा होने लगी, तो वे अपनी नई नवेली दुल्हन के साथ धन कमाने की इच्छा से कराची चले गए। उस दौरान कराची बड़े शहरों में गिना जाता था और सिंध का उभरता हुआ बन्दरगाह था।

उसके बाद सन् 1869 ई० स्वेज नहर का निर्माण पूरा होने के पश्चात कराची ब्रिटिश भारत के सबसे करीबी बन्दरगाह के रूप में आर्थिक उछाल के दौर से गुजर रहा था। यह शहर साउथम्पटन के केवल पाँच हजार नौ सौ सत्रह समुद्री मील की दूरी पर और बम्बई से सिर्फ दो सौ मील की दूरी पर स्थित था। उस शहर की आबादी उस समय तक पचास हजार से कम थी।

जिणा भाई ने इसी इलाके में वजीर मेंशन नामक एक तिमंजिले मकान की दूसरी मंजिल किराए पर ले ली। बाद में इस मकान का पुनर्निर्माण करके राष्ट्रीय स्मारक तथा संग्रहालय में बदल दिया गया है। यह इमारत न्यू हैम रोड पर स्थित थी। इस इमारत के सामने कपास बाजार था।



*जिणा भाई पोंजा, जिन्ना के पिता*

बताया जाता है कि मुहम्मद अली जिन्ना का जन्म इसी इमारत में हुआ था। उनके पश्चात जिणा भाई के छः सन्तानें और भी हुईं। जिन्ना ने अपना जन्मदिन 25 दिसम्बर सन् 1876 ई० को स्वीकार किया था।

पाकिस्तान में हर वर्ष उनका जन्मदिन इसी दिन मनाया जाता है। सन् 1879 ई० से पहले कराची की नगरपालिका जन्म तथा मृत्यु की सनद जारी करती थी। जिन्ना की जन्म सनद वहीं से जारी हुई थी।

'जिन्ना' को घर पर 'मामद' नाम से पुकारा जाता था। उनकी बहन फातिमा का पूरा जीवन उनके प्रति ही समर्पित रहा। फातिमा जिन्ना के कहने के अनुसार जिन्मा अपने जन्म के समय काफी कमजोर नजर आते थे।

## जिन्ना की प्रारंभिक शिक्षा

उस समय निजी शिक्षक रखना कोई मामूली काम नहीं था। यह काम तो सिर्फ वही कर सकते थे जो काफी अच्छी हैसियत के लोग माने जाते थे।

जिणा भाई पोंजा की गिनती उन दिनों रईसों में होने लगी थी। कराची में आए हुए उन्हें दस साल गुजर चुके थे। इस दौरान उनका व्यापार दिन दोगुनी रात चौगुनी तरक्की कर रहा था। सन् 1880 ई० में उनका व्यापार काफी तरक्की पर पहुँच चुका था।

वह कपास, खालें, ऊन, तिलहन तथा अनाज आदि के माल का निर्यात करते थे। कराची के व्यस्त बन्दरगाह पर उनके आयातित माल में मेंनचेस्टरी में बनी वस्तुएँ, धातुएँ तथा रिफाइंड तथा शक्कर शामिल होती थीं।

इस व्यापार में जिणा भाई को इतना अधिक फायदा हो रहा था कि वह अपने ग्राहकों के लिए बैंकर तथा महाजन की भूमिका भी निभाने लगे थे। वह लोगों को ब्याज आदि पर पैसा देते थे।

हालांकि इस्लाम धर्म के अन्तर्गत ब्याज पर पैसे लेना और देना बहुत बड़ा गुनाह माना जाता है, लेकिन फिर भी जिणा भाई ने बैंकिंग के जरिए ही माल कमाया और फिर गंवा भी दिया।

## जिन्ना का बम्बई (मुंबई) मोह

बात सन् 1887 ई० की है, इस साल के आरम्भ में जिन्ना की इकलौती बुआ मानबाई उससे मिलने के लिए मुम्बई से आई हुई थीं। उनका विवाह पीरभाई नामक कामयाब खोजा व्यापारी से हुआ था।

उस समय पीरभाई मुम्बई नगर में निवास करते थे। जिन्ना की बुआ का व्यक्तित्व काफी अच्छा था। उनका व्यवहार भी काफी प्रभावित करने वाला था। यही कारण था कि जिन्ना अपनी बुआ के व्यक्तित्व व व्यवहार से इतना ज्यादा प्रभावित हुए कि उसने कराची छोड़कर अपनी बुआ के साथ बम्बई जाने का मन बना लिया था।

उन दिनों कराची के व्यापारी घराने बम्बई से जुड़े रहते थे। बम्बई प्रेसीडेंसी की राजधानी थी। जिन्ना बम्बई चले गए।

जिन्ना का पहला बम्बई प्रवास थोड़े ही दिनों का रहा, लेकिन इस प्रवास ने शहर के प्रति बालक जिन्ना की लालसा और अधिक बढ़ा दी।

वहाँ पहुँचते ही जिन्ना की बुआ को उसकी पढ़ाई-लिखाई की चिन्ता सताने लगी। कुछ ही दिनों के बाद उसकी बुआ ने उनका अन्जुम-ए-इस्लाम नामक स्कूल में दाखिला करवा दिया। औपचारिक शिक्षा जिन्ना को सख्त नापसन्द थी, वह घर बैठकर रट्टा नहीं लगा सकता था। गणित में तो उन्हें बिल्कुल दिलचस्पी नहीं थी।

मुम्बई जैसे खूबसूरत बन्दरगाह ने उसे मन्त्र मुग्ध कर दिया था, सफेद रेत से भरा बन्दरगाह अर्द्धचन्द्राकार समुद्री तटों से सजा हुआ था, ऊँचे घनेरे ताड़ के

पेड़ों से सजे हुए किनारे। वहाँ का सुहावना मौसम, क्राफोर्ड मार्केट जैसे विशाल बाज़ारों की छत के नीचे दुनियाभर की चीज़ों को खरीदती, टहलती अंग्रेज औरतें, उन्हें खूब भा गयीं थीं।

बम्बई के मेंउन ओवल, हाईकोर्ट तथा विश्वविद्यालय के आस-पास बने ब्रिटिश राज तथा इसके आधुनिकीकरण की देन विक्टोरियायी गोथिक स्मारकों का खूबसूरत नज़ारा, जिन्ना को आश्चर्यचकित कर देता।

जिस दिन जिन्ना की छुट्‌टी होती तो वह अपनी बुआ से घूमने की जिद्द करते और बुआ उनकी बात मानकर अक्सर अपने भतीजे के लिए बग्घी में पूरी बम्बई घूमने का प्रबन्ध करा देती थी।

अगर जिन्ना अपनी बुआ के साथ उन दिनों बम्बई न आए होते तो अवश्य ही अपने पिता के नक्शे कदम पर ही चलते और आगे चलकर एक सफल व्यापारी के रूप में जाने जाते। लेकिन बम्बई की चकाचौंध ने उसकी विचारधारा को बदल दिया था।

लगभग छह माह बाद वह फिर कराची लौट गए। वह कराची लौटना तो नहीं चाहते थे लेकिन मजबूरी में उन्हें लौटना पड़ा था, क्योंकि जिन्ना की माँ की तबियत अचानक खराब हो गई थी।

उसके बाद 23 दिसम्बर सन् 1887 ई० को जिन्ना का दाखिला सिन्ध के मदरसे में कराया गया मगर, जिन्ना को अंकगणित पढ़ना जरा भी पसन्द न आता था। वह तो अंकगणित पढ़ने की जगह अपने पिता के अरबी घोड़ों की सवारी करना ज्यादा पसन्द करता था। पढ़ाई से उनका मन ऊबने लगा था।



*बम्बई में जिन्ना का घर*

मदरसे में उनकी लम्बी गैर-हाजिरी के कारण उनका नाम रजिस्टर से काट दिया गया। कराची के किसी अध्यापक द्वारा पढ़ाए पाठ को पढ़ने की अपेक्षा उन्हें मौज-मस्ती के साथ कहानियाँ और कविताएँ पढ़ना ज्यादा अच्छा लगता था।

अपने बड़ों के दबाव में रहना व उनसे डरना जिन्ना को आता ही नहीं था।

उसकी इसी उद्दण्डता को देखते हुए उसके माता-पिता ने उसे घर के पास ही लारेंस रोड पर स्थित क्रिश्चियन मिशन हाईस्कूल में भेजना शुरू कर दिया ताकि बम्बई से वापस लौटे बेटे को उच्च स्तर का स्कूल प्रभावित कर सके।

उस स्कूल में जिन्ना का मन लगा गया लेकिन 25 दिसम्बर के दिन की अहमियत की उसमें दिलचस्पी उत्पन्न कर गया। इस प्रकार उनके जीवन के लिए उस मिशन स्कूल की भूमिका से चाहकर भी इन्कार नहीं किया जा सकता।

देखते ही देखते सन् 1890 ई० तक जिणा भाई का व्यापार काफी उन्नति पर पहुँच चुका था। फिर उन्होंने घोड़ों के अस्तबल और कई खूबसूरत बग्घियाँ भी खरीद ली थीं। उनकी फर्म का कराची की प्रमुख ब्रिटिश मेंनेजिंग एजेंसी डगलस ग्राहम एण्ड कम्पनी से काफी घनिष्ट सम्बन्ध बन गया था।



# रंगमंच का शौक

अपनी युवावस्था में ही जिन्ना रंगमंच की ओर भी आकर्षित हुए। उसके मन में अल्डविक के मंच पर रोगियों का किरदार अदा करने की इच्छा छिपी हुई थी।

वैसे भी कई बड़े वकीलों की नाटकीयता किसी श्रेष्ठ अभिनेता से कम आकर्षक नहीं होती थी। उनका शौक फातिमा जिन्ना के शब्दों में इस प्रकार है—

"अपनी राजनीतिक सक्रियता के दिनों में, थके-माँदे देर से घर लौटने पर भी शेक्सपीयर की रचनाएँ पढ़ते उनकी आवाज में गूँज होती।"

जिन्ना की नाटकीय जिरह और जज या जूरी के सामने बोलने का खास अन्दाज़ देख चुके लोग अक्सर यही सोचते थे कि वह पैदायशी अभिनेता हैं।



जिन्ना की कभी बॉर में जाने की हिम्मत हुई थी। जबकि उनके साथ के लोग अक्सर बार में जाते थे। 7 जून सन् 1895 में जिन्ना ने पहली बार किसी बॉर में घूमने को प्रयत्न किया था।

उन्होंने दाखिले का पूरा शुल्क चुकाने के लिए 138/19 पाउंड का एक चेक बनाया। जबकि उनके पिता ने पत्रों द्वारा जिन्ना को वापस आने और घाटे में चल रहे व्यापार को सँभालने में मदद करने का आदेश दिया था। लेकिन जिन्ना उनका आदेश न मानकर पूरी फीस शुरू में ही एक साथ भरने का निर्णय लिया जिससे उन्हें बाद में किसी तरह की परेशानी न उठानी पड़े।

जिन्ना ने लिखा है

"बार की सदस्यता मिल जाने के पश्चात मुझे कुछ दोस्त एक थियेटर कम्पनी के मेंनेजर के पास लेकर गए। उसने मंच पर चढ़कर शेक्सपियर के कुछ संवाद पढ़ने के लिए कहा। मेंने ऐसा ही किया। उसकी पत्नी और उसे इतना अच्छा लगा कि उन्होंने मुझे नौकरी देने की पेशकश कर दी। मैं बहुत खुश हुआ और माता-पिता को पत्र लिखकर उनका आशीर्वाद माँगा।

मेंने लिखा था कि कानून का पेशा बहुत वक्त लेता है, और उसमें कामयाबी की कोई गारन्टी नहीं, रंगमंच का कैरियर कहीं बेहतर है और फिर इस नौकरी से मुझे अच्छी शुरूआत मिली है। जिस कारण से में अपने पैरों पर खड़ा हो सकता हूँ। फिर मुझे आर्थिक सहायता भेजने की जरूरत भी नहीं पड़ेगी।

जवाब में मुझे पिता ने लम्बा पत्र भेजकर मेरी इस योजना को सख्ती से खारिज कर दिया। उनके पत्र में एक मर्मस्पर्शी वाक्य भी था, जिसने मेरा फैसला बदल दिया। पिता ने लिखा था कि 'अपने परिवार से गद्दारी मत करो।' उसके बाद मेंने



*जिन्ना इंग्लैंड में*

थियेटर कम्पनी के मालिक के पास जाकर कहा कि मैं अब रंगमंच को अपना कैरियर नहीं बनाना चाहता। यह सुनकर उन्हें बड़ा अचम्भा हुआ। उन्होंने मुझे समझाने की बहुत कोशिश की, लेकिन मैं तय कर चुका था। मैंने उसके साथ जो करार किया था उसके अनुसार तीन महीने नौकरी करना जरूरी था, मगर वे अंग्रेज थे इसलिए उन्होंने कहा–

"ठीक है, जब रंगमंच में तुम्हें दिलचस्पी नहीं तो तुम्हारी मर्जी के विरुद्ध तुम्हें यहाँ रखने से कोई फायदा नहीं है?"

इन बातों से स्पष्ट है कि जिन्ना की पहली पसन्द अभिनय ही था।



# भारत में वापसी और वकालत

जिन्ना ने जब रंगमंच में काम करने से साफ इन्कार कर वापस भारत लौटने का विचार किया। भारत लौटकर वह कराची में रुकना नहीं चाहते थे। इसलिए उन्होंने लंदन छोड़ने से पहले बैंक खाते में बची रकम बम्बई के नेशनल बैंक ऑफ इंडिया में अपने नाम से खोले गए एक खाते में स्थानांतरित कर दी।

16 जुलाई सन् 1896 ई० को जिन्ना पूरब के सफर पर निकलने वाले पी०एफ०ओ० लाइनर (समुद्री जहाज) पर रवाना हो गए।

जिन्ना ने बम्बई (मुंबई) में स्थाई रूप से रहने का फैसला कर लिया था। वह कराची में पहुँचे। कुछ दिन वहाँ रहकर बम्बई प्रस्थान किया।

जिन्ना ने बम्बई हाईकोर्ट में 24 अगस्त सन् 1896 ई० को एक बैरिस्टर के रूप में अपना नाम दर्ज करवाया।

उसी साल बम्बई बहुत परिस्थितियों से गुजरी। बम्बई के साथ-साथ पूना और अहमदाबाद, चीन से आए बुबोनिक प्लेग की चपेट में आ गए थे। उन दिनों जिन्ना साफ-सफाई का विशेष ध्यान रखते थे। जिसे देखकर हर कोई प्रभावित होता था।

## वकालत की शुरूआत

सन् 1990 ई० में उनके एक प्रतिष्ठत मित्र ने उनका परिचय बम्बई के कार्यकारी एडवोकेट जनरल जोन मोल्सवर्थ मेक्फर्सन से कराया। जिन्ना मेंक्फर्सन को पहली ही नज़र में भा गए थे। उन्होंने जिन्ना को अपने दफ्तर में ही काम पर रख लिया।

जिन्ना के लिए जो सबसे ज्यादा मददगार सावित हुई थीं वो उनकी बुआ मानबाई तथा उनके पति पीर भाई व उनके कुछ दोस्त जो रसूख वाले थे तथा वे सामाजिक हलको में जिन्ना के सहायक थे।

लिंक्स-इन से वकालत पास करने की वजह से उनके साथ एक बेहतर परिचय जुड़ा हुआ था, उस पर मेंक्फर्सन की मदद ने उन्हें छोटे-पैमाने पर चलने वाली पेशवराना होड़ तथा दौड़-धूप से निकालकर सत्ता तथा सम्भावनाओं के उच्च शिखर पर पहुँचा दिया।

जिन्ना को मेंक्फर्सन के दफ्तर में काम करने का सबसे बड़ा फायदा यह हुआ था कि उन्हें आसानी से महत्वपूर्ण सूचनाएँ प्राप्त होती रहती थीं। उसी दौरान उन्हें खबर लगी कि बम्बई के चार मजिस्ट्रेटों में से एक पद खाली होने जा रहा है।

इस खबर को पाते ही जिन्ना सर चार्ल्स ओलियंट के दफ्तर में पहुँच गए। उस समय सर चार्ल्स बम्बई की प्रान्तीय सरकार के सदस्य थे। उन्हें मेंक्फर्सन का यह महत्वाकांक्षी सहायक इतना पसन्द आया कि उन्होंने उसे मजिस्ट्रेट के रूप में रख लिया।

## म्यूनिसिपल जज की सरकारी नौकरी

म्यूनिसिपल जज के रूप में जिन्ना ने छः माह तक कार्य किया। उन्होंने हर तरह के फौजदारी मुकदमें सुने। जज के रूप में जिन्ना खुद को निडर व निष्पक्ष साबित करने में कामयाब रहे, लेकिन उन्हें यह भी लगा कि यह नौकरी अदालत में वकालत की अपेक्षा ज्यादा हल्की है।


*वकील के रूप में जिन्ना*

प्रसिद्ध वकील को नाम व दाम दोनों ही मिलते थे और जिन्ना को दोनों में ही काफी रुचि थी। सन् 1901 ई० में सर चार्ल्स की तरफ से जिन्ना को स्थाई मजिस्ट्रेट बनाने का आदेश मिला। जिन्ना ने उस आदेश को ठुकरा दिया। जबकि मजिस्ट्रेट की तनख्वाह उन दिनों डेढ़ हजार रुपये थी। मगर जिन्ना ने उस पद को ठुकराते हुए दृढ़ता से कहा था—

"इतना रुपया तो में जल्द ही एक दिन में ही कमाने लगूँगा।"

जिन्ना के मुँह से निकली हुई यह बात जल्दी ही सच साबित हुई। उसके बाद जिन्ना ने अपने पसन्दीदा वकालत के पेशे में कदम रखा। उसने अपना निजी दफ्तर किराए पर ले लिया और उसकी डेकोरेशन पर काफी पैसा भी खर्च कर डाला था।

उस बीच जिणा भाई की सेहत उनके व्यापार की तरह गिरती ही जा रही थी। वह अपने बच्चों के साथ रहने के लिए बम्बई चले आए थे और खोजा इलाके में एक छोटा सा घर ले लिया। यह घर किराए पर लिया गया था। उन दिनों जिन्ना का अपने पिता से कुछ खास मेंलजोल नहीं था। सन् 1904 ई० में जिणा भाई रत्नागिरी इलाके में रहने लगे थे।

उस स्थान पर उनकी जिन्दगी के अन्तिम वर्ष बड़ी शान्ति से गुजरे थे। अपने भाई बहनों में जिन्ना का अपनी बहन फातिमा के साथ नजदीकी सम्बन्ध रहा था। उन्होंने फातिमा का दाखिला बम्बई के बान्द्रा कान्वेंट स्कूल के बोर्डिंग हाउस में करवा दिया था। जहाँ उन्होंने पढ़ाई पूरी की।

प्रत्येक रविवार को जिन्ना अपनी बहन से मिलने के लिए जाते थे और फिर उसे बग्घी में बैठाकर बम्बई घुमाते थे।

□

को ही नहीं, बल्कि चरित्र विकास के पहलू को ज्यादा अहम मानते हैं।"

प्रतिवेदन के अन्तर्गत प्रार्थना की गई कि वाइसरीगल तथा प्रान्तीय कौंसिलों, हाईकोर्ट की बैंचों, नगरपालिकाओं, विश्वविद्यालय की सीनेटों तथा सिंडिकेटों में मुसलमानों को अलग से सीटें दी जानी चाहिए।


ब्रिटिश वायसराय 1906
सर लार्ड मिण्टो

प्रतिनिधि मण्डल का मिंटो ने हार्दिक स्वागत किया। मिंटो ने आश्वासन दिया कि मुसलमान हमेंशा की तरह ब्रिटिश इन्साफ तथा निष्पक्षता पर पूरी तरह यकीन कर सकते हैं।

वायसराय के इस आश्वासन से प्रसन्न होकर प्रतिनिधि मंडल में तसल्ली की बातचीत होने लगी, सभी वायसराय को अपना मित्र समझने लगे।

डनलप तथा मिंटो की दृष्टि में प्रतिनिधि मंडल से उक्त वार्ता काफी बड़ी कामयाबी थी। उनके विचार से उन्होंने करीब छः करोड़ बीस लाख भारतीयों को अपने प्रभाव में ले लिया था।

कलकत्ता नगर के राष्ट्रवादी अखबार 'अमृत बाजार पत्रिका' ने इस पर टिप्पणी की—


जमींदार सलीमुल्ला खां

"यह कार्यक्रम एक प्रायोजित कार्यक्रम था—इसके पीछे सरकारी अधिकारी लोगों की कारस्तानी थी। जिससे उनकी करतूतों पर परदा डाला जा सके। अंग्रेजी अफसर कुछ कम दिमाग हस्तियों को नेक चाल-चलन की सनद देने की सोच रहे थे, क्योंकि वह समझ चुके थे कि हिन्दुओं में अब उनकी दाल नहीं गलेगी, इसलिए वे मुसलमानों के पुराने तबकों को बहका रहे थे।"

नवम्बर माह में ढाका के जमींदार सलीमुल्ला खान ने अलीगढ़ की मुहम्मद एजुकेशनल कांफ्रेंस को अपने शहर में उसकी वार्षिक मीटिंग करने का निमंत्रण दिया। बहुत अधिक जमीन का मालिक होने के कारण सलीमुल्ला खान को नवाब का खिताब मिल गया। उन्होंने कहा—

"इस वार्षिक मीटिंग के साथ शहर में मुस्लिम आल इंडिया कान्फेडरेसी का आयोजन भी होगा।"

मुस्लिम लीग की स्थापना सभा का अधिवेशन 30 दिसम्बर सन् 1906 ई० में हुआ।

मुस्लिम लीग के प्रथम अध्यक्ष हैदराबाद के नवाब विकुर-उल-मुल्क मुश्ताक हुसैन ने कहा—

"सभी मुस्लिम लोग संख्या में इस देश की पूरी आबादी का पाँचवां हिस्सा हैं।"

इस प्रकार अंग्रेजों के प्रति वफादारी दिखाने वाले मुसलमान सामन्ती वर्ग ने मुस्लिम लीग की स्थापना की। आगा खां मुस्लिम लीग के पहले अध्यक्ष चुने गए।



# गाँधी जिन्ना आमने-सामने (1914 ई०)

जिन्ना ने अप्रैल माह सन् 1914 ई० में फिर से लंदन में अपना कदम रखा। उनके उच्चस्तरीय प्रतिनिधिमंडल के सदस्यों में कांग्रेस के निर्वाचित अध्यक्ष बंगाल के भूपेन्द्रनाथ बसु और लाला लाजपत राय भी शामिल थे।

लार्ड करयू ने फौरन उनसे मुलाकात की। जिन्ना की वाकपटुता से वह बहुत अधिक प्रभावित हुए और साथ ही लार्ड करयू ने यह भी जान लिया था कि जिन्ना के अन्दर एक बहुत चालाक इंसान भी छिपा हुआ है जो किसी भी समय किसी भी मौके पर अपनी असलियत उजागर कर देगा।

यह भी एक संयोग की बात थी कि प्रथम विश्व युद्ध के समय जिन्ना और गाँधी जी दोनों ही एक साथ लंदन में उपस्थित थे।



*जिन्ना-गाँधी जी में वाकयुद्ध*

सन् 1893 ई० में बैरिस्टर गाँधी, दक्षिणी अफ्रीका में कार्यरत एक भारतीय मुसलमान की ट्रेडिंग कम्पनी में नौकरी हेतु नेटाल गए थे। बीस वर्षों तक दक्षिणी अफ्रीका में रहे। उन्होंने सन् 1907 ई० से सन् 1914 ई० के बीच ट्रांसवाक तथा नेटाल में अहिंसक असहयोग आन्दोलन व सत्याग्रह आन्दोलन चलाया।

विश्व युद्ध के शुरू हो जाने के कारण गाँधीजी दक्षिण अफ्रीका से लंदन आ पहुँचे। वहाँ आकर उन्होंने भारतवासियों से फौज में भर्ती होने तथा साम्राज्य के



# जिन्ना द्वारा हिन्दू-मुस्लिम एकता का प्रयत्न

दिसम्बर माह के सन् 1915 ई० में मुस्लिम लीग तथा कांग्रेस के जलसे बम्बई में पहली बार कुछ ही कदमों की दूरी पर आयोजित किए जा रहे थे।

इससे उन लोगों को दोनों जलसों में भाग लेने का अवसर मिल गया था जो हिन्दू-मुस्लिम एकता से राष्ट्र का मंच तैयार करना चाहते थे। कांग्रेस अधिवेशन की अध्यक्षता सत्येन्द्र सिन्हा कर रहे थे और मुस्लिम लीग अधिवेशन की अध्यक्षता बंगाल के नेता मजहर उल हक कर रहे थे।

सत्येन्द्र सिन्हा ने अपने भाषण में तीन विशेष मामलों पर ज्यादा ध्यान दिया था—

पहला—सेना में अफसर बनाने लायक भारतीयों को कमीशन देने तथा जनता के लिए सैन्य प्रशिक्षण की माँग।

दूसरा—स्थानीय स्व-शासन के विस्तार सम्बन्धित माँग।

तीसरा—खेती सहित हमारे वाणिज्य तथा उद्योग के विकास सम्बन्धित माँग।

मुस्लिम लीग के अध्यक्ष मजहर-उल-हक भी हिन्दू मुस्लिम एकता को बनाए रखना चाहते थे। उन्होंने अपने एक भाषण में कहा—

"ऐसे वक्त में हमारी चुप्पी से लाजमी तौर पर विकृत तथा शरारती किस्म के मतलब निकाले जाएँगे। इस दुनिया में एक जगह रुकने जैसी कोई स्थिति नहीं होती। या तो आगे जाना होता है या फिर पीछे...।" यह कहा गया है कि कांग्रेस के साथ एक ही स्थान पर एक ही समय में अधिवेशन करना लीग की स्वतंत्रता पर प्रहार करते हुए उसकी शख्सियत को कांग्रेस में मिला देने के समान है।

इससे ज्यादा गलत बात और क्या हो सकती है। इन्सानों की तरह समुदाय भी अपनी शख्सियत से मुहब्बत करते हैं, उसकी कद्र करते हैं...। जब विविधता में से एकता विकसित होकर निकलती है तो असली तथा स्थिर व मजबूत राष्ट्रीय प्रगति हासिल होती है।"

अध्यक्ष के इन विचारों को जानने के बाद लीग के कई सदस्य बहुत अधिक नाराज हो गए। उन्हें कांग्रेस से मिलना-जुलना जरा भी पसन्द नहीं था। गुस्से में भरे इन असन्तुष्टों की अगुवाई मौलाना हसरत मोहानी ने की।

31 दिसम्बर सन् 1915 ई० में अधिवेशन की दूसरी बैठक शुरू होते ही इन असन्तुष्टों ने कार्रवाई स्थगित करने का प्रस्ताव रख दिया। दर्शक दीर्घा में बैठे कुछ मुल्लाओं ने गुस्से में अध्यक्ष पर चिल्लाना शुरू किया—

"अगर तुम मुसलमान हो तो तुम्हें मुसलमान जैसा दिखना भी चाहिए कुरान-ए-पाक तुम्हें मुसलमानों की तरह पोशाक पहनने की हिदायत देता है। तुम्हें मुसलमानों की जुबान ही बोलनी चाहिए, तुम मुसलमानों के नेता तो बनते हो मगर तुम बन नहीं सकते हो।"

इस प्रकार इन बातों से यह अधिवेशन खटाई में पड़ता नज़र आने लगा था। जब जिन्ना ने वहाँ का गरम वातावरण देखा तो पहले महिलाओं को अपनी सुरक्षा में बाहर निकाला, शामियाने के बाहर बम्बई पुलिस कमिश्नर एडवर्ड्स अपने दल-बल के साथ खड़े थे।

उसकी इच्छा जलसे में आने वालों पर अपना बल प्रयोग करने की थी। अतः जिन्ना ने अधिवेशन के अध्यक्ष 'हक' से कार्यवाही स्थगित करने का अनुरोध करना ही ठीक समझा और मामला स्थगित कर दिया।

उसके बाद बम्बई के शानदार ताजमहल होटल में मुस्लिम लीग का दोबारा जलसा शुरू किया गया। यह जलसा सन् 1916 ई० के पहले दिन हुआ था।

इन जलसे में भाग लेने की इजाजत केवल नियमित सदस्यों व अखबार वालों को ही थी।

लीग के अध्यक्ष हक ने पहले हुई अव्यवस्था पर संक्षिप्त टिप्पणी करते हुए सुबह दस बजे के बाद बैठक का आरम्भ किया और जिन्ना से बोलने के लिए कहा। जिन्ना का तालियों की गड़गड़ाहट के साथ स्वागत किया गया। चारों ओर तालियों का ही शोर था।

बम्बई मुस्लिम छात्र संघ के अध्यक्ष के रूप में जिन्ना युवकों के आदर्श तथा बम्बई के बेताज बादशाह बन चुके थे। अपने काले चमकीले बालों तथा किचनर जैसी ही भूरी मूँछों वाले जिन्ना दुबले-पतले और तेज थे। एंथनी ईडन जैसी पोशाक धारण करते और रोनाल्ड कोलमेंन जैसे लगने वाले वाले इस शख्स को ज्यादातर लड़कियाँ पहली ही नजर में अपने दिल में उतार लेती थीं।

इस प्रकार ज्यादातर पुरुष उसके प्रति सराहना या ईर्ष्या से भर उठते थे। ना ने अधिवेशन को कमिश्नर एडवर्डस के व्यवहार के बारे में जानकारी दी ार फिर पूरा हॉल 'शेम-शेम' से गूंज उठा था। उसके बाद जिन्ना ने एक प्रस्ताव रखा जो सर्वसम्मति से पास हो गया।

इस प्रस्ताव का उद्देश्य अन्य राजनीतिक ताकतों (कांग्रेस के नर्म व गर्म दल) के साथ सलाह करके सुधारों के लिए एक योजना तैयार करने के लिए एक विशेष कमेटी को गठित करना था। जिससे एकीकृत भारत के नाम पर एकल मंच से सुधारों की माँग की जा सके।

उस समय मुस्लिम लीग ने एक कमेटी गठित की जिसमें इकहत्तर लोग सम्मिलित थे। इस कमेटी में भारत के प्रत्येक प्रान्त के नेता थे।

इस कमेटी के अध्यक्ष जिन्ना के करीबी मित्र व मुवक्किल महमूदाबाद के राजा सर मुहम्मद अली मुहम्मद खान बहादुर थे। बम्बई से कमेटी के सदस्यों में आगा खान व जिन्ना भी शामिल थे।

पंजाब के सदस्यों का नेतृत्व मियां सर मुहम्मद शमी और मियां सर फजल-ए-हुसैन के हाथ में था। बंगाल के सदस्यों की कमान ए० के० फजलुल हक के पास थी।

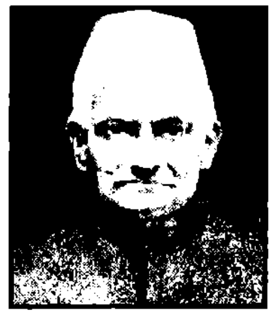
होटल ताज में होने वाली बैठक समाप्त होने से पहले अध्यक्ष ने कहा था—



*एकता के पक्षधर जिन्ना के साथ गाँधी प्रसन्न मुद्रा में*

"मुस्लिम लीग के लिए उनके दोस्त मिस्टर जिन्ना की भूमिका काफी जबरदस्त रही है। भारत का सम्पूर्ण मुस्लिम समुदाय उनका तहेदिल से अहसानमन्द है क्योंकि बिना उनकी कोशिशों के बम्बई में यह आयोजन नहीं हो सकता था... । मिस्टर जिन्ना, हम भारत के मुसलमान तहे दिल से आपका शुक्रिया अदा करते हैं।"

जिन्ना को मुस्लिम लीग की तरफ से मिलने वाली यह पहली सराहना थी।



*मोतीलाल नेहरू*

सन् 1916 ई० जिन्ना के लिए काफी भाग्यवान सिद्ध हुआ। जिन्ना ने बम्बई में मुस्लिम लीग को न केवल भंग होने से बचाया बल्कि लखनऊ में सर्वसम्मति से मुस्लिम लीग की बागडोर भी स्वयं ही सँभाल ली थी।

बम्बई की इस मुसलमान सीट से जिन्ना केन्द्रीय विधान परिषद के दूसरे कार्यालय के लिए चुने गए। कांग्रेस और लीग प्रस्तावों का मसविदा तैयार कर उन्हें लंदन में पेश करने के लिए परिषद के मंच का जिन्ना ने बेहतर उपयोग किया।

कांग्रेस द्वारा गठित कमेटी के शीर्ष पर मोतीलाल नेहरू विराजमान थे। मोतीलाल नेहरू ने अप्रैल माह में कमेटी के सदस्यों को लीग के नेताओं से प्रस्तावों पर चर्चा करने के लिए अपनी इलाहाबाद वाली कोठी पर आमंत्रित किया और उनका भव्य स्वागत भी किया।

होम रूल आन्दोलन के पीछे भी मोतीलाल की आर्थिक शक्ति कार्यरत थी। उन्होंने जिन्ना की तारीफ करते हुए कहा—

"वे अधिकांश मुसलमानों के विपरीत....हमारी तरह ही महान राष्ट्रवादी हैं, अपने समुदाय को हिन्दू-मुस्लिम एकता की राह दिखा रहे हैं।"

केन्द्रीय विधान सभा में ये नेता कुछ दिनों तक तो एक दूसरे का काफी समर्थन करते रहे, लेकिन सन् 1920 के उत्तरार्द्ध तक जिन्ना तथा मोतीलाल आपस में कड़े प्रतिद्वन्द्वी बन गए थे।

मोतीलाल नेहरू का हर प्रयास भारतीय स्वाधीनता आन्दोलन का स्वयं नेतृत्व करने का था जबकि जिन्ना किसी भी कीमत पर उनका सहायक बनकर काम करने को जरा भी राज़ी नहीं थे।

□



# लखनऊ करार व प्रेम विवाह

उन दिनों बम्बई में काफी गर्मी पड़ रही थी, इसलिए इलाहाबाद की बैठक समाप्त होते ही जिन्ना इस गर्मी से राहत पाने के लिए दार्जिलिंग चले गए।

वहाँ पहुँचकर उन्होंने अगले दो महीनों में काफी मनोरंजन किया। यह दो महीने उन्होंने अपने मुवक्किल तथा मित्र सर दिनशा मानोकजी पेटिर के ग्रीष्मकालीन आवास में छुट्टियों के रूप में बिताए थे। पेटिर परिवार बम्बई के सबसे धनी पारसी घरानों में से एक था।

जिस समय जिन्ना पेटिर आवास दार्जिलिंग में अपनी छुट्टियाँ गुजारने गए हुए थे तब उनके साथ रुत्ती नामक एक युवती थी। रुत्ती सर दिनशा प्रथम की इकलौती बेटी थी। बचपन से ही रुत्ती उर्फ रत्नाबाई किसी रत्न की तरह होनहार मनमोहक और प्रतिभा सम्पन्न थी और काफी खूबसूरत भी लगती थी।

जैसे-जैसे रुत्ती की उम्र बढ़ी वैसे-वैसे उनकी प्रतिभाओं, कुदरती खूबियों तथा सुन्दरता में भी चार चाँद लगने शुरू हो गए।

सन् 1916 ई० के दौरान बम्बई में होने वाली हर सभा में वह अपनी अविवाहित करोड़पति फिलोथ्रोपिस्ट बुआ कुमारी मामाबाई पेटिर के साथ जाती और पहली कतार में जाकर बैठती थी।

दार्जिलिंग में जिन्ना और रुत्ती साथ रहते हुए वे एक दूसरे के काफी नजदीक आते चले गए थे। वे एक दूसरे से प्रेम भी करने लगे थे।

यद्यपि वे दोनों अलग-अलग समुदायों में पैदा हुए थे, किन्तु उनका प्यार सभी बाधाओं को पार करने में सक्षम था। इतना ही नहीं, आश्चर्य की बात यह थी कि रुत्ती की उम्र उस समय 16 साल की थी और जिन्ना चालीस की उम्र पार कर चुके थे। उन दोनों में उम्र का इतना बड़ा फर्क था।

उस समय जिन्ना के हृदय में हिन्दू-मुस्लिम एकता का भाव उत्पन्न हो रहा था। सन् 1916 ई० के अक्तूबर माह में जिन्ना ने बम्बई प्रोविंशियल कांग्रेस की अध्यक्षता की। उन्होंने मुम्बई जैसी प्रान्तीय सरकार को निर्वाचित प्रतिनिधियों के प्रति जवाबदेह मुम्बई स्वायत्व प्रशासनिक इकाइयों में बदलने का प्रस्ताव रखा था। उनका कहना था—

"हिन्दुओं और मुसलमानों को, जहाँ कहीं भी वे अल्पसंख्यक हो, पूरा प्रतिनिधित्व मिलना चाहिए।"

उनका ध्यान जिला व नगर की ओर भी था उसके बारे में उनका कहना था—

"उन्हें तो पूरी तरह निर्वाचित होना चाहिए...कलेक्टरों तथा कमिश्नरों के जरिए होने वाला मौजूदा सरकारी नियन्त्रण खत्म होना चाहिए। इन्हें चेयरमेंन बोर्ड द्वारा चुना जाना चाहिए और अध्यक्ष की पदेन नियुक्ति नहीं होनी चाहिए। आबकारी

शुल्क का एक भाग और राजस्व से होने वाली आय का एक निश्चित हिस्सा इन बोर्डों को दिया जाना चाहिए, जिससे अपनी जिम्मेदारियाँ निभाने के लिए उनके पास पर्याप्त धन रहे।"


रुती जिन्ना

उन्होंने भारतीयों पर लागू तथा यूरोपियनों को छूट देने वाला शस्त्र अधिनियम खारिज करने की माँग की थी। जिन्ना ने प्रेस अधिनियम की वापसी, भारत रक्षा कानून जैसे मार्शल लॉ का प्रयोग कम करने और मुफ्त तथा अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा देने का कानून तुरन्त बनाने पर जोर दिया ताकि सभी शिक्षा ग्रहण कर सकें।

खास तौर पर मुम्बई में एनी बेसेन्ट को रोकने के लिए जब भारत रक्षा कानून का प्रयोग किया गया, उसकी जिन्ना ने निन्दा की, और कहा—

"जब भारतवासी सिपाही और निजी सैनिकों की भाँति युद्ध करने योग्य हैं, तो फिर अफसर क्यों नहीं बन सकते।"

बम्बई कांफ्रेंस के अन्तर्गत अपने संबोधन का उपसंहार जिन्ना ने हिन्दू-मुस्लिम एकता के सर्वप्रथम प्रश्न से किया था। यहाँ जिन्ना पूरे मुसलमान समुदाय के पैरोकार के रूप में बोल रहे थे। उनका तर्क था, इस एकता के लिए बहुसंख्यक हिन्दू समुदाय को त्याग करना होगा, किन्तु त्याग के अनुपात में उसे लाभ भी मिलेगा।

कलकत्ता (कोलकाता) में हुए एंपीरियल लेजिस्लेटिव कौंसिल के शरदाकालीन सत्र के आयोजन में भाग लेते हुए जिन्ना ने कलकत्ता कौंसिल के 18 अन्य निर्वाचित सदस्यों 'उन्नीस के ज्ञापन' पर हस्ताक्षर करने को तैयार कर लिया। वायसराय के सामने पेश करने के बाद यह ज्ञापन व्हॉइट हॉल भेज दिया गया।

यह ज्ञापन भारत को एक स्वतंत्र डोमीनियम (नव उपनिवेश) मानकर उसके लिए एक तरह के न्यूनतम संविधान की व्यवस्था करता था।

सन् 1916 ई० की सर्दियों में भारत तथा ब्रिटेन के इतिहास में एक दुर्लभ अवसर आया। यह मौका लाभदायक भी हो सकता था और हानिकारक भी। लेकिन तेजी से बदलते समय का फायदा उठाने के लिए कोई भी राज़ी नहीं था।

जिन्ना ने इस अवसर का भरपूर लाभ उठाया। उनके कानूनी दिमाग में एक योजना उत्पन्न होने लगी। इस योजना पर जिन्ना ने कांग्रेस अध्यक्ष ए० सी० मजूमदार को भी राजी कर लिया था। लखनऊ के केन्द्रीय भाग में विधान परिषदों के लिए मुसलमान सदस्यों की संख्या के एक निश्चित प्रतिशत की गारण्टी दी गई थी। इससे विधान परिषदों में अल्पसंख्यक समुदाय की आवाज उनकी आबादी

के मुकाबले में कहीं ज्यादा बुलन्द हो जाने वाली थी।

भविष्य में स्थापित होने वाले हिन्दू राज के तहत इस्लामी पहचान की सुरक्षा की गारण्टी लेने के लिए समझौते में सुझाया गया था—

"इस समुदाय को प्रभावित करने वाले किसी भी विधेयक पर, न ही उसकी किसी धारा पर, न ही किसी गैर सरकारी सदस्य द्वारा पेश किए गए ऐसे किसी भी प्रस्ताव पर, जिसके बारे में सम्बन्धित विधान परिषद में उस समुदाय के सदस्यों द्वारा निर्णय किया जाना हो, विचार नहीं किया जाएगा, अगर इम्पीरियल अथवा प्रान्तीय परिषद से सम्बन्धित समुदाय के तीन चौथाई सदस्य उनके विरोध में हैं।"

जिन्ना ने करार का मसविदा लिखते समय बड़ी सतर्कता से काम किया।

30 दिसम्बर सन् 1916 ई० में मुस्लिम लीग के अध्यक्ष के रूप में जिन्ना ने घोषणा की—

"इन्सान के मुश्तरका (साझा) मामलों में जो कुछ भी महान व प्रेरक है, जिसके लिए सभी युगों व संसार के सभी भागों में इंसानों के सबसे बढ़िया तथा बहादुराना



*लखनऊ पैक्ट के समय मुहम्मद अली जिन्ना अपने साथियों के साथ*

हिस्से मरते व जीते रहे हैं वे सब आज भारत की गर्त से बाहर निकल रहे हैं।"

जिन्ना ने अंग्रेजों के सतही, दोगले तथा हताशपूर्ण राजनीतिक सिद्धान्त वाक्यों, जिन्हें वे भारतीय देशभक्तों के सामने फेंकते थे, जो नौकरशाहाना किस्म के होते हैं; पूरी तरह नकार दिया। भारत के लोग खुद शासन करने के योग्य नहीं हैं अथवा लोकतान्त्रिक संस्थाएँ पूर्व की आबो-हवा में स्थिर नहीं रह सकती—इन बातों को जिन्ना ने बेबुनियादी बताया।

जिन्ना ने अपने गतिशील आशावाद के तहत यह भविष्यवाणी कर दी थी—

"हमारी संवैधानिक लड़ाई तो पहले से ही जीत ली गई है।"

जिन्ना को इस बात का पूरा यकीन था कि देश की वास्तविक जरूरतों पर

आधारित तथा समय व परिस्थितियों का पूरा ध्यान रख कर तैयार की गई स्वीकृत, भारत के लिए की जाने वाली यह माँग ठुकराना अत्यन्त असम्भव हो जाएगा।

युद्ध की समाप्ति पर भारतीय समस्या साहसी व उदार दृष्टिकोण से निबटानी होगी तथा भारत को ब्रिटिश साम्राज्य के एक स्वाधीन जिम्मेदार तथा समकक्ष सदस्य के रूप में मान्यता का जन्मसिद्ध अधिकार देना ही होगा।

जिन्ना की इन बातों को सुनकर लक्ष्य प्राप्त करना सहज, सरल व तर्कसंगत लग रहा था। कांग्रेस लीग योजना अर्थात् लखनऊ करार ने स्वाधीन भारत के संविधान का ब्लू प्रिन्ट प्रस्तुत कर दिया था।

जिन्ना की ओर से इस रूपरेखा को विधायी हकीकत में बदलने के लिए एक-एक कदम तय हो चुका था। जिन्ना का दिमाग अपने अधिकतर समकालीनों से कुछ अधिक ही तेज चल रहा था।

राजनीतिक दुर्भाग्य कि लखनऊ करार पर कभी अमल नहीं किया जा सका।

लीग के जलसे से कुछ दिन पहले लखनऊ के ऐतिहासिक कैसर बाग में ही कांग्रेस का अधिवेशन हुआ। इसमें लगभग ढाई हजार प्रतिनिधि शामिल हुए थे इसके अध्यक्ष मजूमदार ने तिलक व बुजुर्ग नेताओं से भरी उनकी 'नई पार्टी' की मातृदल में वापसी का स्वागत करते हुए कहा था—

"शान्ति के वाहकों को ईश्वर का आशीर्वाद प्राप्त होना चाहिए।"

उसके बाद हिन्दू-मुस्लिम सवाल पर चर्चा करते हुए उन्होंने घोषणा की—

"यह मामला हल हो चुका है, तथा हिन्दुओं और मुसलमानों ने मिल-जुलकर स्वशासन की माँग करने का फैसला कर लिया है, अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी व मुस्लिम लीग के नुमाइंदों ने हाल ही में कलकत्ता के एक सम्मेलन में दो दिनों तक सोच-विचार करने के बाद एक आवाज में संकल्प लिया है कि भारत में प्रतिनिधि व मूलक सरकार के लिए संयुक्त माँग की जाए।"

इस बात को सुनकर तिलक ने टिप्पणी की।

"हम किसी भी तरह के लोगों के साथ एक उद्देश्य के लिए काम करने को राज़ी हैं, में तब भी अपना हाथ आगे बढ़ाने से नहीं हिचकूँगा, अगर नौकरशाही भी हमारे राष्ट्र के लिए कोई हितकारी योजना लेकर आती है।"

जिन्ना पूरी तरह कामयाब हो गए। उनके करार को दोनों पार्टियों ने स्वीकार किया।

## रुत्ति से विवाह की पेशकश

कुछ ऐसा ही करार जिन्ना ने निजी स्तर पर आजमाने का निर्णय कर लिया था। उन्होंने उसी दिन दिनशां पेटिर के सामने प्रश्न रखा—

"दो धर्मो के बीच में शादी के बारे में आपके क्या विचार हैं?"

रुत्ती के पिता दिनशां पेटिर ने जिन्ना की बात का असावधानी से उत्तर देते हुए कहा—

"इससे राष्ट्रीय एकता कायम करने में भारी सहायता मिलेगी, इससे धर्मों के मध्य आपसी मनमुटाव का हल भी निकलने की उम्मीद है।"

"फिर तो मुझे हार्दिक प्रसन्नता होगी—यदि आप अपनी पुत्री का विवाह मुझसे कर दें।"

जिन्ना की यह बात सुनकर सर दिनशां आश्चर्यचकित रह गए। उन्होंने सोचा भी नहीं था कि उनकी बात उन्हीं पर भारी पड़ेगी वह नाराज होकर बोले—

"जिन्ना यह कैसी बेहूदा बात करते हो? तुम्हारी ऐसा कहने की हिम्मत कैसे हुई।"

इस मुद्दे को लेकर जिन्ना ने काफी बहस की, मगर कोई फायदा नहीं हुआ। इस घटना के बाद जिन्ना व सर दिनशां के सम्बन्ध टूट गए। जबकि पूरी बम्बई जिन्ना व रुत्ती के प्रेम सम्बन्ध से वाकिफ हो गयी।

जब सर दिनशां को इस बात का पता चला तो उनके मस्तिष्क को एक तेज झटका लगा। वह किसी भी तरह इस शादी के लिए तैयार नहीं थे। रुत्ती पर पाबन्दी लगाने के साथ-साथ उन्होंने पारसी विवाह कनून का सहारा लेते हुए अदालत की शरण ली, ताकि रुत्ती व्यस्क होने पर जिन्ना से विवाह न कर सके।

लेकिन उनका मुकाबला बैरिस्टर जिन्ना से था। रुत्ती के अट्ठारह वर्ष की होने से कुछ माह बाद जिन्ना ने सर दिनशां की सभी सामाजिक व कानूनी बंदिशों को हटाकर रुत्ती से विवाह कर लिया।

शुक्रवार, 19 अप्रैल सन् 1918 ई० को जिन्ना ने बम्बई में मालाबार हिल की ऊँचाइयों पर माउंट प्लीसेंट रोड पर स्थित अपने घर साउथकोर्ट में रुत्ती से विवाह कर लिया। विवाह से तीन दिन पहले ही उन्होंने इस्लाम कुबूल कर लिया था। रुत्ती के किसी भी रिश्तेदार ने इस विवाह में भाग नहीं लिया था।


रुत्ती

इस घर से करीब एक मील दूरी पर ही पिता का घर था जिसे रुत्ती ने उसी दिन छोड़ दिया था, जिस दिन रुत्ती अट्ठारह साल की हुई। पिता की नज़रों में वह हमेशा के लिए मर चुकी थी—जब तक रुत्ती ने जिन्ना से सम्बन्ध विच्छेद न कर दिया वे यही समझते रहे। जिन्ना व रुत्ती का वैवाहिक सम्बन्ध दस साल तक चला; फिर आपस में मतभेद हो गया।

बिना किसी दिखावे के यह विवाह सम्पन्न हुआ था। इस विवाह में महमूदाबाद के राजा और जिन्ना के कुछ नजदीकी दोस्तों ने शिरकत की थी। जिन्ना ने अपना हनीमून रुत्ती के साथ नैनीताल में मौजूद महमूदाबाद के राजा के आवास पर मनाया था।

हनीमून के बाद दोनों मोटर कार द्वारा से दिल्ली पहुँच गए। जहाँ वे लालकिले के आगे पुरानी दिल्ली के दरवाजे के पार कुछ दूरी पर बने मेंडेस होटल में ठहरे थे। एक

जोड़े के तौर पर जिन्ना और रुत्ती का आकर्षण देखकर लोग हैरान रह जाते।

हमेंशा रुत्ती अपने बालों में ताजा फूल ही लगाती थी। दहकते सुर्ख, सुनहरे, हल्के नीले और गुलाबी रंग, झीने सिल्क की पोशाकें रुत्ती को पसन्द थी। उसके सिर पर हमेशा हीरों, माणिक तथा मूँगे जड़े बन्दने होते थे। चाँदी तथा संगमरमर के लम्बे फिल्टरों से दबी अंग्रेजी सिग्रेट रुत्ती को पसन्द थी।

रुत्ती इतनी खूबसूरत व आकर्षक थी कि उससे बात करने वाला मन्त्रमुग्ध हो जाता।

ऐसा बिल्कुल नहीं था कि रुत्ती ही खूबसूरत थी जिन्ना का व्यक्तित्व भी इस उम्र में कम आकर्षक नहीं था। कड़क मूछों तथा चमकदार आँखों वाले जिन्ना की पोशाक भी बकिंघम पैलेस के किसी लार्ड से कम शानदार नहीं लगती थी।

सन् 1918 ई० की बसन्त ऋतु में उल्लास तथा उमंग में भरे जिन्ना दम्पत्ति को देखकर ऐसा लगता था, गृहस्थियों में सबसे ज्यादा भाग्यवान जोड़ा इस संसार में दूसरा नहीं हो सकता।

लेकिन उनकी खुशियों को न जाने किसकी नज़र लग गई थी, उनकी खुशियाँ स्थाई नहीं रह सकीं। पूरे दस साल भी जिन्ना अपनी पत्नी के साथ गृहस्थ जीवन का लुत्फ न ले सके थे। उनकी पत्नी ने ही उनसे स्वयं सम्बन्ध विच्छेद कर लिया था।

□



# जिन्ना का ब्रिटिश विरोध

दिल्ली की कांफ्रेंस में जिन्ना ऐसे इन्सान से टकराए थे जिनका विरोध वह सारी ज़िन्दगी करते रहे।

वह व्यक्ति कोई और नहीं बल्कि महात्मा गाँधी थे। इस कांफ्रेंस में भाग लेने वाले गाँधीजी ने उस समय के विषय में कहा है—

"मैं निमन्त्रण स्वीकार करके दिल्ली गया। झूठी खुशामद करके या स्वाभिमान खत्म करना या फिर किसी को रिझाना मेरा स्वभाव नहीं था...। मुसलमानों के दुःख की चर्चा मुझे वायसराय से करनी थी।"

गाँधीजी के मुताबिक उनसे एक ऐसी कांफ्रेंस में भाग लेने से जुड़ी अपनी नैतिक आपत्तियाँ रखने का अनुरोध किया गया, जिसमे अली बंधु अपनी गिरफ्तारी के कारण भाग नहीं ले सकते थे; उन्होंने इसलिए दिल्ली पहुँचते ही उन्होंने लार्ड चेम्सफोर्ड को लिखा—

"सभा में शामिल होने से मुझे संकोच हो रहा है।"

वायसराय ने गाँधीजी को चर्चा के लिए बुलाया। गाँधीजी ने मिस्टर मेंकी के साथ लम्बी वार्ता की। परिणामस्वरूप गाँधीजी ने सभा में सम्मिलित होना स्वीकार भी कर लिया।

वायसराय का यह आग्रह मानकर गाँधीजी को आत्मिक सन्ताप हुआ, इसलिए उन्होंने अपनी बात को अत्यन्त संक्षेप में कहने का निर्णय कर लिया था। उसके बाद उन्होंने अपनी आत्मकथा में लिखा है—

"मुझे अपनी जिम्मेदारी का पूरा ख्याल है और उस जिम्मेदारी को समझते हुए में इस प्रस्ताव का पूरी तरह से समर्थन करता हूँ।"

गाँधीजी, जो अपने देशवासियों के लिए काम कर रहे थे अर्थात् युद्ध हेतु फौज में नवयुवकों का आह्वान, उनकी अंग्रेजों के प्रति वफादारी मानी गई, जबकि जिन्ना का रुख ब्रिटिश सरकार विरोधी था, लेकिन वह सफल नहीं हुए। जिन्ना ने गाँधीजी द्वारा समर्थित प्रस्ताव की जगह एक वैकल्पिक प्रस्ताव रखने का प्रयत्न किया था, लेकिन वायसराय ने नियम के विपरीत कहकर उसे खारिज कर दिया।

चेम्सफोर्ड को भेजे गए इस तार में जिन्ना ने जोश भरे अंदाज में कहा था—

"हम अपने नौजवानों से उन उसूलों के लिए युद्ध में कूदने के लिए नहीं कह सकते, जिनका पालन हमारे देश में किया ही नहीं जा रहा है। जिस बहादुरी और ताकत के साथ कोई स्वाधीन नस्ल अपनी तथा दूसरों की आज़ादी के लिए लड़ती है, उस तरह से एक अधीनस्थ नस्ल लड़ ही नहीं सकती। पराधीनता के स्थान पर साम्राज्य के भागीदार की हैसियत मिलने पर ही भारत की तरफ से साम्राज्य की सुरक्षा के लिए कुर्बानियों की आशा की जानी चाहिए। जब भारत को अहसास

हो जाएगा कि वह ब्रिटिश साम्राज्य के तहत स्वाधीन राष्ट्रों के राष्ट्रमंडल के लिए नहीं, बल्कि अपने लिए भी लड़ रहा है।

तब वह इंग्लैण्ड के लिए अन्तिम सांस तक लड़ेगा...। पहले दौर में कांग्रेस लीग योजना के तहत संविधान द्वारा निर्धारित निश्चित अवधि में उत्तरदायी शासन की स्थापना होनी चाहिए और उसी के साथ संसद में इस आशय का विधेयक भी लाया जाना चाहिए।"

अगर सन् 1918 ई० में जिन्ना ने दिल्ली में नेतृत्व का साथ दिया होता, तो साल भर बाद जिन्ना उस पर विश्वास कर लेते। इसी दौरान तिलक तथा एनी बीसेंट जैसी हस्तियाँ कन्धे से कन्धा मिलाकर जिन्ना के साथ चल रही थीं। बम्बई के गवर्नर लार्ड विलिंग्टन ने मोंटेग्यू को लिखे एक पत्र में इन तीनों के बारे में लिखा है—

"इनमें साम्राज्य के प्रति इस संकट की घड़ी में किसी भी तरह की कर्तव्य भावना नहीं है।"

कुछ महीने बाद चेम्सफोर्ड ने विदेश मन्त्री के दिमाग में जिन्ना तथा उनके विधान परिषद के कई राष्ट्रवादी साथियों के विरुद्ध विष भर दिया। वायसराय ने उन सबको लाइलाज बताते हुए कहा—

"यह सोचना बेकार है कि इन लोगों के साथ हम कुछ कर सकते हैं...इन लोगों में तल्खी की जड़ें इस कदर गहरी हैं कि उन्हें खत्म नहीं किया जा सकता। में इस काम में अपना वक्त बर्बाद नहीं करूँगा।"

10 जून सन् 1918 ई० को गवर्नर विलिंग्टन ने बम्बई के टाउनहाल में अपनी क्षेत्रीय युद्ध सभा आयोजित की जहाँ उन्होंने यह टिप्पणी की—

"कुछ महानुभावों के हार्दिक समर्थन की में कोई गारंटी नहीं ले सकता, इनमें से कुछ का तो जनता के बीच काफी प्रभाव है और उनमें से कुछ होमरूल लीग नामक राजनीतिक संगठन के सदस्य हैं, जिनकी गतिविधियाँ कुछ सालों से ऐसी ही हो रही हैं।"

इस बात को सुनकर तिलक ने कहा—"होम रूल के बिना होम की सुरक्षा नहीं की जा सकती।"

तिलक की यह बात सुनकर उन्हें युद्ध सभा छोड़ कर जाने का आदेश थमा दिया गया तब जिन्ना ने कहा—

"उन्हें तकलीफ ही नहीं, बल्कि बहुत तकलीफ है कि महामहिम 'होम पार्टी' की वफादारी तथा ईमानदारी पर शक कर रहे हैं। इसके लिए मुझे बहुत दुःख है लेकिन पूरे सम्मान के साथ इसके खिलाफ मेरा विरोध स्पष्ट दर्ज होना चाहिए। दूसरों की भांति वे लोग भी मातृभूमि तथा साम्राज्य की रक्षा करना चाहते हैं...।

मतभेद सिर्फ तरीकों का है, क्योंकि होम रूल पार्टी सरकारी तरीकों के खिलाफ है। वे तो केवल योजना में सुधार करने के लिए ही कुछ सुझाव दे रहे थे। सरकार की अपनी योजना है, जिसके मुताबिक वह सिपाहियों को भर्ती करना चाहते थे मगर यह जर्मन आफत से बचने के लिए काफी नहीं है। वे विशुद्ध भाड़े पर लड़ने

वाली फौज बनने के बजाय एक राष्ट्रीय फौज खड़ी करना चाहते हैं जिसे नागरिकों की सेना भी कहा जा सकता है।

में तो कहता हूँ कि अगर आप फौज में भर्ती का रास्ता साफ करने और तेज करने में हमारी मदद लेना चाहते हैं तो आपको शिक्षित वर्ग को यह एहसास दिलाना होगा कि वह साम्राज्य के नागरिक और सम्राट की समकक्ष प्रजा है। लेकिन सरकार यह नहीं करना चाहती। आप कहते हैं कि हम पर विश्वास करें हमें साम्राज्य में वास्तविक सहभागी बनाया जाएगा, पर कब? हमें सिर्फ बातें नहीं चाहिए। हम इस मसले पर विचार टालना नहीं चाहते। हम इस मसले पर फौरन कार्रवाई करना चाहते हैं।"

जिन्ना से विलिंग्टन का सदैव सार्वजनिक टकराव तो रहा ही था, इसके साथ ही सामाजिक कड़वाहट भी उनके सम्बन्धों में हमेंशा बरकरार रही। जिस समय जिन्ना अपनी नई नवेली दुल्हन के साथ हनीमून से वापस लौटे तो कुछ दिन बाद उन्हें बम्बई के गवर्नमेंन्ट हाऊस में रात्रिभोज पर आमंत्रित किया गया।

इस मौके पर उनकी पत्नी रुत्ती ने अपना सबसे ज्यादा महगा पारसी ईवनिंग गाउन पहना। यह देखकर लेडी विलिंग्टन ने अपने सेवक से कहा—

"कहीं ठण्ड न लग जाए....इसलिए श्रीमती जिन्ना को शॉल ओढ़ने के लिए ला दो।"

यह बात सुनते ही जिन्ना फौरन खड़े हो गए और उन्होंने लेडी विलिंग्टन से कहा—

"जब श्रीमती जिन्ना को सर्दी महसूस होगी तो वे खुद शॉल माँग लेंगी।"

उसी क्षण!

जिन्ना दम्पत्ति वहाँ से चले गए और विलिंग्टन के रहते कभी गवर्नमेंन्ट हाउस में कदम नहीं रखा।

क्षेत्रीय युद्ध सभा भंग हो जाने के एक सप्ताह बाद मुस्लिम लीग ने 16 जून सन् 1918 ई० को बम्बई में एक सामूहिक रैली के जरिए होम रूल दिवस मनाया।

इसके एक महीने पश्चात् जिन्ना से गाँधीजी ने पत्र लिखकर अनुरोध किया कि वे फौज में भर्ती के प्रश्न पर घोषणा करें। गाँधीजी ने लिखा—

"आप यह क्यों नहीं समझ पा रहे कि अगर होम रूल का प्रत्येक सदस्य फौज में भर्ती की प्रभावी एजेंसी बन जाए और साथ-साथ सम्बन्धित अधिकारों के लिए भी संघर्ष करता रहे, तो हम कांग्रेस लीग योजना मन्जूर कराने में सफल हो जाएँगे। पहले आप भर्ती का दफ्तर बन जाइए फिर बाकी बातें होंगी।"

जिन्ना गाँधीजी का पत्र पढ़कर सन्नाटे में आ गए। अगस्त माह में गाँधीजी ने भर्ती मुहिम पर अपने कदम बढ़ाना शुरू कर दिया था तब उन्हें किसानों के सवालों का जवाब देना मुश्किल हो गया उनका सवाल था—

"हमारे जैसे लोग अचानक फौज में भर्ती होने का साहस भला कैसे जुटा सकते हैं, हमारी रूह तो खून देखते ही फना हो जाती है। हमने कभी जिन्दगी में हथियारों को छुआ तक नहीं है।"

सितम्बर माह के अन्त तक गाँधीजी का स्वास्थ्य कुछ अधिक ही गिरता दिखाई दे रहा था और उन्हें भर्ती का कार्य बीच में ही रोकना पड़ा।



*लार्ड विलिंग्टन* *लार्ड मोंटेग्यू*

भारत के सवैधानिक सुधारों पर जुलाई माह सन् 1918 ई० में मोंटेग्यू की रिपोर्ट प्रकाशित हुई। उसमें प्रान्तों में कार्यपालिका के ऊपर विधायिका के आंशिक नियन्त्रण तथा भारत सरकार की कार्यपालिका पर विधायिका का प्रभाव बढ़ाने की सिफारिश की गई थी।

इसमें जहाँ तक मुमकिन हो स्थानीय निकायों पर सम्पूर्ण जन नियन्त्रण की सिफारिश भी सम्मिलित थी।

सबसे पहले जिन्ना ने आरम्भिक रिपोर्ट का अध्ययन किया। उसके बाद 23 जुलाई 1918 को प्रेस के लिए अपनी प्रतिक्रिया जारी की। इस अवसर पर जिन्ना ने खुद को एक बार फिर से मध्यमी लचीला, संविधान के मामले में निपुण वकील तथा बेहतरीन वार्ताकार साबित किया।

अगर भारत सरकार और उसके 'काले' रोलेट कानून के विश्वासघात ने मोटेग्यू के साथ सीधे विचार विमर्श करने की, जिन्ना के द्वारा किए जा रहे प्रयास नाकाम न किए गए होते, तो युद्ध के बाद के कई साल सुखद होते तथा उत्तरदायी सरकार द्वारा सत्ता के हस्तांतरण की पूरी प्रक्रिया पटरी से न उतरती।

एडविन मोंटेग्यू तथा जान मोर्ले ब्रिटेन के दो महान् लिबरल विदेश मंत्री थे, जिन्होंने यह प्रक्रिया अत्यन्त धैर्य के साथ शुरू की थी।

कांग्रेस तथा लीग जैसी संयुक्त कमेटी के जिन्ना सदस्य थे, उन्हें मोंटेग्यू के प्रस्तावों पर की जाने वाली दोनों प्रतिक्रियाओं में सामंजस्य बैठाना था। इनमें रिपोर्ट सशर्त स्वीकार करते हुए लखनऊ करार की पुनः पुष्टि की गई तथा सम्पूर्ण उत्तरदायी सरकार की तरफ तेजी से कदम बढ़ाने का अनुरोध किया गया था।

रिपोर्ट के आंकलन को लेकर कांग्रेस के नेताओं में काफी मतभेद था। सुरेन्द्रनाथ बनर्जी, चितरंजन दास का समर्थन करने के लिए तैयार थे। वे वास्तव में पाँच साल के भीतर उत्तरदायी सरकार चाहते थे। उनका अनुमान था कि डायर की अर्थात् दो स्वतन्त्र प्राधिकारों की सरकार नाकाम हो जाएगी।

दूसरी तरफ मोतीलाल नेहरू आगामी दो दशक तक प्रतीक्षा करने को तैयार थे। कांग्रेस तथा लीग को नियमित सालाना अधिवेशनों का आयोजन लखनऊ में दिसम्बर माह को होना था।

❑



# जिन्ना दम्पत्ति द्वारा विलिंग्टन विरोध

प्रथम विश्व युद्ध नवम्बर सन् 1918 ई० में समाप्त हो चुका था। उसके साथ ही बम्बई में विलिंग्टन का कार्यकाल भी समाप्त हो गया।

इस क्षण की जिन्ना दम्पत्ति को बेताबी से प्रतीक्षा थी। जब उन्हें पता चला कि विलिंग्टन के कुछ पारसी मित्र उनके सम्मान में टाउन हॉल में एक विदाई पार्टी देने वाले थे तो जिन्ना दम्पत्ति ने उस समारोह के खिलाफ जन-आन्दोलन छेड़ दिया।

जिन्ना का किसी ब्रिटिश अधिकारी के खिलाफ यह जोरदार प्रदर्शन माना गया।

11 दिसम्बर सन् 1918 को शाम पाँच बजे विलिंग्टन मेंमोरियल कमेटी अपनी बैठक करने वाली थी लेकिन जिन्ना के लगभग सौ अनुयायी युवक एक रात पहले



*लार्ड विलिंग्टन अपने सैनिकों के साथ*

ही टाउन हॉल की सीढ़ियों के पास जम गए। टाउन हाल सुबह दस बजे खुलता था। उस समय पुलिस हॉल की सीढ़ियों पर भीड़ जमा होने से रोकने में सफल रही। हॉल खुलने से कुछ देर पहले ही जिन्ना अन्दर जाने वाली लाइन में सबसे आगे अपने लिए पहले से खाली छोड़ी गई जगह पर आकर खड़े हो गए।

उन्होंने दौड़ते हुए सीढ़ियाँ पार कीं और अपने होमरूल के साथियों के साथ हॉल में सबसे आगे की कतार वाली सीट हासिल कर ली थी।

दोपहर के समय मिसेज जिन्ना वहाँ पहुँची। उनके हाथ में सैंडविच भरा एक टिफिन था। जिन्ना और उनके समर्थक सीट नहीं छोड़ सकते थे। इसीलिए उनके लिए मिसेज जिन्ना सैंडविच लाई थीं। क्योंकि अगर भोजन के चक्कर में सीट

खाली हो जाती तो विलिंग्टन के समर्थक अगली सीटों पर बैठ जाते।

टाउन हॉल, सभा शुरू होने से पहले ही भर चुका था। सभा सर जमशेद जी जीजाबाई की अध्यक्षता में की जा रही थी। इस प्रमुख पारसी ने बम्बई में अफीम के व्यापार में बहुत नाम और काफी दौलत भी कमाई थी। जैसे ही जमशेद बोलने के लिए खड़े हुए जिन्ना उनके साथी 'नो-नो' चिल्लाने लगे।

बीस मिनट तक यह हंगामा चला। उसी शोर में जमशेद जी ने विलिंग्टन के लिए सराहना प्रस्ताव पेश किया। उसके बाद पुलिस कमिश्नर ने जिन्ना दम्पत्ति व उनके साथियों को जबरदस्ती हॉल से बाहर निकाल दिया। यह जिन्ना की ज़िन्दगी की इस तरह की पहली और आखिरी घटना थी। लेकिन इस घटना से जिन्ना पूरी तरह से लोकप्रिय हो गए।

उसी दिन शाम के समय, जिन्ना ने अनेकों श्रोताओं को सम्बोधित करते हुए कहा—

"महानुभावों! आप बम्बई के नागरिक हैं, आपकी जीत ने आज जाहिर कर दिया है कि नौकरशाही तथा निरंकुशता की मिली-जुली शक्तियाँ भी आपको आतंकित नहीं कर सकती। 11 दिसम्बर का दिन बम्बई के इतिहास में लाल अक्षरों से दर्ज हो जाएगा, जाइए और लोकतन्त्र को जानने वाले आज खुशी मनाएँ।"

उसी दिन, रात के समय एक विशाल प्रदर्शन का आयोजन हुआ। जिसमें करीब पैंसठ हजार रुपये जमा किए गए। इस रकम का एक बड़ा भाग एक-एक रुपये के सिक्कों के रूप में था।

यह धन 'पीपुल्स जिन्ना मेंमोरियल हॉल' के निर्माण के लिए जमा किया गया था। यह हॉल 'मुहम्मद अली जिन्ना' के बहादुर तथा शानदार नेतृत्व में बम्बई के नागरिकों की ऐतिहासिक जीत का स्मारक है। यह हॉल वर्तमान में 'पी० जे० हॉल' के नाम से जाना जाता है।

☐



# जिन्ना का रौलेट एक्ट विरोध

भारतीयों को इस बात का पूरा विश्वास था कि युद्ध समाप्त होने पर भारत में शान्ति स्थापित हो जाएगी, किन्तु उम्मीद के खिलाफ अंग्रेजों की कठोर दमनकारी नीति व अशान्ति का लोगों को सामना करना पड़ा।

युद्ध के दौरान सन् 1915 ई० में भारत रक्षा अधिनियम के अन्तर्गत सभी नागरिक आज़ादियाँ और विधि सम्मत प्रक्रियाएँ प्रतिबन्धित कर दी गई थीं। बिना मुकदमा चलाए, बिना वारण्ट जारी किए और बिना कारण बताए किसी को गिरफ्तार, नज़रबन्द या देश से निकाला का आदेश दिया जा सकता था।

इस बात की भारत को पूरी आशा थी कि मित्र राष्ट्रों की जीत के बाद यह अत्याचारी कानून हटा दिया जाएगा, किन्तु ऐसा नहीं हुआ।

राजद्रोह से सम्बन्धित कमेटी के अध्यक्ष तथा सम्राट के पीठासीन न्यायाधीश सर सिडनी रौलेट ने एक रिपोर्ट जारी की। इस शैतानी रिपोर्ट में अपराध कानून (आपात अधिकार) अधिनियम को कम से कम छः महीने तक लागू रखने को कहा गया था। पूरा देश इस 'काला कानून' रौलेट एक्ट' की आग से सुलग उठा।

6 फरवरी सन् 1919 ई० को परिषद में यह विधेयक रखने पर जिन्ना ने चेतावनी देते हुए कहा—

"जिस बीमारी को क्रान्तिकारी अपराध कहा जाता है उसके उपचार के लिए यह सही औषधि नहीं है।"

लेकिन जिन्ना के शब्द, बहरे कानों से जैसे टकराकर रह गए थे। परिषद के 22 भारतीय सदस्यों द्वारा एक आवाज़ में विरोध किए जाने पर भी इस कानून को चेम्सफोर्स, रौलेट तथा अन्य अंग्रेज अधिकारी जबरन पारित करने पर तुले थे।



*लार्ड चेम्सफोर्ड*

इस काले कानून पर 34 सरकारी सदस्य अपनी स्वीकृति की मोहर लगाने को तत्पर थे। इस तरह सन् 1919, मार्च में परिषद ने इसे पारित कर दिया।

यह कानून लागू होते ही जिन्ना अपने मालाबार स्थित घर लौट आए और वहीं से चेम्सफोर्ड को उन्होंने पत्र भी लिखा था। जिसमें उन्होंने विधेयक को पारित करने व उसके ढंग के विरुद्ध अपना विरोध दर्ज कराते हुए विधानसभा से इस्तीफा दे दिया लेकिन इससे

चेम्सफोर्ड पर कोई असर नहीं पड़ा।

लंदन में मोटेग्यू का राजनीतिक प्रभाव काफी तेजी से घट रहा था। लेकिन उसके घटते प्रभाव का आकलन करने का जिन्ना के पास कोई साधन नहीं था, इसलिए उन्होंने लंदन जाने का निर्णय कर लिया। उन दिनों रुत्ती जिन्ना गर्भवती थी। राजनीतिक माहौल ने जिन्ना को निराश कर दिया था मगर पारिवारिक माहौल में जिन्ना काफी खुश थे और उज्जवल भविष्य की कामना कर रहे थे तथा योजना बना रहे थे।

मुस्लिम लोग ने सन् 1919 ई० में जिन्ना को प्रतिनिधि मंडल का नेता बनाकर ब्रिटिश लॉयड जार्ज से मिलने के लिए भेजा। जिससे आगामी पेरिस शान्ति सम्मेलन में कम से कम एक मुसलमान प्रतिनिधि का प्रावधान तो किया जा ही सके।

□



# गवर्नमेंट ऑफ इंडिया

मुस्लिम लीग की सबसे बड़ी ख्वाहिश यही थी कि ब्रिटिश प्रधानमंत्री के पास किसी मुस्लिम आदमी को ही भेजा जाए, जिससे वह इस्लाम हितों को सही ढंग से प्रस्तुत कर सके। अली बन्धु और दिल्ली के धर्म परायण आलिम मौलाना अबुल कलाम आज़ाद सहित विरोध आन्दोलन के दूसरे लोकप्रिय नेता बिना स्पष्ट आरोपों के उस समय भी नज़रबन्द चल रहे थे। इन हालातों में मुस्लिमों को इस्लाम की कहीं ज्यादा फिक्र लगी हुई थी, इसलिए जिन्ना को ही लंदन भेजा गया।

मई के महीने में जिन्ना दम्पत्ति लंदन पहुँचे। उन्होंने रीजेंट्स पार्क के पास एक फ्लैट किराए पर लिया। उनसे मिलने आने वालों में दीवान चमनलाल प्रमुख थे। 14-15 अगस्त सन् 1919 ई० की मध्यरात्रि में मिसेज जिन्ना ने एक बेटी को जन्म दिया जिसका नाम दीना रखा गया।

जिन्ना मुस्लिम लीग के जिस कार्य हेतु लंदन गए थे वे उसमें कामयाब न हो सके। जिन्ना ने प्रधानमंत्री लॉयड जार्ज के सामने मुसलमानों के पक्ष की जमकर पैरोकारी की, लेकिन उन्हें कोई आश्वासन नहीं मिला। वरसोई में भारतीय प्रतिनिधि के रूप में केवल मौंटेग्यू और महाराज बीकानेर ने भाग लिया।

इस सम्मेलन में ब्रिटेन तथा फ्रांस ने विवादित ऑटोमन साम्राज्य से निकले इराक, फिलिस्तीन, ट्रांस, जोर्डन, सीरिया तथा लेबनान जैसे देशों को औपचारिक संरक्षण के रूप में अपनी अधीनता में ले लिया। जिन्ना को पूरा विश्वास था कि उन्हें इस शान्ति सम्मेलन में जरूर आमन्त्रीत किया जाएगा।

वैसे भी वो लंदन तक तो आ ही चुके थे और साथ ही जिन्ना मुस्लिम लीग के प्रतिनिधि भी थे। लेकिन चेम्सफोर्ड, विलिंग्टन तथा अन्य प्रमुख भारत विशेषज्ञों द्वारा जिन्ना के विरुद्ध हाल ही में अविश्वास, घृणा तथा शक से भरी इतनी बातें की गई थीं कि उनके प्रति ब्रिटेन की मन्त्री-परिषद का व्यवहार ठण्डा ही बना रहा। ज्यादातर दरवाज़े जिन्ना के लिए बन्द हो गए।

बम्बई को नए गर्वनर लॉयड जॉर्ज ने जिन्ना के खिलाफ मोंटेग्यू के कान भरने में कोई कसर नहीं छोड़ी थी। जार्ज ने मौंटेग्यू को लिखा–

"जिन्ना जुबान के सफेद, पर दिल के काले हैं उनके साथ कोई समझौता नहीं हो सकता, क्योंकि अन्य सभी आन्दोलनकारियों में केवल वे ही हैं, जो कहते एक बात हैं पर फौरन दूसरे काम करते नज़र आते हैं।"

कुल मिलाकर जिन्ना की बुरी तरह हार हुई।

इधर भारत में अप्रैल से ही रौलेट एक्ट विरोधी जन प्रदर्शनों तथा जलियांवाला हत्याकाण्ड के विरुद्ध असहयोग तथा हिंसा की लहर दौड़ रही थी। दरअसल गाँधीजी ने काले कानूनों के खिलाफ राष्ट्रव्यापी हड़ताल की घोषणा कर दी थी।

इसी आन्दोलन के तहत गाँधीजी के दो निकट सहयोगियों को गिरफ्तार कर शहर से बदर कर दिया गया था। जिसके विरोध में एक जुलूस ब्रिटिश कमिश्नर के बंगले की तरफ रवाना हुआ। इस जुलूस पर फौजियों ने गोलियाँ चला दीं। उनकी गोलियों से कई लोग घायल हो गए। शान्ति से जुलूस निकाल रहे लोग भड़ककर बदला लेने पर आमादा हो गए।

सभी ब्रिटिश बैंक जला दिए गए। अमृतसर में अंग्रेज स्त्रियों व पुरुषों पर भी हमले हुए। सरकार की ओर से जवाबी कार्यवाही में जन-सभाओं पर पाबन्दी लगा दी गई।

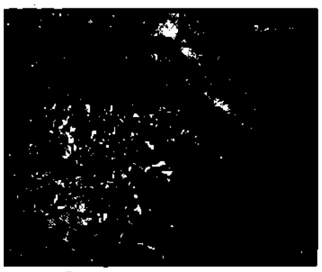
□



# जलियांवाला बाग हत्याकांड पर जिन्ना की प्रतिक्रिया

जलियांवाला बाग में 13 अप्रैल, 1919 ई० को सभा करने के लिए हजारों की भीड़ में लोग जमा हुए। यह जगह दीवारों से पूरी तरह घिरी हुई थी। यह जानकारी मिलते ही फौज के जनरल ने अपने फौजियों के साथ बिना किसी चेतावनी के शान्ति से सभा कर रहे लोगों पर गोलियाँ बरसा दीं। लोगों को वहाँ से भागने का अवसर नहीं मिल सका था। इस भीषण नरसंहार को चेम्सफोर्ड ने निर्णय सम्बन्धी 'त्रुटि' करार दिया।

सन् 1919 के मध्य में जिन्ना लंदन से भारत लौट आए थे। उन्होंने बाम्बे क्रॉनिकल को साक्षात्कार देते हुए जनता को सम्बोधित किया–



*जलियांवाला बाग हत्याकांड*

"भारत को अपने इस सर्वाधिक नाजुक पलों में दिमागी सन्तुलन कायम रखना होगा, बेहतर होगा कि दिसम्बर में होने वाले कांग्रेस अधिवेशन में हमारे नेता एक सुविचारित कार्यक्रम पेश करें और उसे जनता द्वारा स्वीकार किया जाए, अगर ऐसा न हो सका, तो हमारे उद्देश्य को गहरा धक्का पहुँचेगा।"

अमृतसर कांग्रेस करीब आ रही थी, इसलिए जब जिन्ना से सवाल किया गया कि क्या आपके पास जनता के लिए कोई सन्देश है तो उन्होंने जवाब दिया–

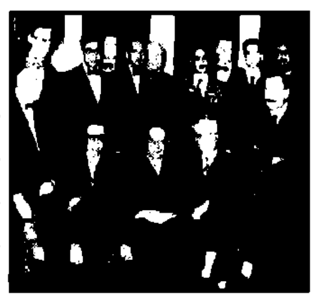
"कांग्रेस का रवैया सुधार विधेयक पर निर्भर करेगा, जो मेर ख्याल से दिसम्बर के मध्य से पहले ही पारित कर दिया जाएगा।"

जून माह की बात है, जिन्ना ने गाँधीजी को लंदन से एक पत्र लिखकर मोंटेग्यू के सुधार विधेयक के विषय में अपने विचारों की जानकारी दी थी।

उस समय यह विधेयक संसद में था। गाँधीजी ने पत्र के उत्तर में रौलेट एक्ट के खिलाफ सविनय अवज्ञा आन्दोलन करने के विषय में लिखा। जिन्ना और गाँधीजी के राजनीतिक तौर तरीकों में काफी फर्क था जिसकी वजह से उनके बीच खाई बढ़ती जा रही थी।

## जिन्ना-रुत्ति में दूरियाँ

बम्बई में जिन्ना की प्रैक्टिस काफी अच्छी चल रही थी। उनका अधिकतर समय वकालत में ही गुजरता था। बाकी समय राजनीति की नज़र हो जाता। जिसका परिणाम यह हुआ कि जिन्ना और उनकी पत्नी के बीच में तनाव व दूरियाँ बढ़ती नज़र आने लगी।



***1919 के एक्ट के समय***
विचार-विमर्श करते सदस्य

उसके बाद 23 दिसम्बर सन् 1919 में मोंटेग्यू

सुधारों को गवर्नमेंन्ट ऑफ इंडिया के रूप में पारित कर दिया गया। उसी दिन सम्राट जार्ज पंचम ने एक शाही उद्घोषणा के द्वारा सभी राजनीतिक कैदियों को रिहा कर दिया। हालांकि सम्राट की इच्छा थी कि जनता और सरकार के बीच कड़ुवाहट पैदा न हो, लेकिन नया कानून ऐसा करने में असफल रहा।

भारत के निर्वाचित प्रतिनिधियों को इस कानून के तहत प्रान्तीय उत्तरदायित्व जरूर दिया गया, किन्तु दूसरी ओर यह कानून अधिक महत्वपूर्ण विभागों को सरकारी हाथों में ही आरक्षित करने का प्रावधान करता था।

यह ब्रिटेन के दोहरे नियन्त्रण का सिद्धान्त था। केन्द्रीय विधान परिषद का आकार बढ़ाकर दो सदनों वाली मिनी सांसद में निर्वाचित प्रतिनिधियों के बहुमत वाले निचले सदन को विधान परिषद कहा गया। भारत-मन्त्री और उनके सहायक की तनख्वाह पर होने वाले खर्च का बोझ भारत के बजट से हटकर कांग्रेस और लीग की माँग के अनुसार संसद पर डाल दिया गया।

भारत में एक लोक सेवा आयोग की स्थापना का भी फैसला लिया गया। जिसके अनुसार 1923 ई० तक आई०सी०एस० की प्रतिष्ठित नौकरियों के लिए होने वाली भर्तियाँ दिल्ली तथा लंदन में एक साथ शुरू हुई।

इन सबके अतिरिक्त अन्त में इस कानून के तहत एक संविधान सम्मत जाँच का प्रावधान भी था। जिसके अनुसार ब्रिटिश सरकार में सरकार की कार्यप्रणाली, शिक्षा की प्रगति तथा प्रतिनिधित्व मूलक संस्थाओं के विकास का आकलन किया जाना था। जिससे यह पता चल सके कि आगामी दशक में उत्तरदायी सरकार का उसूल लागू होगा या न होगा।

अगर ये संवैधानिक रियायतें रौलेट एक्ट तथा जलियांवाला बाग की घटना से पहले कर दी गई होती इन्हें ब्रिटिश साम्राज्य की उदारता समझा जाता और पूरा देश उनका गर्मजोशी से स्वागत करता, लेकिन अब हालात दूसरे थे।

कांग्रेस और मुस्लिम लीग ने सन् 1919 में अमृतसर में अपने-अपने वार्षिक अधिवेशन किए। मुस्लिम लीग, हिन्दू मुस्लिम एकता को न केवल प्रस्तावित सुधारों की, बल्कि भारत के भीतर तथा विदेश में भारतवासियों द्वारा किए गए सभी प्रयासों की कामयाबी के रहस्य के रूप में देख रही थी। इस अधिवेशन के अन्तर्गत जिन्ना को अगले साल के लिए अध्यक्ष चुना गया।

सितम्बर माह में जिन्ना ने लीग की एक बैठक कलकत्ता में बुलाई, वहीं कांग्रेस भी अपना आपातकालीन सत्र कर रही थी। दोनों पार्टियाँ अपनी-अपनी राजनीतिक मुद्रा में रेडिकल परिवर्तन करने के बारे में विचार-विमर्श करना चाहती थीं।

इसकी आवश्यकता जलियांवाला बाग हत्याकांड व ब्रिटेन के निर्मम रवैये तथा इसके बाद पूरे पंजाब में हुई निहायत आपत्तिजनक घटनाओं की प्रकाशित रिपोर्ट के कारण ही उत्पन्न हुई थी।

□



# जिन्ना पक्ष की जीत

नई दिल्ली में सन् 1924 ई० 31 दिसम्बर को ब्रिटिश-भारत की नवनिर्वाचित राष्ट्रीय परिषद के 23 निर्दलीय सदस्यों को विचार विमर्श के लिए आमन्त्रित किया गया। जिन्ना ने जब अपने बुनियादी सुधारों को पेश किया तो उनके सभी प्रतिष्ठित साथी उनका साथ देने और योजना पर काम करने के लिए राजी हो गए। इस प्रकार सदन के भीतर जिन्ना की हैसियत इतनी अधिक हो गई कि मोतीलाल नेहरू और चितरंजन दास के पास गठजोड़ की पेशकश की जा सके।

42 सीटों पर स्वराज्य पार्टी जीत गई थी और उस गुट में अनेक प्रकार के सदस्य थे। जिन्ना का निर्दलीय गुट इनके साथ मिलकर किसी भी सवाल पर सरकार द्वारा नियुक्त 63 सदस्यों का इरादा नाकाम कर सकता था। इस तरह सदन के अन्दर रातों-रात एक नई राष्ट्रवादी पार्टी पैदा हो चुकी थी।



*लार्ड रीडिंग सन् 1924*

इस घटना से रीडिंग को हैरानी के साथ-साथ निराशा भी हुई थी। निर्वाचित सदस्य अगर अलग-अलग बने रहते तो उनसे सरकारी पक्ष को कोई भी खतरा तथा राजनीतिक चुनौती का अंदेशा नहीं था, लेकिन जिन्ना की राजनीतिक कारीगरी की वजह से परिषद में भारतीय सदस्यों का शक्तिशाली गुट उभरकर आया जो भारत के लिए स्वतन्त्र उपनिवेश का दर्जा और पूरी तरह उत्तरदायी प्रान्तीय शासन के लक्ष्यों को जल्दी से जल्दी हासिल कर लेना चाहता था।

परिषद में जिन्ना ने जो रणनीति बनाई थी वह फरवरी सन् 1924 ई० में फायदेमंद सिद्ध हुई। उस समय सुधारों का एक प्रस्ताव पेश किया गया जिसमें भारत में पूरी तरह उत्तरदायी शासन स्थापित करने के लिए गवर्नमेंन्ट ऑफ इंडिया एक्ट में संशोधन किया जा सके। इसलिए इस प्रस्ताव में महत्वपूर्ण अल्पसंख्यक समुदायों के अधिकारों तथा हितों का पूरा ध्यान रखते हुए गोलमेज़ सम्मेलन बिना देर किए बुलाने की सिफारिश की गयी।

लार्ड रीडिंग ने इस प्रस्ताव के पास हो जाने पर सुधारों की सम्भावनाओं की जांच करने वाली एक कमेटी गठित की, जिसके सभापति गृह सदस्य सर एलेक्जेण्डर मुड्डीमान बनाए गए। गठित कमेटी के चार भारतीय सदस्यों में जिन्ना भी सम्मिलित थे।

इनके नाम इस प्रकार हैं—

1. नेशनल लिबरल फेडरेशन के अध्यक्ष मद्रास के सर पी०सी० शिवस्वामी अय्यर,

2. पूना के शिक्षाशास्त्री डॉक्टर आर० पी० परांजेय।

3. भारत सरकार के विधि सदस्य पंजाब के सर मुहम्मद शफी।

4. इलाहाबाद के बैरिस्टर सर तेजबहादुर सप्रु।

इस कमेटी का नाम जिन्ना कमेटी पड़ गया था। जिन्ना ने साल के अन्त तक अल्पसंख्यक सम्बन्धी राष्ट्रीय माँग रिपोर्ट का मसविदा तैयार किया, मगर तब तक ब्रिटिश सरकार सदन के भीतर निर्वाचित, एकजुट बहुमत की बढ़ती माँग के प्रभाव से इतनी ज्यादा डर चुकी थी कि वायसराय ने अपने वोटों के प्रयास से जाँच कमेटी की कई सिफारिशों पर बहस होने ही नहीं दी थी।

इस प्रकार जिन्ना की कई सिफारिशों का गला घोंटा जा चुका था।

सन् 1924 ई० के फरवरी माह में जिन्ना ने एक ऐसा अहम प्रस्ताव पेश किया जिसका भारत की आर्थिक स्वाधीनता के लिए केन्द्रीय महत्व था। इस प्रस्ताव के द्वारा जिन्ना भारत सरकार को भण्डारण के लिए भारी मात्रा में माल खरीदने के लिए भारत में रुपया आधारित निविदाओं की प्रक्रिया चलाने की इजाजत दिलाना चाहते थे, जिससे वह लंदन में स्टर्लिंग आधारित निविदाओं के जरिए से होने वाली खरीद के भरोसे पर न रहें।

इस प्रस्ताव पर जिन्ना ने कहा—"क्योंकि यह एक खुश्क किस्म का मसला है, इसलिए हो सकता है कि जब माननीय सदस्य इस मसले को समझे, तो...उन्हें लगेगा कि इसका भारत पर कितना पड़ा प्रभाव पड़ने वाला है।"

इसके बाद जिन्ना ने विगत पच्चीस सालों में अंग्रेजों द्वारा की गई खरीदों के बारे में समीक्षा कर साबित कर दिया कि इससे भारत के आर्थिक विकास को कितनी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा है। अन्त में जिन्ना ने कहा—

"ब्रिटिश कारखानों के मालिकों को इससे काफी लाभ होता है, अवसर पर मौजूद रहने से सारी सूचनाएँ उन्हें सबसे पहले मिल जाती हैं, साथ ही पूरी प्रक्रिया इंग्लैंड की ब्रिटिश फर्मों द्वारा डाले गए टेंडरों तक सीमित हो जाती हैं।"

जिन्ना ने दलील दी—"भारत में इस प्रकार खरीद-फरोख्त युद्ध की जरूरतों के लिए होती हैं।"

जिन्ना का यह प्रस्ताव पास हो गया। जिन्ना ने सदैव व्यक्तिगत अधिकारों और सबके लिए समान अधिकार के मुद्दे उठाए थे। भारत से लौटाए जा चुके बांबे क्रॉनिकल के सम्पादक बी० जी० हॉर्नीमेंन की वापसी का पक्ष लेते हुए उन्होंने कहा—

"सर में संविधान सम्मत कानून का गहनता से अध्ययन करके और दावे के साथ कहता हूँ कि किसी भी संविधान में कानून के तहत इन्सान की आजादी का मूल्य सबसे ज्यादा होता है और उससे इस प्रकार नहीं छीननी चाहिएं। अगर आपकी नज़र में कोई बात है तो, अगर मिस्टर हॉर्नीमेंन ने कोई अपराध किया है तो आप उन्हें ट्रिब्युनल के समक्ष पेश कीजिए।

यह बात में तहेदिल से कहता हूँ क्योंकि मेर विचार से किसी भी व्यक्ति का

प्रत्यार्पण नहीं किया जाना चाहिए, खासकर ऐसे झूठे आरोपों के आधार पर तो बिल्कुल नहीं, जो मेरी जानकारी के हिसाब से एकदम आधारहीन हैं।"

सितम्बर महीने में एक मामले पर बहस के दौरान जिन्ना ने शिमला में कहा—

"किसी भी व्यक्ति की आज़ादी या सम्पत्ति बिना न्यायिक सुनवाई के छुई भी नहीं जानी चाहिए।"

उसी दिन अन्य विधेयक पर बोलते हुए जिन्ना ने गृहमन्त्री के प्रस्ताव पर आपत्ति जताई—

"मैं यहाँ सरकार पर अविश्वास करने वाले व्यक्ति की तरह नहीं बोल रहा हूँ, बल्कि में यहां लोगों की नुमाइन्दगी कर रहा हूँ, सरकार को मनमानी करने के बजाए लोगों के हितों का ख्याल रखते हुए अपने सभी कदम उठाने चाहिए।"

☐



# रुत्ती का दुःख

अपने पति जिन्ना का उदासीन व्यवहार रुत्ती के लिए अब असहनीय हो चुका था। ऐसे कठिन समय में जिन्ना के सहयोगी, कांजी द्वारकादास ने रुत्ती को अपनी मित्रता का सहारा दिया। जितना समय रुत्ती जिन्ना के साथ बिताती, उतना ही समय कांजी के साथ भी गुजारती थी।

गुजरते समय के साथ दोनों के बीच होने वाली वार्ता खुली और अन्तरंग होती जा रही थी, मन की शान्ति के लिए रुत्ती अध्यात्म में विश्वास करने लगी थी। अध्यात्म कि क्रियाओं, चीजों को मन्त्राभिषिक्त करने और उनके जरिए विचारों का आदान प्रदान करने में कांजी रुत्ती के पथ प्रदर्शक बन चुके थे।

इस बारे में कांजी ने लिखा है

"अपार्थिव संसार से सम्पर्क करने में रुत्ती की गहरी दिलचस्पी थी। अपनी आस्था व विश्वास की पुष्टि करने के लिए वे कठिन और खतरनाक प्रयोग तक कर बैठती थी। वे चाहती थीं कि उन्हें इस सब की स्पष्ट जानकारी मिले।"

नवम्बर माह सन् 1924 ई० में रुत्ती ने कांजी को पत्र लिखा, जिसमें उन्होंने अपनी रुचि आत्माओं के साथ सम्पर्क करने में बताई थी। कांजी से आग्रह किया था कि वह आत्माओं में दिलचस्पी रखने वाले किसी गुट में उनको शामिल करा दें। इसके एक महीने बाद रुत्ती ने कांजी को फिर से एक खत लिखा और उसमें कहा था—

"में चाहती हूँ कि कुछ अनुभवी लोगों के द्वारा किए जाने वाले अध्यात्म में भाग लूँ, इस मामले में मेरा विश्वास इतना गहरा हो चुका है कि इसका व्यक्तिगत अनुभव किए बिना मेरा काम नहीं चल सकता। मुझसे आकर जल्दी मिलो, ताकि हम पिछली हुई बातों को आगे बढ़ा सकें।"

अप्रैल माह में कांजी को रुत्ती का एक और पत्र मिला जिसमें लिखा था—

" माई डियर कांजी, सपनों में होने वाली जिन यात्राओं की तुमने चर्चा की थी वह में जानती हूँ, लेकिन मुझे सारे सपने जागते हुए ही आते हैं। तुमने पत्र में जिस अनुभव की चर्चा की है, में भी वही अनुभव करना चाहती हूँ, मगर मुझे तो बेहोशी जैसी नींद आती है। पाँच-छः घंटे तक तन-मन बेचैन रहता है। जिस दौरान में सोती हूँ, मुझे सपने नहीं आते। में बहुत बेचैन हूँ और चाहती हूँ कोई दिमागी ताकत का धनी व्यक्ति मेरी मदद करे।"

रुत्ती चाहती थी, जिन्ना भी इन बातों में दिलचस्पी ले, इस विषय में रुत्ती ने कांजी को लिखा—

"लगता है 'जे' को में इस तरफ आकर्षित करने में सफल रही हूँ। मैंने उन्हें दि स्पिरिट ऑफ आयरिन पुस्तक पढ़ने के लिए राजी कर लिया। 'जे' को भी

मानना पड़ा कि यह कितनी असाधारण और अकाट्य है। इस घटना में एक कत्ल की घटना का पता लगाया जाता है। यह खाना पकाने वाली एक गरीब लड़की की कहानी है, जिसे लंदन बोस्कोम्ब तक फँसाया जाता है और फिर बाद में उस लड़की का कत्ल कर दिया गया।

वासना के वशीभूत किए गए इस जुर्म का ब्यौरा भयावह है, मुजरिम चालाक है, जिससे पुलिस चक्कर खा जाती है। अगर ऐसा न होता तो पुलिस वाले अध्यात्म की शरण में नहीं जाते। अन्त में उन्हें एक जरूरी सुराग मिल ही गया। हत्यारे की बदकिस्मती से वह ऐसा सबूत था कि उसे फाँसी पर लटकना ही पड़ा। 'जे' को इस पूरे केस में एक भी कमी नज़र नहीं आई।"

जिन्ना का पूरा समय वक़ालत में चला जाता था। रुत्ती ने 12 अप्रैल सन् 1925 ई० को फिर से कांजी को एक पत्र लिखा—

"लगता नहीं हम लोग कश्मीर जा पाएँगे, क्योंकि 'जे' बावला वाले मुकदमें में लगे हुए हैं।"

कांजी रुत्ती का मन बहलाने के लिए किताबों का ढेर लगाए रखते थे। सन् 1925 ई० के दौरान काजी रुत्ती से हफ्ते में तीन-चार बार नियमित रूप से मिलते थे। उन दिनों जिन्ना की बेटी दीना छः वर्ष की हो चुकी थी और बड़ी प्यारी लगती थी।

काँजी, चाहते थे कि दीना मद्रास के स्कूल में दाखिला ले ले। जहाँ एनी बेसेंट की थियोसोफिकल सोसाइटी का मुख्यालय था। मगर जिन्ना इसके खिलाफ थे। उन्हें डर था कि कहीं दीना मद्रास जाकर अपनी बिरादरी से अलग न हो जाए।

जून माह सन् 1925 में रुत्ती बीमार पड़ गई। कुछ स्वस्थ हो जाने पर जुलाई माह में रुत्ती ने दिसम्बर में थियोसोफिकल सोसाइटी के जुबली कन्वेंशन में कांजी के साथ मद्रास जाने का जिन्ना से अनुरोध किया। उसी कन्वेंशन में रुत्ती को एनी बेसेंट के हाथों थियोसोफिस्ट की दीक्षा मिल जानी थी।

लेकिन अपनी पालतू बिल्ली की बीमारी की वजह से रुत्ती एक सप्ताह पश्चात रवाना हुई। उस साल के खत्म होने से पूर्व रुत्ती की ऐनी बेसेन्ट से अड्यार में मुलाकात हुई। उस वृद्ध महिला ने फौरन रुत्ती के दुःख को परख लिया।

जब काँजी ने उसके कथन पर आश्चर्य प्रकट किया तो ऐनी बेसेंट ने उन्हें डांटते हुए कहा—

"तुम्हें इनकी आँखों में दुःख नजर नहीं आता? ज़रा देखो तो इन्हें।"

हकीकत में रुत्ती के दिल का दुःख उसके चेहरे से साफ जाहिर हो रहा था।

भारत में वायसराय रीडिंग़ का यह अन्तिम वर्ष था। रीडिंग परिषद में जिन्ना की भूमिका देखकर काफी प्रभावित हुए। इसी आधार पर उन्होंने दिसम्बर में जिन्ना को यह पेशकश की थी—

"अगर जिन्ना स्वीकार करने के लिए तैयार हो जाएँ तो में नाइटहुड के सम्मान के लिए उनके नाम की सिफारिश कर सकता हूँ।"

जिन्ना का जवाब था—"में सिर्फ मिस्टर जिन्ना की तरह मरना पसन्द करूँगा।"

और जब रुत्ती से पूछा गया कि 'लेडी जिन्ना' का सम्बोधन क्या उन्हें पसन्द आएगा, तो उन्होंने सख्ती से जवाब दिया—

"अगर मेर पति ने नाइटहुड स्वीकार कर लिया तो में उनसे अलग हो जाऊँगी।"

जिन्ना की चेतना में इस्लाम की प्रमुखता बढ़ती जा रही थी। इसी के साथ निजी जीवन की कुछ खाइयाँ भी थीं। जिन्ना पचास साल के हो चुके थे और रुत्ती को अब भी बहुत प्यार करते थे। लेकिन उनके पास इतना समय ही नहीं था कि वह रुत्ती के सामने अपने प्रेम को प्रकट कर सकें।

सन् 1926 ई० में जिन्ना ने एक योजना बनाई और रुत्ती को अपने साथ विदेश दौरे पर ले गए। इस दौरे में जिन्ना दम्पत्ति ने लंदन, पेरिस, कनाडा और संयुक्त राज्य अमेरिका का भ्रमण किया।

सन् 1925 ई० में जिन्ना विधानसभा की ऐडहर्स्ट कमेटी के सदस्य बनें। जिन्ना तीन भारतीय उपसमिति सदस्यों में से एक थे, उन्हें विदेशों के सैन्य कॉलेजों और संस्थानों का निरीक्षण करने के लिए चुना गया था। जिन्ना इस विदेशी दौरे पर रुत्ती को भी साथ ले गए थे। रुत्ती इस सफर से प्रसन्न नहीं थी। उन्होंने दौरे पर जाने से पहले कांजी को पत्र लिखा—

"काँजी, में कुछ महीनों के लिए यूरोप और यू० एस० ए० जा रही हूँ। मेरी रक्षा करने और मेरी मदद करने के लिए तुम मेर पास नहीं होंगे। इसलिए कृपा करके किसी न किसी चीज को मन्त्राभिषिक्त कर दो, जिसके द्वारा मैं तुम्हारे सम्पर्क में रह सकूँ।"

रुत्ती जेड नामक कीमती पत्थर का एक खूबसूरत जड़ाऊ पिन पहनती थी, कांजी ने उसे ही मंत्राभिषिक्त कर दिया था। यह यात्रा जिन्ना दम्पत्ति के लिए आखिरी यात्रा थी। विदेश से वापस लौटने पर रुत्ती ने कांजी को बताया कि जिन्ना को टोने-टोटके और ताबीज-गण्डों पर यकीन नहीं है वह इन्हें नहीं मानते थे।

भारत वापस आ जाने के बाद रुत्ती का स्वास्थ्य दिन प्रतिदिन बिगड़ता ही जा रहा था। उसका ज्यादातर समय पालतू बिल्ली और कुत्तों की देखभाल में ही गुज़रता था। उनकी पुत्री दीना पूरा दिन स्कूल में रहती थी और अपने दोस्तों के साथ मौज मस्ती करती। उन्हीं दिनों जिन्ना की तबियत भी खराब रहने लगी।

उसके बाद सन् 1928 ई० में जिन्ना और रुत्ती के जीवन में एक ऐसी दरार पड़ी कि दोनों अलग हो गए। रुत्ती ने बम्बई के बेहतरीन होटल ताजमहल में एक सुइट महीने के हिसाब से किराए पर ले लिया। उसके बाद वे कभी एक छत के नीचे नहीं रहे मगर जिन्ना को रुत्ती की पूरी खोज खबर थी।

इतना सब कुछ हो जाने के बावजूद भी न जाने क्यों जिन्ना रुत्ती को खुश रखने का प्रयास नहीं करते थे। इसलिए दोनों के बीच पड़ी दरार दिन प्रतिदिन एक गहरी खाई बनती चली गई।

उसके बाद 10 अप्रैल सन् 1928 ई० को ही अपनी माँ के साथ रुत्ती पी० एण्ड ओ० पर सवार होकर पेरिस चली गई। जिन्ना भी एक महीने बाद एस० एस० राजपूताना द्वारा भारत से चल दिए।

जिस दौरान जिन्ना आयरलैंड में मौजूद थे, उन्हें रुत्ती के बारे में आपात सूचना मिली। यह सूचना उनके सहयोगी चमनलाल ने भेजी थी, जो पेरिस के दौरे पर थे। सूचना के मुताबिक रुत्ती उस समय 106 डिग्री बुखार में बड़बड़ा रही थी।

इस सूचना के मिलते ही जिन्ना परेशान हो गए और अगले ही दिन पेरिस जा पहुँचे। वहाँ पहुँचकर उन्होंने जार्ज फिफ्थ नामक होटल में अपना सामान रखा और वहाँ से तुरन्त रुत्ती की माँ लेडी पोर्टर से बात की। वो अभी बात ही कर रहे थे कि तभी चमनलाल वहाँ जिन्ना के पास पहुँच गए। उन्होंने जिन्ना से कहा–

"मैं अभी रुत्ती को अस्पताल में देखकर आ रहा हूँ। वहाँ वह मौत का इंतज़ार कर रही है।"

चमनलाल ने उस समय के बारे में लिखा है–

"वे पल दो पल तक हतप्रभ बने हुए खुद को सँभालते रहे और फिर मुझसे क्लीनिक पर टेलीफोन करने को कहा। उस बात की पुष्टि होते ही उन्होंने अपनी कुर्सी के हत्थे पर हाथ पटकते हुए कहा–

"चलो जल्दी चलो, हमें उसे बचाना है।"

"मैं उन्हें क्लीनिक पर छोड़कर चला गया, करीब तीन घंटे तक मैं पास के एक कैफे में उनका इन्तज़ार करता रहा, जब वे लौटे तो उनके चेहरे पर जरा भी चिन्ता नहीं थी, उन्होंने रुत्ती के इलाज का प्रबन्ध एक नए क्लीनिक तथा एक डॉक्टरी सलाहकार के सुपुर्द कर दिया था। सब कुछ ठीक होने जा रहा था, मगर अफसोस श्रीमती जिन्ना की तबियत सँभल तो गई मगर वे अपने पति के साथ नहीं रुकीं और उनसे पहले ही बम्बई लौट गईं।"



*जिन्ना अपनी बहन फातिमा व बेटी दीना के साथ*

उसके बाद जिन्ना भी जनवरी के बीच में बम्बई लौट आए। तब तक रुत्ती ने

ताज होटल में एकदम बिस्तर पकड़ लिया था। वे कभी भी अपने कमरे से बाहर नहीं निकलती थीं और निकली भी तो केवल कांजी के साथ, कुछ दूर तक टहलने के लिए। जिन्ना रुत्ती से मिलने वहाँ चले जाते थे।

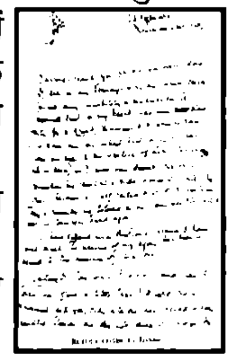
शायद तब तक उन्हें इस बात का एहसास हो चुका था कि रुत्ती अब कुछ दिनों की मेंहमान है वह अब नहीं बचेगी।

जिस समय रुत्ती बीमार थी, कांजी ही उसकी देखभाल किया करते थे।

फरवरी माह की शुरुआत में विधानसभा के बजट अधिवेशन के शुरू तक जिन्ना हर शाम वहाँ जाते और दोनों से पुराने वक्त की बातें करते। यह देखकर कांजी को भ्रम हुआ कि शायद दोनों एक दूसरे के करीब आ रहे हैं। लेकिन यह सिर्फ उनकी गलतफहमी थी, जो वे सोचते थे ऐसा नहीं था।

18 जनवरी सन् 1929 ई० में कांजी जब रुत्ती से मिले तो उसने कहा–

"मेरी बिल्लियों की देखभाल तुम्हीं करना और उन्हें किसी को मत देना।"



*रुत्ती जिन्ना द्वारा मुहम्मद अली जिन्ना को लिखा गया पत्र*

उस समय रुत्ती इतनी कमज़ोर हो चुकी थी कि इसके अलावा कुछ और नहीं कह सकी। दो दिन बाद 29 साल की उम्र में रुत्ती की मृत्यु हो गई।

चमनलाल से जिन्ना की नई दिल्ली स्थित वेस्टर्न कोर्ट अपार्टमेंट में बातचीत चल रही थी। तभी उनके पास दिल्ली से एक ट्रंककॉल आई। उन्होंने फोन पर बात करते हुए कहा कि वे रात को चल पड़ेंगे। बातचीत खत्म होने पर उन्होंने चमनलाल से कहा–

"रुत्ती गम्भीर रूप से बीमार हैं मुझे आज रात को ही जाना होगा...! जानते हो कौन बात कर रहा था? मेर ससुर! शादी के बाद आज पहली बार मेरी उनसे बातचीत हुई है।"

चमनलाल ने उनसे आग्रह किया कि रात की ट्रेन के स्थान पर वे अगली सुबह फ्रंटियर मेंल से जाएँ क्योंकि वह उन्हें जल्दी वहाँ पहुँचा देगी। तब तक दोनों में से किसी को भी मालूम नहीं था जिसे वे बीमार समझ रहे हैं वह मर चुकी है।

ग्रांट रोड स्टेशन पर कांजी ने पहुँचकर जिन्ना को ट्रेन से उतारा और वहाँ से सीधे उन्हें कब्रिस्तान ले गए। मार्ग में उन्होंने जिन्ना से कहा–

"रुत्ती की सबसे बड़ी इच्छा यह थी कि उसकी अन्त्येष्टि कराई जाए।"

लेकिन जिन्ना ने उसकी एक भी नहीं सुनी। रुत्ती को मुस्लिम रीति से अन्तिम संस्कार के तहत ही दफन किया गया। कब्र में मिट्टी डालते समय जिन्ना बच्चों की तरह सुबकते हुए आँसू बहा रहे थे।

वह 22 फरवरी सन् 1929 ई० का दिन था, जब रुत्ती अपनी सारी पीड़ाओं से आज़ाद होकर जमीन के नीचे शान्ति से सो गई।

☐



# जिन्ना-नेहरू मतभेद

सन् 1928 ई० में जिन्ना विदेशी दौरे पर निकल गए। लंदन में पहुँचकर वह अपने पुराने लिबरल और लेबर पार्टी के मित्रों से मिले। जिनमें रामसे मेंकडोनाल्ड और लार्ड रीडिंग सम्मिलित थे। वह फेवर ब्रेकवे के निमन्त्रण पर डुबलिन भी गए।

उन दिनों ब्रोकवे, आयरलैंड के प्रमुख भारत समर्थक व सांसद थे, जिन्होंने हाल ही में भारत का दौरा किया था।

जिस समय जिन्ना विदेश में थे, उस समय कांग्रेस अध्यक्ष डॉ० अन्सारी ने 18 मई को बम्बई में एक बैठक की अध्यक्षता की, जिसमें फरवरी में हुए सर्वदलीय सम्मेलन के कुछ सदस्यों ने भी भाग लिया था।

इस बैठक में मोतीलाल नेहरू के नेतृत्व में एक आयोग गठित करने का फैसला लिया गया, जिसे 1 जुलाई तक राष्ट्रवादी संविधान का मसविदा तैयार करना था। साइमन कमीशन के मुकाबले बनाया गया यह कांग्रेसी कमीशन प्रभावहीन साबित हुआ। मुस्लिमों की प्रभावी नुमाइन्दगी के बिना ही अपनी चर्चा पूरी कर लेने वाला यह कमीशन भारत की प्रमुख मुसलमान हस्तियों का समर्थन लेने में सफल नहीं हुआ।

नेहरू आयोग ने लखनऊ में भारत के अन्तिम सप्ताह में अपनी रिपोर्ट तैयार करने के लिए बैठक की। मोतीलाल और जवाहरलाल नेहरू ने इलाहाबाद में जो प्रस्ताव तैयार किए थे उन्ही के आधार पर यह रिपोर्ट बनाई जानी थी।

जिन्ना के युवा सहयोगी अब्दुल करीम छागला को मोती लाल ने लखनऊ में बुलाया। छागला ने लिखा है–

"संयुक्त मतदाता मंडलों में मेरा दृढ़ विश्वास ही इस रिपोर्ट में मेरा मुख्य योगदान था। मोती लाल ने कुछ देर के लिए सोचा कि अल्पसंख्यकों से रिपोर्ट स्वीकार कराने के लिए हमें पृथक् मतदाता मंडलों पर तैयार हो जाना चाहिए। इस पर मेरी दलील थी कि हम वर्तमान के लिए नहीं, बल्कि भविष्य के लिए संविधान लिख रहे हैं।

यह एक ऐसा दस्तावेज़ होगा जिसकी लम्बी जिन्दगी की आशा की जा सकती है। अतः हमें इसमें कोई ऐसा प्रस्ताव शामिल नहीं करना चाहिए, जिसके राष्ट्र विरोधी होने का आभास हो। अन्त में मोतीलाल मेरी बात मान गए।"

लखनऊ में ही छागला ने मुस्लिम लीग के नाम पर रिपोर्ट स्वीकार कर ली। जब जिन्ना को भारत लौटकर इस बात का पता चला तो वह छागला पर बहुत नाराज़ हुए उन्होंने कहा–

"उतावलेपन में कदम उठाने के स्थान पर छागला को अपना फैसला सुरक्षित

रखना चाहिए था ताकि हम रिपोर्ट पर लीग की नियमित बैठक में गौर कर पाते।"

जिन्ना ने नेहरू रिपोर्ट कभी स्वीकार नहीं की और न ही कभी छागला को अपने विश्वस्त मित्र के रूप में देखा। उनका मानना था विगत वर्ष दिल्ली के मुसलमानों के प्रस्तावों पर यह रिपोर्ट हिन्दू मत से ज्यादा कुछ नहीं हैं।

नेहरू रिपोर्ट लोकतान्त्रिक थी किन्तु उसने लखनऊ करार को बुनियादी रूप से ठुकरा दिया था। वह मुसलमान समुदाय को उसके बदले कोई लाभ देने को ही राज़ी न थी। रिपोर्ट का दावा था–

"साम्प्रदायिक मतदाता मंडलों को समाप्त करने का उद्देश्य चुनाव के दौरान प्रत्येक समुदाय को कमोबेश एक दूसरे पर निर्भर बनाने के जरिए साम्प्रदायिक एकता को बढ़ावा देना था।"

यह बात उन लोगों को कपट से पूर्ण लग सकती थी, जो बरसों से हिंसा और साम्प्रदायिक भेद-भाव के वातावरण में पले हों, हालात कोई भी रहे हों, लेकिन जिन्ना ने इसे स्वीकार नहीं किया। जिन्ना ने इस पर अपनी पहली सार्वजनिक राय अक्टूबर में दी–

"अखिल भारतीय मुस्लिम लीग का अध्यक्ष होने के नाते मेरी हैसियत मुझे लीग के फैसलों का पूर्वानुमान लगाने की अनुमति नहीं देती।"

उन्होंने सभी मुसलमानों से एकत्रित करते हुए यह अपील की–

"वे घबराएँ नहीं, मेरी समझ में उनकी हक्के-बक्के रह जाने और भगदड़ मचाने की कोई वजह नहीं है मुसलमानों को चाहिए वे स्वयं को संगठित करें, एकजुट रहें और समुंदाय की रक्षा के लिए प्रत्येक काबिज मुद्दे पर लगातार जोर डालते रहें।"

जिन्ना की यह टिप्पणी सुर्खियों में छपते ही मोती लाल ने उन्हें कमेटी में और उसकी दिल्ली में होने वाली बैठक में शामिल होने का निमन्त्रण दिया। किन्तु जिन्ना ने इस निमन्त्रण को स्वीकार नहीं किया और वह सिन्ध चले गए। उन्हें वहाँ के धुर उत्तरी जिले के एक प्रभावशाली और सम्पन्न पीर पगाडो नामक व्यक्ति का मुकद्दमा लड़ना पड़ा।

पीर पगाड़ो, सुककुर की जेल में बन्द थे। उन पर आरोप लगाया गया था कि उन्होनें किसी व्यक्ति को अनुचित नज़रबन्दी में रखा और एक गैर कानूनी रूप से बड़ी संख्या में हथियार रखे।

उनका यह मुकदमा सुककुर जिले की एक विशेष मजिस्ट्रेट की अदालत में चल रहा था। इस मुकद्दमें को लड़ने की जिन्ना ने पाँच सौ रुपये फीस ली। उन दिनों पाँच सौ रुपये बहुत बड़ी रकम थी।

आखिरकार मजिस्ट्रेट ने पीर पगाड़ो को सजा सुनाई। लेकिन दो वर्ष पश्चात् एक अपील के जरिए जिन्ना अपने मुवक्किल का कारावास माफ कराने में कामयाब हो गए।



*जिन्ना नेहरू के साथ*

जिस समय जिन्ना सिन्ध में मौजूद थे, उनके सामने दो महत्वपूर्ण घटना घटी वहाँ उनकी मुलाकात युवा मुहम्मद खुसरो से हुई; वह पीर पगाड़ो के लिए काम करता था। आगे चलकर यही शख्स स्वतन्त्र पाकिस्तान के लिए सिन्ध का पहला मुख्यमन्त्री बना। इसके अलावा जिन्ना की मुलाकात मियां सर हाजी हारून से भी हुई उनकी पड़ोस की खैरपुर रियासत पर हुकूमत थी।

उन्होंने खैरपुर हाउस में जिन्ना के स्वागत का समारोह किया। हाजी हारून विधान सभा में जिन्ना के निर्दलीय साथियों में भी सम्मिलित थे।

इस अवसर का पूरा लाभ उठाकर जिन्ना ने सिन्ध के मुसलमान समुदाय को भी सम्वोधित किया। इस भीड़ में से कई लोग निकट भविष्य में उनके पक्के समर्थक और सच्चे सहयोगी साबित हुए।

□



# भारतीय राष्ट्रवाद को अलविदा

सिन्ध से चलने से पहले जिन्ना ने 10 नवम्बर, 1928 ई० को वहाँ के साथी मुसलमानों के बीच नेहरू कमेटी और उसकी रिपोर्ट से सम्बन्धित अपनी निराशाओं पर खुलकर बातचीत की थी।

लखनऊ में हुई लीग कौंसिल बैठक में जिन्ना ने भाग लिया। लेकिन अपने साथी कई मुसलमानों को नेहरू रिपोर्ट का समर्थन करते देखकर उन्हें भारी निराशा हुई। वहाँ वे इस प्रश्न पर मत विभाजन करने की स्थिति में नहीं थे। उस वर्ष के लीग के अध्यक्ष राजा महमूदाबाद भी उस रिपोर्ट का समर्थन कर रहे थे किन्तु जिन्ना नेहरू संविधान का विरोध करते रहे। उनकी नज़र में वह सिर्फ एक हिन्दू दस्तावेज़ था।

साम्प्रदायिक मुद्दों पर एक समझौता फार्मूला निकालने के लिए मोती लाल, डॉ० अंसारी तथा मौलाना आज़ाद ने जिन्ना से लखनऊ में अनुरोध किया कि जिन्ना दिसम्बर में लीग या कांग्रेस की बैठक होने से पूर्व तथा कलकत्ता में सर्वदलीय सम्मेलन होने से पहले तथा कलकत्ता में सर्वदलीय, सम्मेलन होने से पूर्व नेहरू कमेटी की विशेष बैठक में आएँ। लेकिन जिन्ना ने किसी की नहीं सुनी।

जिन्ना ने 23 नवम्बर को बम्बई आकर लीग की प्रान्तीय बैठक में हिस्सा लिया। यहाँ भी छागला ने नेहरू रिपोर्ट में इतनी जोरदार दलीलें दी कि जिन्ना को बिना मत विभाजन के मीटिंग स्थागित करनी पड़ी।

मोतीलाल ने एक गोपनीय पत्र में लिखा था—"जिन्ना द्वारा मुस्लिम लीग के अधिवेशन से पूर्व सर्वदलीय सम्मेलन के आयोजन पर किए गए एतराज के पीछे दलील यह थी कि सम्मेलन में लीग की नुमाइन्दगी करने का प्राधिकार तो केवल लीग से ही प्राप्त किया जा सकता है। में कहना चाहता हूँ कि अगर कमेटी की रिपोर्ट और लखनऊ के फैसलों के विचार के लिए पेश किया जाता तो उन्हें उससे भी भारी बहुमत मिलता, जिससे राजा महमूदाबाद लीग के अध्यक्ष चुने गए थे लीग के खुले अधिवेशन का भी यही परिणाम निकलने वाला था।"

अपने निर्धारित कार्यक्रम के अनुरूप सर्वदलीग राष्ट्रीय सम्मेलन 22 दिसम्बर को कलकत्ता में शुरू हुआ। किन्तु 28 दिसम्बर तक इस सम्मेलन में मुस्लिम लीग के अधिकारिक प्रतिनिधि नहीं पहुँच पाए थे। 26 दिसम्बर को स्वागत समिति के अध्यक्ष अब्दुल करीम खाँ ने अफसोस जताया—

"कुछ शक्तियाँ भारतीय मुसलमानों की राजनीतिक ताकत बाँटने में लगी हुई हैं, जबकि समुदाय और देश के अत्यन्त आवश्यक हितो के लिए वक्त की माँग मज़बूत एकता की है।"

27 दिसम्बर को लीग ने मतदान के जरिए अपने 23 प्रतिनिधियों को भारतीय

राष्ट्रीय कांग्रेस द्वारा आयोजित सम्मेलन हो रही चर्चा में भाग लेने के लिए अपने नुमाइन्दे के तौर पर नियुक्त किया।

इस प्रतिनिधिमंडल का नेतृत्व जिन्ना तथा राजा महमूदाबाद के हाथ में था। इन सदस्यों में नवाबजादा लियाकत अली खान भी थे। जो पाकिस्तान के प्रथम प्रधानमन्त्री बने। साथ ही छागला भी थे, जिन्होंने सन् 1966-67 में भारत के विदेश मन्त्री की भूमिका निभाई थी। छागला के शब्दों में—

"जिन्ना नेहरू रिपोर्ट को पूरी तरह खारिज कर देना चाहते थे, आखिरकार लम्बी बहस के बाद हमने महत्वपूर्ण संशोधनो के बारे में निर्णय लिया। पहला निर्णय प्रथम मतदान मंडल रहेगा, दूसरा निर्णय केन्द्रीय विधायिका में एक-तिहाई सीटों के आरक्षण, तीसरा निर्णय प्रान्तों को बचे हुए अधिकार देने के बारे में था।"

20 दिसम्बर को हुए राष्ट्रीय सम्मेलन में जिन्ना ने मुस्लिमों का पक्ष रखा उन्होंने कहा—

"हमारी प्रगति के लिए हिन्दू-मुस्लिम विवादों का समाप्त होना बहुत आवश्यक है, हमारे इस विशाल देश में भी समुदायों को सद्भावना के साथ व मित्रवत रहना होगा।"

इसके उत्तर में वायसराय कौंसिल के पूर्व सदस्य सर तेजबहादुर सप्रू बोले—

"अगर आप आंकड़ों का आकलन करेंगे, तो पाएँगे नामजद सदस्यों सहित केन्द्रीय विधायिका में मुस्लिम प्रतिनिधित्व 27 फीसदी हैं और मिस्टर जिन्ना 33 फीसदी चाहते हैं। जहाँ तक मेरा सवाल है मैं मिस्टर जिन्ना से पिछले पन्द्रह सालों से वाकिफ हूँ। मैं चाहता हूँ आप भी उन्हें उसी नज़र से देखें, अगर वे बिगड़े व शरारती बच्चे की तरह पेश आ रहे हैं, तो में कहूँगा कि वो जो चाहते हैं वह उन्हें देकर मामला समाप्त कर दिया जाए।"

इस पर पूना के एम० आर० सप्रू (विधानसभा में नेशनललिस्ट पार्टी के नेता और सम्मेलन में हिन्दू महासभा के प्रवक्ता) ने कहा—

"मैं भी मिस्टर जिन्ना से पिछले सोलह सालों से परिचित हूँ। राष्ट्रवादी सार्वजनिक जीवन में ये मेर नज़दीकी सहयोगी रह चुके हैं, आप निश्चित रूप से समझ लीजिए कि वे यहाँ न तो शरारती और न ही बिगड़े बच्चों की तरह आए हैं। एक महत्वपूर्ण तथ्य याद रखिए कि मौलाना अबुल कलाम आज़ाद, डॉ० अंसारी सर अली इमाम, राजा साहब महमूदाबाई और डॉ० किचलू जैसे देश भक्त और मुसलमान हस्तियाँ नेहरू कमेटी रिपोर्ट से पूरी तरह सहमत हैं।

यह भी स्मरण रहे कि मुस्लिम लीग के अधिकतर सदस्य भी इस रिपोर्ट के साथ हैं, इसलिए में किसी को बिना ठेस पहुँचाए कहना चाहता हूँ कि मिस्टर जिन्ना मुसलमानों की एक छोटी सी अल्पसंख्यक के नेता ही रह गए हैं।"

उनका हर शब्द जिन्ना के स्वाभिमान को ठेस पहुँचा रहा था। फिर वह बोले—

"हम आज एक ऐसी बहस कर रहे हैं, जो बहुत गम्भीर और औपचारिक प्रकृति की है। मैं समझता हूँ हम यहाँ एक विधिवत करार करने को एकत्रित हुए हैं जिसमें सभी पक्षों को मिलजुल कर काम करना पड़ेगा और संघर्ष करना होगा हम चाहते हैं कि जब तक मंजिल न मिल जाए, हिन्दू व मुसलमानों को एक साथ आगे बढ़ना

होगा।

इसलिए आवश्यक है कि आपको न केवल मुस्लिम लीग का वरन् सारे भारत के मुसलमानों का समर्थन मिलना चाहिए। यह बात में एक भारतीय होने की हैसियत से कह रहा हूँ, क्या कुछ मुसलमानों के समर्थन से आपको सन्तोष हो जाएगा? अल्पसंख्यक तो बहुसंख्यक को कुछ दे नहीं सकता, इसलिए मुझसे यह कहने का कोई औचित्य नहीं रह जाता कि मैं इन मामूली बातों पर जोर न दूँ, में एक शरारती बच्चा होने के नाते इन परिवर्तनों की माँग नहीं कर रहा हूँ। अगर ये रियायतें मामूली हैं तो आप इन्हें मान क्यों नहीं लेते? यह बहुसंख्यकों की जिम्मेदारी है और बहुसंख्यक ही देने की स्थिति में होते हैं।

ऐसा में इसलिए कह रहा हूँ कि मेर विचार से मुसलमानों के लिए सबसे जरूरी और बेहतर यही है। हम सब इसी धरती के बेटे हैं। हमें एक साथ रहना है, हमारे बीच जो भी मतभेद हो, किसी भी हालत में हमें आपसी सम्बन्ध ख़राब नहीं करने चाहिए। अगर हम सहमत नहीं हो सकते तो आइए असहमत होने के लिए सहमत हो जाएँ अगर अलग हों तो दोस्तों की तरह।

विश्वास कीजिए, भारत की प्रगति तब तक नहीं हो सकती जब तक मुसलमान-हिन्दू एक नहीं हो जाते। कोई दलील कोई दर्शन और कोई भी विवाद समझौते के मार्ग में नहीं आना चाहिए। हिन्दू-मुस्लिम एकता से ज्यादा प्रसन्नता मुझे किसी और बात से नहीं मिल सकती।"

अब जिन्ना की ज़िन्दगी एक अलग मोड़ ले चुकी थी क्योंकि जिन्ना भारतीय राष्ट्रवाद से अलग हो चुके थे, उन्होंने उसे अलविदा कह दिया था।

□



# जिन्ना की अंग्रेजों से सांठ-गांठ

अप्रैल में जिन्ना 1929 ई० में दिल्ली विधान सभा की कार्यवाही में भाग लेने पहुँचे वहाँ उन्होंने कहा–

"हिन्दुओं व मुसलमानों के बीच रिपोर्ट से सम्बन्धित मतभेद हल नहीं हुए हैं, इसलिए सर्वसम्मत भारतीय संविधान तैयार करने का मुद्दा अब खत्म हो चुका है, में जानता हूँ कि नेहरू रिपोर्ट मेर मान्य मित्र को बच्चे की तरह प्रिय है, किन्तु मैं निष्पक्ष भाव से चाहता हूँ कि वे जितनी जल्दी यह एहसास कर लें, उतना ही बेहतर होगा कि यह रिपोर्ट मुसलमानों को स्वीकार नहीं है।"

जिन्ना खुद को कमज़ोर साबित नहीं करना चाहते थे, लेकिन उनका मुस्लिम लीग का अपना गुट मतभेदों का शिकार हुआ पड़ा था। जिन्ना ने 30 मार्च सन् 1929 ई० को फिर से पुरानी दिल्ली में बैठक की, जिसमें वे अपने मुकाबले खड़े नेताओं से सुबह तक वार्ता करते रहे।

उनकी कोशिश एक ऐसा मंच तैयार करने की थी जिस पर सभी एकजुट होकर खड़े हो सकें। उन्होंने जो सुझाव पेश किया था उसे जिन्ना के चौदह सूत्रों के नाम से जाना जाता है।

इन सूत्रों का विरोध डॉ० अंसारी, तसद्दुक अहमत खाँ शेरवानी, डॉ० महमूद आलम और डॉ० सैयद महमूद ने किया था। ये सभी नेहरू रिपोर्ट के हक में थें। सिर्फ मौलाना मुहम्मद अली ने जिन्ना का पूरे दिल से समर्थन किया, क्योंकि उनका गाँधी जी से पूरी तरह मोहभंग हो चुका था।

जिन्ना को पूरी आशा थी कि यह फार्मूला सभी लोग मान लेंगे और आने वाले भूकम्प से पार लगाने वाली नैया बन जाएगी। डॉ० सैफुद्दीन किचलू व आसफ अली ने उनका पूरा साथ दिया, लेकिन सभी उत्साहित थे। मगर जिन्ना का गठजोड़ एक दिन भी नहीं टिका।

अगले दिन सुबह सवेरे पुरानी दिल्ली के अजमेरी गेट के पास रोशन थियेटर में लीग की बैठक आरम्भ हुई। डॉ० अंसारी के समर्थक अगली लाइन में बैठे हुए थे और डॉ० आलम ने जबरदस्ती अध्यक्ष की कुर्सी पर अधिकार कर लिया था। मगर वहाँ मौजूद लोगों ने डॉ० आलम को कार्यवाही करने की इजाज़त नहीं दी।

पर डॉ० आलम ने उनकी बात अस्वीकार कर दी। जिसकी वजह से वहाँ हंगामा मच गया। मजबूर होकर जिन्ना को चौदह सूत्रीय फार्मूला रखे बिना ही संसद की कारवाही स्थगित करनी पड़ी।

इस प्रकार लीग के जिन्ना गुट का अस्तित्व करीब-करीब समाप्त हो गया था। तब जिन्ना के सामने अपने अंग्रेज दोस्त की सहायता लेने के अतिरिक्त कोई दूसरा रास्ता नहीं था। उन दिनों लंदन का राजनीतिक वातावरण तेजी से उदार

होता जा रहा था।

सन् 1929 ई० मई माह में अपने पुराने मित्र तथा नए प्रधानमंत्री रामसे मेंकडोनाल्ड को जिन्ना ने लिखा—

"मौजूदा परिस्थितियाँ एक बेहद संगीन गतिरोध का शिकार हो गयी हैं। अगर यह ज़ारी रहा तो भारत और ग्रेट ब्रिटेन के हितों के लिए बेहद हानिकारक सिद्ध साबित होगा।"

साइमन कमीशन की नियुक्ति के बाद भी राजनीतिक घटना-क्रम का एक संक्षिप्त विवरण पेश करते हुए जिन्ना ने लिखा था—

"इस कमीशन की रिपोर्ट की प्रतीक्षा करना व्यर्थ है, क्योंकि अब जहाँ तक भारत का प्रश्न है इसमें हमारी कोई दिलचस्पी नहीं रह गई है भारत को अब ग्रेट ब्रिटेन पर यकीन नहीं है।

इसलिए में आपसे कहना चाहूँगा कि जिस पहली और सबसे जरूरी बात पर आपको ध्यान देना चाहिए वह है—ग्रेट ब्रिटेन की नेकनियती पर भारतवासियों को कैसे विश्वास दिलाया जाए। भारत में एक तबका पहले ही पूर्ण स्वाधीनता को अपना लक्ष्य घोषित कर चुका है और मैं बिना किसी अतिश्योक्ति के आपको बताना चाहता हूँ कि स्वाधीनता आन्दोलन जमीन पकड़ता जा रहा है इसके पीछे कोई और नहीं भारतीय कांग्रेस है।"

वास्तव में कलकत्ता अधिवेशन के अन्तिम दौर में गाँधी जी ने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की लगाम सँभाल ली थी। उन्होंने फिर से असहयोग का एक अहिंसक आन्दोलन चलाने का प्रस्ताव रखा था, जिसमें संशोधन करके सुभाष चन्द्र बोस ने अनुरोध किया था—

"हमारी राजनीतिक गिरावट का कारण गुलामी की मानसिकता है। अगर गुलामी की इस मानसिकता से निजात पानी है तो देशवासियों को पूर्ण स्वाधीनता के लिए प्रेरित करके ही यह कार्य किया जा सकता है।"

जिन्ना ने इस आन्दोलन को खतरनाक मानते हुए, उसकी रफ्तार कम करने के लिए सुझाव दिया—

"बिना किसी देर के हिज मेंजेस्टी की सरकार को घोषित करना चाहिए कि ग्रेट ब्रिटेन भारत को स्वतन्त्र उपनिवेश के दर्जे के साथ पूर्ण उत्तरदायी सरकार देने की नीति के प्रति प्रतिबद्ध है। इस प्रकार की घोषणा का प्रभाव बड़ा दूरगामी होगा और इससे देश में एक अलग तरह का वातावरण तैयार करने में काफी मदद मिलेगी। भारत की नुमाइन्दगी करने वाले ऐसे लोगों को आमन्त्रीत किया जाना चाहिए जो यह उद्देश्य पूरा करने में सहायता करने की स्थिति में हों, क्योंकि हालात कुछ ऐसे हैं कि इस समय भारत से इस विषय में पूर्ण मत हासिल नहीं किया जा सकता।"

जिन्ना का कहना था—"इन प्रतिनिधियों को लंदन बुलाकर ब्रिटिश अधिकारियों से तब तक बात करनी चाहिए जब तक वे किसी ऐसे संवैधानिक हल तक न पहुँच जायें जो वायसराय के शब्दों में राजनीतिक भारत को स्वैच्छिक सहमति प्राप्त

करने योग्य हो।"

जिन्ना के अनुसार इस प्रक्रिया के तहत सूत्रीकरण किए जाने के बाद यह पेशकश संसद के सामने रखी जा सकती है।

लार्ड इरविन और जिन्ना का पत्र आगे-पीछे लंदन पहुँचा। इरविन इंडिया ऑफिस पहुँचकर वेसवुडवेन से मिले। उन्होंने गोलमेज़ सम्मेलन करने तथा भारत को स्वतन्त्र उपनिवेश का दर्जा देने की ब्रिटिश नीति की घोषणा करने के सुझाव भी दिए थे।

इरविन के अनुसार नए भारत-मन्त्री इस सुझाव से सहमत होने के लिए तैयार थे मगर वे साइमन और उनके कमीशन की जानकारी लेकर तसल्ली कर लेना चाहते थे। उन दिनों साइमन कमीशन अपनी रिपोर्ट तैयार करने में लगा हुआ था।

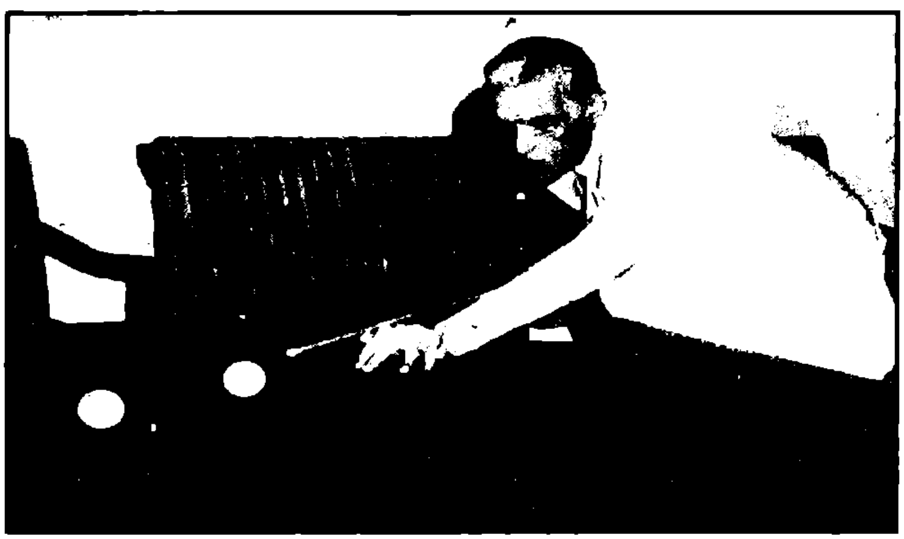
साइमन कमीशन को स्वतन्त्र उपनिवेश सम्बन्धी घोषणा करने में परेशानी महसूस नहीं हो रही थी। किन्तु वह गोलमेज़ सम्मेलन पर दिक्कत महसूस कर रहा था, क्योंकि उससे उनके कमीशन की रिपोर्ट की अहमियत पर उल्टा असर पड़ सकता था। साइमन कमीशन तो यही चाह रहा था कि गोलमेज़ सम्मेलन करने का प्रस्ताव उसकी तरफ से रखा जाए।

साइमन की इज्जत बचाने के लिए यह ऐतिहासिक दोहरा खेल-खेला जा सकता था। रामसे मेंकडोनाल्ड की तरफ से 14 अगस्त 1929 ई० को जिन्ना के लिए एक जवाबी प्राइवेट पत्र भेजा गया। ब्रिटिश प्रधानमन्त्री का यह पत्र पाकर जिन्ना बहुत खुश हुए उन्होंने सन्तुष्ट होकर 7 दिसम्बर 1929 ई० को उस पत्र का उत्तर भेजा—

"मुझे खुशी है कि आप मेरे इस सुझाव से सहमत हैं और अगर आप इन पर चलेंगे तो भारत का भविष्य उज्ज्वल होगा, साथ ही ग्रेट ब्रिटेन का नाम इतिहास में अपने वायदों पर खरा उतरने वाले राष्ट्र के रूप में दर्ज हो जाएगा।"

लंदन में तीन बड़े गोल मेंज़ सम्मेलन हुए। इसके शुरू में जिन्ना की भूमिका प्रधानमन्त्री के निजी मित्र व सलाहाकार की तो थी ही वायसराय के वह मुख्य दूत थे।

भारत के हर समाचार पत्र के पहले पन्ने पर 1 नवम्बर सन 1992 ई० को



*जिन्ना बिलियर्ड्स खेलते हुए*

इरविन का ऐतिहासिक बयान प्रकाशित हुआ था। उस दिन जिन्ना बम्बई में मौजूद थे। वहीं से ही जिन्ना ने इरविन की घोषणा के उत्तर के लिए सर चिमनलाल सीतलवाड़ के चैम्बर में एक संयुक्त बयान जारी करने के लिए 18 लोगों से भेंट की। इस बयान में इरविन का स्वागत करते हुए कहा—

"उनके बयान की प्रक्रिया सम्बन्धी एक बुनियादी बदलाव हुआ है, जिसके अनुसार भारत के प्रतिनिधि हिज मेंजेस्टी की सरकार के साथ सम्मेलन करने के लिए निमन्त्रित किए जाएँगे। इस सम्मेलन करने का उदेश्य भारत को स्वतन्त्र उपनिवेश का दर्जा देने के लिए उन प्रस्तावों पर हर सम्भव सहमति बनाने की कोशिश करना होगा, जिससे उन्हें संसद के सामने पेश किया जा सके। इस प्रकार एक ऐसे हल पर पहुँचा जा सके, जिसके साथ राजनीतिक भारत की स्वैच्छिक सहमति हो।"

इस बयान पर सर होमी, छागला, सरोजिनी नायडू, भूला भाई देसाई, काजी द्वारकादास तथा उनके भाई ने भी दस्तख्त किए।

इधर नई दिल्ली से मोती लाल नेहरू ने एक बैठक की अध्यक्षता की, जिसमें कांग्रेस के अतिरिक्त तीन अन्य पार्टियों के तीस नेता भी शामिल थे। कांग्रेस ने इरविन की इस घोषणा का अर्थ समझा कि—

"गोलमेज़ सम्मेलन इसलिए नहीं किया जा रहा कि बताया जाए कि स्वतन्त्र उपनिवेश का दर्जा कब दिया जा रहा है, बल्कि इसमें भारत को स्वतन्त्र उपनिवेश बनाने की योजना तैयार करने पर ध्यान दिया जाना है।"

23 दिसम्बर सन् 1929 ई० को नई दिल्ली में शाम साढ़े चार बजे के समय वायसराय के आवास पर जिन्ना गाँधी, मोतीलाल नेहरू, सप्रू तथा पटेल की इरविन से मुलाकात हुई। उस दिन सुबह के समय इरविन व उनके साथी काल के गाल में समाने से बचे थे, वह जिस ट्रेन के डिब्बे में सफर कर रहे थे, नई दिल्ली पहुँचते ही उसके नीचे बम विस्फोट हुआ था। किस्मत से जानो-माल की कोई हानि नहीं हुई थी।

उस दिन, उपनिवेश का पूर्ण दर्जा तुरन्त दिए जाने के मार्ग में आने वाली परेशानियों और उनसे बचने वाले उपायों पर विचार किया जाना था किन्तु मोतीलाल और गाँधी जी अपनी बात पर अड़े रहे। उन्होंने ऐसे मुद्दों पर बहस के लिए किए जाने वाले सम्मेलन में भाग लेने से इन्कार कर दिया, जो सभी पक्षों और उनकी अलग-अलग समझ के अनुकूल ही न हो।

इस बातचीत की असफलता पर जिन्ना को रुत्ती की मौत से ज्यादा दुःख हुआ था। जिन्ना का मानना था कि उन्होंने अपने प्रयासों से जो संजोया था, वह राजनीतिक उपलब्धि मामूली नहीं थी। लार्ड इरविन व रामसे मेंकडोनाल्ड से कराया वादा साधारण नहीं था। उस साल मुस्लिम लीग की कोई भी बैठक नहीं होनी थी और न ही कांग्रेस व उनके बीच की कमी भरी जा सकती थी। उनका सारा प्रयास, निष्फल हो गया था। उनकी कोई बात न मानी गयी थी।

□



# गोल मेज़ कांफ्रेस का निमंत्रण

सन् 1929 ई० के दौरान दिसम्बर के महीने के अन्त में कांग्रेस का अधिवेशन लाहौर में हुआ था। जहाँ पूर्ण स्वराज्य का प्रस्ताव पारित कर दिया गया था। यह 44 साल पुराने राष्ट्रीय आन्दोलन के लिए एक आकस्मिक मोड़ था।

कांग्रेस कार्य समिति ने घोषित किया—

"रविवार 26 जनवरी, सन् 1930 ई० का दिन पूर्ण स्वराजं दिवस के रूप में मनाया जाएगा।"

प्रस्ताव पारित किया गया कि हम विश्वास के साथ कहते हैं कि भारत को ब्रिटेन से रिश्ता तोड़कर पूर्ण स्वराज्य प्राप्त करना चाहिए। प्रस्ताव की यह इबारत पूरे देश में डाक द्वारा भेजी गई और पूरे उपमहाद्वीप में लाखों लोगों द्वारा पढ़ी गई।

जिन्ना मालाबार हिल पर स्थित अपने घर के एकांत कक्ष में राष्ट्रवाद की नई क्रान्तिकारी लहर को सरकारी उपेक्षा और दमन से टकराते हुए देख रहे थे। उन्होंने इस राजनीतिक उन्माद के फट पड़ने का जिम्मेदार गाँधी को माना।

कांग्रेस के आन्दोलनकारी कार्यक्रम को, जिन्ना ने सार्वजनिक रूप से जब राजनीतिक उन्माद कहा तो सप्रू ने सहमति व्यक्त करते हुए 5 जनवरी सन 1930 ई० को उन्हें पत्र लिखा। सप्रू एक और सर्वदलीय सम्मलेन आयोजित करना चाहते थे, उन्होंने जिन्ना से कहा—

"मेरा निजी विचार है कि हिन्दू-मुस्लिम समस्या का समाधान करने में हमें कोई परेशानी नहीं होगी; लेकिन तुम्हारी ज्यादा प्रशंसा किए बगैर में इतना अवश्य कहूँगा कि तुम्हारे सहयोग और मार्गदर्शन के अभाव में समाधान तक पहुँचना नामुमकिन होगा।

सप्रू का सुझाव सभी को और राजा महमूदाबाद को भी ठीक लगा। सप्रू के काफी समझाने के बाद हिन्दू महासभा भी इस सम्मेलन में भाग लेने के लिए तैयार हो गई थी। इधर जिन्ना भी इस सुझाव को आजमाने के लिए पूरी तरह तैयार हो गये थे।

28 फरवरी 1930 को दिल्ली में यह सम्मेलन हुआ; जिसमें अधिकतर मुसलमान प्रतिनिधि जिन्ना ने खुद ही चुने। इसमें पचास से ज्यादा प्रतिनिधि थे। जिसमें प्रमुख उदारपंथी, महासभाई, ईसाई एंग्लो-इंडियन, मद्रास की जस्टिस पार्टी के अछूत और मुस्लिम लीग सम्मिलित थे।

फरवरी माह के आरम्भ में जिन्ना विधानसभा में हिन्दू महासभा के नेता मदन मोहन मालवीय जी से मिलकर साम्प्रदायिक समस्या पर विचार कर चुके थे। तब उन्हें लगा था कि इस समस्या का समाधान करने के लिए वातावरण में सुधार आ गया है; किन्तु उनका यह सोचना गलत था।

जिन्ना का ध्यान इस सम्मेलन से अधिक लंदन पर केन्द्रित था। वह इरविन से गोलमेज़ सम्मेलन शुरू करने की तारीख का ऐलान करने के लिए बार-बार आग्रह कर रहे थे। साथ ही सम्मेलन के लिए अधिकारिक निमन्त्रण भेजे जाने की माँग भी कर रहे थे।

उस दौरान गाँधी जी साबरमती से समुद्र तट तक अपना ऐतिहासिक डांडी मार्च करीब-करीब पूरा कर चुके थे। समुद्र तट पर पहुँचकर उन्होंने अंग्रेजों की नमक पर इज़ा रेदारी का खुला उल्लंघन करते हुए नमक बनाया। जिससे देश में एक नए सत्याग्रह का आरम्भ हो गया। जिन्ना को डर था कि कहीं सत्याग्रह की लहरें और अंग्रेजों का दमन उनकी नाजुक संवैधानिक नैय्या को बम्बई बन्दरगाह पार करने से पहले ही तबाह न कर दे।

इरविन द्वारा जो तारीख तय की गई थी उसमें देर हो जाने के कारण से जिन्ना को आशंका हो रही थी कि शायद इरविन मौखिक रूप से रजामन्द होने के बाद इस करार पर हस्ताक्षर करने से पीछे हटने की तैयारी कर रहें हैं।

26 अप्रैल को जिन्ना ने इरविन को पत्र लिखा दो। सप्ताह बाद इरविन का उत्तर मिला कि गोलमेज़ सम्मेलन अक्टूबर में शुरू होगा। इरविन ने पत्र में जिन्ना से पूछा कि शिमला में आमतौर से सितम्बर में होने वाले विधानसभा अधिवेशन को जुलाई में करने के बारे में उनका क्या विचार है।

जिन्ना जानते थे कि इस अधिवेशन सें कोई फायदा नहीं होगा। फिर भी जिन्ना ने इरविन को लिखा—

"मुझे लगता है कि इस माह के आखिर तक मैं बम्बई पहुँच जाऊँगा; अगर आपको ठीक लगे तो जून के प्रथम सप्ताह में मैं कुछ दिनों के लिए शिमला आ सकता हूँ।

इधर गाँधी जी को 5 मई को गिरफ्तार कर पूना की जेल में भेज दिया गया। वहाँ पन्द्रह दिन पूरे होने से पहले ही लार्ड इरविन को प्रिय मित्र का सम्बोधन देते हुए गाँधी जी ने पत्र लिखा और अपने ग्यारह सूत्रों पर जोर देते हुए समझौता वार्ता आरम्भ कर दी।

गाँधी जी के यही ग्यारह सूत्र रामसे, मेंकडोनाल्ड के सामने जनवरी में रखे गये थे और कहा गया था कि इन पर सहमति नागरिक अवज्ञा आन्दोलन खत्म करने की अनिवार्य और पहली शर्त है। इसमें पहली माँग पूर्ण शराबबन्दी और चौथी नमक कानून खारिज करने की थी। अन्य माँगे इस प्रकार थीं—

50 फीसदी कटौती से आरम्भ करके फौजी खर्च घटाना, विदेशी कपड़े पर संरक्षात्मक कर लगाना, जन-नियन्त्रण के अधीन आत्मरक्षा के लिए बारूदी हथियारों

के लाइसेंस जारी करना, लगान में पचास फीसदी कटौती और उसे विधायी नियन्त्रण में करना, सबसे ऊँचे स्तर की नौकरियों में वेतन आधा या उससे कुछ कम घटाना, पुलिस का क्रिमिनल इंटेलीजेंस डिवीजन भंग करना या उसे जन-नियन्त्रण में देना और राजनीतिक कैदियों को क्षमा करना।

गाँधी जी ने जेल में ही प्रेस वालों को बुलाकर एक इंटरव्यु भी दिया। उस इंटरव्यु के प्रकाशित होते ही सप्रू और जयकर ने वायसराय की निजी सहमति से अपना शान्ति अभियान आरम्भ कर दिया। दोनों 23 जुलाई को गाँधी जी से जेल में मिले। उन्हें हाथों-हाथ नैनी जेल में बन्द मोतीलाल व जवाहर लाल तक पहुँचाने के लिए गाँधी जी ने एक नोट लिखकर भेजा जो इस तरह था—

"मेरी निजी राय है कि अगर गोलमेज़ सम्मेलन पूर्ण स्वशासन प्राप्त करने के लिए संक्रमण की अवधि के दौरान आवश्यक सुरक्षा उपायों पर विचार तक ही सीमित रहता है, तो यह मान लेने के बाद कि स्वतन्त्रता का सवाल अगर कोई उठाता है, तो उसे खारिज नहीं किया जाएगा।

मुझे कोई आपत्ति नहीं होगी। इससे पहले कि में सम्मेलन में कांग्रेस की भागीदारी का समर्थन करूँ। मुझे उसकी संरचना के बारे में पूरी तसल्ली होनी चाहिए।"

जिन्ना को पूरी उम्मीद थी कि इरविन गोलमेज सम्मेलन की पूर्व संध्या पर नरम नही पड़ेंगे उनका कहना था—

"मैं इस बात से चिंतित हूँ कि सम्मेलन में बुलाए जाने वाले प्रतिनिधियों के नाम अगस्त के अन्त या सितम्बर के आरम्भ तक प्रकाशित नहीं किए जाने चाहिए। में आपसे निवेदन करता हूँ कि नामों पर अन्तिम फैसला लेने से पहले आप निमन्त्रितों की सूची मुझे दिखायें, जिससे में आपको अपनी राय दे सकूँ। कहना न होगा कि अन्ततः फैसला आप ही करें कि किसे बुलाया जाना चाहिए। मेर शिमला में रहते हुए यह काम किया जा सकता है।"

28 जुलाई को इरविन ने जिन्ना को सूचना देते हुए पत्र लिखा था—

"लेबर पार्टी की सरकार ने लिबरल और कंजरवेटिव विपक्षी पार्टियों के लंदन स्थित सदस्यों को भी गोलमेज़ सम्मेलन में बुलाने का निर्णय किया है। इसके जवाबी पत्र में जिन्ना ने कहा था—

"में आपसे अनुरोध करता हूँ कि आप मेरी वह राय न लें जो मैंने आपको शिमला वार्ता के दौरान दी थी कि महामहिम को सम्मेलन के समय लंदन में रहने की पूरी कोशिश करनी है।

अपने पत्र में जिन्ना ने राजनीतिक कैदियों को आजाद करने के लिए भी जोर डाला। वह विशेष रूप से खान अब्दुल गफ्फार खान को जेल से निकलवाना

चाहते थे; जिन्हें उन्होंने उत्तर-पश्चिम सीमान्त प्रान्त के दो प्रतिनिधियों में शामिल किया था। सीमान्त के शेर, और पठानों के सबसे लोकप्रिय नेता गफ्फार खान ने आगे चलकर कांग्रेस का साथ दिया तो सीमान्त गाँधी कहलाए।

जवाहर लाल व मोतीलाल को लार्ड इरविन ने उनकी इच्छा के अनुसार पूना की यरवदा जेल में भेज दिया था। वहाँ उनकी बातचीत गाँधी जी से हुई। वल्लभ भाई पटेल और सरोजिनी नायडू सहित कांग्रेस कार्य समिति के कई नेता इस बैठक में भाग लेने वहाँ पहुँचे।

15 अगस्त के दिन जेल में कैद कांग्रेसी नेताओं ने सप्रू और जयकर को लिखा—

"हमारे देश के लिए सम्मानजनक समझौता करने का सही समय अभी नहीं आया है।

यरवदा जेल में हुई सर्वदलीय बैठक के बारे में छपी खबर पढ़कर जिन्ना गोलमेज़ सम्मेलन के बारे में चिन्तित हो उठे थे। जिन्ना व मुस्लिम लीग अपनी मर्ज़ी से यरवदा जेल में हुई उस बैठक में सम्मिलित हुए थे।

19 अगस्त को जिन्ना ने इरविन को एक आग्रहपूर्ण पत्र में लिखा था—

"आपको भारतीय राष्ट्रवादियों से सख्ती व सुनिश्चितता के साथ पेश आना चाहिए।

जिन्ना की नज़र में गाँधी जी का मस्तिष्क असंतुलित था और जवाहर लाल नेहरू एक खतरनाक गतिवादी थे। समझौता वार्ता से पूरी तरह अलग हो चुके जिन्ना को सिर्फ लंदन में होने वाले गोलमेज़ सम्मेलन से ही उम्मीद थी।"

इधर इरविन ने कांग्रेस के प्रस्तावों पर विचार करने से साफ मना कर दिया था।

□



# पहला गोलमेज सम्मेलन

4 अक्टूबर, सन् 1930 ई० के दिन जिन्ना पेसेफिक एण्ड ओरिएन्ट कम्पनी के जहाज़ 'वायसराय ऑफ इंडिया' द्वारा लंदन के लिए रवाना हो चुके थे।

सन 1930 ई० में 12 नवम्बर को हाउस ऑफ लार्ड की रॉयल गैलरी में सम्राट जार्ज पंचम ने भारत सम्बन्धी पहले गोलमेज़ सम्मेलन का उद्‌घाटन किया। इस सम्मेलन में भारत के 58 प्रतिनिधि आमन्त्रित किए गए थे; जिनमें जिन्ना, आगा खान, सप्रू व जयकर भी उपस्थित थे। इनके अलावा देशी रियासतों के सोलह प्रतिनिधि में पटियाला, भोपाल, बड़ोदरा तथा अलवर के राजा ने भव्य हरी पगड़ियाँ पहन रखी थीं।

प्रधानमन्त्री मेंकडोनाल्ड, मिस्टर बेन तथा लार्ड सैकी चांसलर ऑफ द लार्ड्स की अगुवाई में अंग्रेजों की तरफ से अधिकारियों का दस्ता मौजूद था। पूर्व वायसराय हार्डिंग व रीडिंग के साथ-साथ ब्रिटिश राष्ट्रमंडल के अधिकांश स्वतन्त्र उपनिवेशों के प्रधानमन्त्री भी मौजूद थे।

जिन्ना को वहाँ जिस बात का डर था वही हुआ। सम्मेलन का स्वरूप कुछ ज्यादा ही बड़ा था। पहले सत्र में तीन भाषण हुए। दूसरे दिन छः भाषण हुए और तीसरे दिन चार हुए।

इन लम्बे-लम्बे भाषणों में इस तरह की बेकार बातें और बहसबाजी हुई कि सभापति ने जिन्ना को बस दस मिनट से ज्यादा बोलने की इजाजत देने से साफ इन्कार कर दिया था।

20 नवम्बर को जिन्ना सिर्फ दस मिनट तक बोले किन्तु उन्होंने सीधे लार्ड पील को ही सम्बोधित किया। उन्होंने जोर देकर कहा था—

"साइमन कमीशन की रिपोर्ट में कोई दम नहीं रह गया है।" जिन्ना ने कहा— "मैं बेहिचक यह स्वीकार करने के लिए तैयार हूँ कि आप लोगों की भारत में व्यापारिक और राजनितिक दोनों तरह की जबरदस्त दिलचस्पी है, इसलिए मेरी दृष्टि में आप एक ऐसे पक्ष हैं जिसकी भारत के निर्माणाधीन संविधान में गहरी रुचि है किन्तु मैं चाहता हूँ कि आप भी इस बात को इतना ही मानें कि हमारी दिलचस्पी आपसे ज्यादा है और हमारा हित आपसे भी ज्यादा खास है; क्योंकि आपके लिए तो यह सिर्फ वित्तीय, व्यापारिक और राजनीतिक प्रश्न है मगर हमारे लिए तो सब कुछ है। इस समय इस गोलमेज़ पर चार पक्ष बैठे हैं। एक ब्रिटिश पक्ष है, एक देशी रियासतों का पक्ष है, हिन्दुओं और मुसलमानों का पक्ष है।

जिन्ना, जो कभी हिन्दू-मुस्लिम को एक पक्ष मानते थे, वे अब उन्हें दो पक्ष समझने लगे थे। जिन्ना ने उन्हें फिर से चेतावनी दी—

"अगर यह गोलमेज़ सम्मेलन भारतीय आकांक्षाओं के लिए संतोषजनक किसी



*पहला गोलमेज सम्मेलन*

समझौते पर नहीं पहुँच पाया तो सम्मेलन से अलग रखे गए तमाम लोगों के साथ साथ करोड़ों मुसलमान भी असहयोग आन्दोलन में शामिल होने में अपना लाभ देखने लगेंगे।

इसके बाद जिन्ना ने आधारभूत सिद्धान्त का जिक्र करके उम्मीद जाहिर की कि सम्मेलन के ब्रिटिश भागीदार इन उसूलों को सर्वोच्च प्राथमिकता देंगे। जिन्ना ने मेंकडोनाल्ड को भी तीखे स्वर में उनका वायदा याद कराया था।

जिन्ना को संघीय ढांचे से सम्बन्धित समिति का सदस्य बनाया गया जिसके अध्यक्ष लार्ड सैकी थे। जिन्ना व शम्मी ने इससे पहले ही स्पष्ट कर दिया था कि तब तक कोई भी संविधान सफल नहीं हो सकता जब तक उसमें मुसलमानों तथा अन्य अल्पसंख्यक को सुरक्षा का एहसास देने वाले प्रावधान शामिल न हों।

इरविन को हेली ने सम्मेलन द्वारा हिन्दू-मुस्लिम विवाद सुलझाने में मिलने वाली प्रत्येक नाकामी की जानकारी दी। ये प्रयास 4, 9 तथा 15 दिसम्बर को किए गए थे। अन्तिम जानकारी प्रधानमन्त्री ने केन्द्रीय हाऊस चैकर्स में दी थी।

चैकर्स में हुई बैठक की असफलता से रामसे इतना हताश हुए कि उन्होंने लार्ड विलिंग्टन से सहायता माँगने का निर्णय कर लिया, जो उस समय कनाडा के गवर्नर जनरल थे। रामसे की इच्छा थी कि विलिंग्टन भारत के बारे में एक नई व कठोर कार्य दिशा सूत्रबद्ध करने में उनकी सहायता करे।

इस प्रकार जिन्ना के विरोधी रहे विलिंग्टन को सन् 1931 से सन् 1936 ई० तक के लिए भारत की बागडोर सौंप दी गई थी। लार्ड विलिंग्टन ने 18 अप्रैल सन् 1931 को वायसराय पद की शपथ ली थी।

□



# लंदन प्रवास

14 फरवरी सन् 1937 ई० में रामसे से आगा खान, जिन्ना तथा शम्मी ने भेंट करके चेतावनी दी—

"अगर सरकारी नीति से सम्बन्धित उनके बयान के साथ-साथ समुदायों के लिए सन्तोषजनक सुरक्षा उपायों की घोषणा न की गई तो अधिकतर मुसलमान प्रतिनिधि सम्मेलन की उपलब्धियों से खुद को अलग कर लेंगे।"

उन दिनों रामसे मेंकडोनाल्ड जिन्ना का अधिक समर्थन पाने की कोशिश कर रहे थे। जनवरी के बीच में हुए सम्मेलन के अन्तिम प्लेनरी सत्र की पूर्व संध्या पर मुसलमानों ने एक स्वर से अल्पसंख्यक उपसमिति के सामने अपनी अन्तिम पेशकश रखी।

इसमें पंजाब में हिन्दू-सिखों की अपेक्षा मुसलमानों की समकक्षता तथा बंगाल में हिन्दुओं के मुकाबले समकक्षता का दावा किया था, लेकिन इन दोनों वाजिब माँगों पर पंजाबी सिख व बंगाली हिन्दू राज़ी नहीं थे।

जिन्ना मुस्लिम लीग को इकबाल व उनके पंजाबी दोस्तों की जिम्मेदारी पर छोड़ने का मन बना चुके थे। जिन्ना के मन में केवल एक ही महत्वकांक्षा शेष रह गई थी। वे किसी भी राजनीतिक दल के जरिए ब्रिटिश संसद में प्रवेश करना चाहते थे इसलिए उन्होंने अपनी बहन फातिमा और बेटी दीना को भी अपने साथ लंदन रहने के लिए बुला लिया। जिन्ना एक आरामदेह मकान की तलाश में जुट गए। उन्होंने हेम्स्टीड के वेस्ट हीम रोड पर आठ एकड़ के बाग व चरागाह के बीच बने एक आवास का चयन किया।

21 मार्च, शनिवार की सुबह लार्ड विलिंग्टन द्वारा वायसराय पद की शपथ लेने के बाद जिन्ना विलिंग्टन से मिलने एबी रोड स्थित उनके निवास स्थान पर पहुँचे। विलिंग्टन ने उनसे भेंट करके काफी खुशी जाहिर की। जिन्ना ने एक बार फिर मुसलमान पक्ष रखा और नए वायसराय को अपने 14 सूत्रों में जोड़ी गई नई माँगे बताई। विलिंग्टन ने उनकी माँगों पर विचार करने का आश्वासन दिया।

आरम्भ में जिन्ना को पूरी उम्मीद थी कि उन्हें लेबर पार्टी के रूप में संसद में प्रवेश करने का अवसर मिल जाएगा किन्तु जिन्ना की आशा के विपरीत प्रधानमन्त्री रामसे मेंकडोनाल्ड अपने पूर्व मित्र की राजनीतिक महत्वकाँक्षाओं का सम्मान करने के लिए राज़ी नहीं थे।

जून माह तक हालात यह हो गए थे कि उन्होंने जिन्ना से अपने सम्बन्ध पूरी तरह तोड़ लिए। जून का महीना आते-आते जिन्ना टोरी पार्टी में अपने निर्वाचित क्षेत्र की तलाश करने लगे। लेबर पार्टी से उम्मीद छोड़कर उन्होंने आगा खान से मदद माँगी; किन्तु जिन्ना को कोई ऐसा निर्वाचित क्षेत्र नहीं मिला जो उन्हें उम्मीदवार

के रूप में स्वीकार करने के लिए राज़ी हो जाता।

सन् 1931 ई० में अगस्त माह को हुए इन संक्षिप्त दौरों में जिन्ना लखनऊ भी गए। वहाँ उन्हें अवध की मुख्य अदालत में एक बड़े जमींदार मुवक्किल की पैरवी करनी थी। इसी सिलसिले में उन्होंने लखनऊ विश्वविद्यालय की यूनियन में भाषण दिया। अपनी भारत यात्रा के दौरान जिन्ना शिमला भी गए थे और विधान सभा के पुराने साथियों से विचार विमर्श किया।

सिन्ध के मियां सर हाजी हारून ने उन्हें जानकारी दी कि जिन्ना की उपस्थिति उन्हें काफी खल रही है। संगठन में किसी प्रकार की एकजुटता या अनुशासन नहीं रह गया है। मद्रास की गैर-ब्राह्मण, जस्टिस पार्टी के नेता सर ए० पी० पात्रो ने भी जिन्ना को कुछ ऐसी जानकारी दी।

जिन्ना ने शिमला में विलिंग्टन से एक छोटी सी मुलाकात की थी। सितम्बर माह के आरम्भ में जिन्ना लंदन अपने घर आए। उन्होंने अपने नए पासपोर्ट में आवास स्थान में भारत के स्थान पर इंग्लैंड लिखवाया।

जब वे अपने संक्षिप्त दौरे से वापस लौटे, तब तक उनकी बहन फातिमा, दीना के साथ हैम्पस्टीड आ चुकी थी। उन्होंने दीना को पास ही के एक प्राइवेट स्कूल में दाखिल करवा दिया।

जिन्ना का दिल हर समय दीना की ओर से व्याकुल ही रहता था। वह दीना से उसी समय मिल पाते जब उसकी छुट्टियाँ होती थीं।

जिन्ना को नवम्बर माह में सन 1932 ई० को एच० सी० आर्मस्ट्रांग लिखित कमाल अतातुर्क की जीवनी 'ग्रे बोल' पढ़ने का मौका प्राप्त हुआ। उन्हें लगा कि तुर्की के महान आधुनिकतावादी नेता की जीवनी के हर पृष्ठ में अपना अक्स देख सकते हैं। दीना ने तो उनका नाम ग्रे बोलम ही रख दिया था।

सन् 1934 ई० में जिन्ना लंदन से वापस लौट आए।

□



# दूसरा गोलमेज़ सम्मेलन

दूसरा गोलमेज़ सम्मेलन 7 सितम्बर, सन् 1931 ई० में शुरू हुआ। दूसरे गोलमेज़ सम्मेलन की संघीय ढांचे से सम्बन्धित कमेटी का सदस्य बनाने के लिए जिन्ना को भारत मन्त्री वेज़वुड बेन ने आमन्त्रित किया था; लेकिन पिछले साल की अपेक्षा इस कमेटी में जिन्ना की अहमियत काफी घट चुकी थी।



*दूसरा गोलमेज़ सम्मेलन*

इधर, इरविन द्वारा जेल से रिहा करा दिए जाने के बाद गाँधी जी लंदन में होने वाले दूसरे गोलमेज़ सम्मेलन में भाग लेने का मन बना चुके थे। 27 अगस्त की शाम तक उनकी इच्छा लंदन पहुँच जाने की थी।

दूसरे गोलमेज़ सम्मेलन में सबकी आंख जिन्ना की जगह गाँधी जी पर टिकी हुई थी, जो हर कमेटी में कांग्रेस की एकमात्र आवाज़ के रूप में बोल रहे थे, हर प्लेनरी सत्र में भी उन्हीं की आवाज़ गूंज रही थी। लार्ड सैंकी के सभापतित्व में इस कमेटी की बैठक 7 सितम्बर से 27 सितम्बर के बीच हुई।

अगले दिन मेंकडोनाल्ड ने अल्पसंख्यक कमेटी की पुनः बैठक की, जिसमें गाँधी जी भी सम्मिलित थे। यह बैठक 18 नवम्बर तक चली। 10 दिन बाद फिर से पूरा सम्मेलन सैंट पैलेस में प्लेनरी सत्र के रूप में आरम्भ हुआ।

अपनी सभी कोशिशों, भाषणबाजी और सैंकी, सप्रू, गाँधी, अम्बेडकर और जयकर जैसे नेकनियत नेताओं के होने पर भी दूसरा गोलमेज़ सम्मेलन पहले सम्मेलन की अपेक्षा बेहतर एकता कायम नहीं कर पाया।

जिन्ना का इस सम्मेलन में प्रश्न था—"कांग्रेस के इस दावे का क्या नतीजा निकलेगा कि वह मुसलमानों की भी प्रतिनिधि है? मुझे नहीं लगता कि इस सम्मेलन का कोई सुखद परिणाम निकलेगा।"

सम्मेलन के समापन भाषण का उपसंहार करते हुए प्रधानमन्त्री मेंकडोनाल्ड ने आंकलन किया—

"विगत दो महीनों में हुई चर्चाओं का फायदा यह हुआ कि वे समस्याएँ सामने आ गईं हैं जिनका हल हमें खोजना होगा।"

प्रधानमन्त्री ने अपनी सरकार के सकारात्मक और तत्काल कदम के रूप में उत्तर-पश्चिम सीमान्त प्रान्त को गवर्नर वाले प्रान्त का दर्जा देने और इसी के समान सिन्ध को भी पूर्ण प्रान्त के रूप में स्वीकार करने का ऐलान किया।

इससे मुसलमान व प्रतिनिधि मंडल को उनकी ताजा राजनीतिक रणनीति का औचित्य समझने में सहायता मिली; किन्तु यह अलग बात है कि सीमान्त गाँधी खान अब्दुल गफ्फार खान की अगुवाई में उत्तर पश्चिम सीमान्त ने अगले चुनावों में लीग के बजाए कांग्रेस का साथ देना ज्यादा पसन्द किया।

जिन्ना लंदन प्रवास में राजनीति को कम समय ही देते थे। उनका अधिकांश समय वकालत में ही बीतता था। जिसके चलते प्रिवी कौंसिल में जिन्ना की वकालत की धाक जल्दी ही जम गई; किन्तु उन्हें बेंच की सदस्यता के लिए कभी निमन्त्रित नहीं किया गया।



*लंदन में जिन्ना अपनी बहन फातिमा जिन्ना के साथ*

दूसरे गोलमेज़ सम्मेलन के अन्त में प्रधानमत्री द्वारा दिए गए आश्वासन के अनुसार अगस्त सन् 1932 ई० में सरकार ने साम्प्रदायिक प्रश्न सम्बन्धी निर्णय संसद में पेश किया। विलिंग्टन भी लगातार दबाव डाल रहे थे कि इस सम्बन्ध में जल्द कारवाई की जानी चाहिए जिससे भारत के मुसलमानों को अनुकूल किया जा सके। इसके तहत पंजाब में सरकार ने मुसलमानों को इक्यावन प्रतिशत के आस-पास और बंगाल में पचास प्रतिशत से कम सीटों का प्रावधान किया। इस तरह शक्ति सन्तुलन यूरोपीय विशेष हितों के हाथों में पहुँच गया।

इसके अतिरिक्त मुसलमानों के लिए पृथक निर्वाचक मंडल कायम रखे गए और हिन्दू बाहुल प्रान्तों में उन्हें आबादी के अनुपात में प्रतिनिधित्व दिया गया।

□



# तीसरा गोलमेज़ सम्मेलन

तीसरा गोलमेज़ सम्मेलन जनवरी सन् 1932 ई० में होना था। इस सम्मेलन में जिन्ना को न तो निमन्त्रित किया गया था और ना ही संसद की संयुक्त चयन समिति की सदस्यता दी गई।

जिन्ना की तरह इस सम्मेलन से गाँधी जी व नेहरू भी बाहर थे, क्योंकि कांग्रेस के दोनों शिखर नेता अंग्रेजों की जेल में बन्द थे।

इस सम्मेलन का समापन सन् 1932 की क्रिसमस की पूर्व संध्या को हुआ इस मौके पर भारत मन्त्री सर हेनरी ने घोषणा की–

"मुसलमानों के लिए उनकी माँग के अनुरूप अखिल भारतीय संघीय केन्द्र में साढ़े तैतीस प्रतिशत प्रतिनिधित्व सुनिश्चित किया जाएगा। इसके साथ ही उड़ीसा व सिन्ध ब्रिटिश भारत के नए प्रान्त होंगे।"

सन् 1933 ई० में कैम्ब्रिज में पंजाब के पैंतीस वर्षीय मुस्लिम विद्यार्थी चौधरी रहमत अली ने एक पर्चा छपवाया, जिसका शीर्षक था–'आर वी टु लिव ओर ऐंडिंग फोरएवर? (हमारा वजूद कायम रहेगा या फिर हमेंशा के लिए खत्म हो जाएगा) रहमत अली का दावा था कि वह पाकिस्तान नेशनल मूवमेंट का संस्थापक है। रहमत अली द्वारा पाकिस्तान के तीन करोड़ मुसलमानों की तरफ से हिन्दू-मुस्लिम महा समस्या का प्रस्तावित समाधान लिखा गया था। ये मुसलमान भारत की पाँच उत्तरी इकाइयों पंजाब उत्तर पश्चिम सीमान्त प्रान्त यानि अफगान, कश्मीर, सिन्ध व ब्लूचिस्तान में रहते थे।

पर्चे में इन इलाकों के मुसलमानों द्वारा की गई शेष भारत से ही भिन्न पृथक राष्ट्रीय दर्जे को मान्यता देने की अटल माँग दृष्टिगोचर हो रही थी। इसमें आग्रह किया गया था कि इन प्रान्तों को अपना अलग संघीय प्रबन्ध करना चाहिए। उनकी धरती पर शान्ति नहीं हो सकती, अगर हम मुसलमान धोखे से हिन्दू दबदबे वाले उस संघीय प्रबन्ध में फंसा दिए गए, जहाँ न तो हम अपने भाग्य के खुद स्वामी होंगे और ना ही जहाँ हमारी चेतना की बागडोर हमारे ही हाथों में आ जाएगी।

जैसे ही 'पाकिस्तान' की माँग वाला यह पर्चा प्रकाशित हुआ, संसद की संयुक्त समिति में उसकी गूँज सुनाई पड़ी। प्रस्तावित संवैधानिक सुधारों पर होने वाली गवाहियों में कई अनुदार पंथी ब्रिटिश अधिकारियों ने इसे एक और स्पष्ट माँग बताया।

भारत सरकार के पूर्व गृहमन्त्री और संसद के टोरी सदस्य सर रेजीनाल्ड भारतीय संवैधानिक सुधारों पर लिन लिथगो की संयुक्त समिति के सदस्य थे; उन्होंने 1 अगस्त सन 1933 ई० को उत्तर-पश्चिम सीमा प्रान्त के अब्दुल्ला यूसुफ अली से पूछा–

"क्या पाकिस्तान के नाम से प्रान्तों का एक महासंघ बनाने की योजना बनाई जा रही है।"

उन्होंने जवाब दिया—"मैं समझता हूँ यह केवल एक छात्र की योजना है वह कोई जिम्मेदार व्यक्ति नहीं है।"

लेकिन सर रेजीनाल्ड को पाकिस्तान के विचार की जानकारी थी। वह इस योजना के प्रति अधिक आशान्वित थे। यह नहीं कहा जा सकता कि जिन्ना को पाकिस्तान बनाने की योजना की उस समय जानकारी थी या नहीं, किन्तु इस माँग के बाद जिन्ना भारत वापसी पर विचार करने लगे थे जबकि वह पहले भारत लौटने के लिए जरा भी ख़्वाहिशमन्द न थे।

□



# पुनः राजनैतिक सक्रियता

जिन्ना सन् 1934 ई० में लौटकर बम्बई आ गए। 4 मार्च सन् 1934 ई० को मुस्लिम लीग ने नई दिल्ली में अपनी बैठक करके साल भर हो चुका था। एक बड़ा संगठनिक विभाजन समाप्त करने का फैसला किया। एकीकृत पार्टी की बागडोर जिन्ना को सौंप दी गयी।

नई दिल्ली में कौंसिल के साथ उनकी बैठक 2 अप्रैल को हुई। जिन्ना ने एसोसिएट प्रेस के एक इन्टरव्यु में कहा था—

"लीग स्वस्थ है, मैं इस परिणाम पर पहुँचा हूँ कि भारत के सर्वाधिक महत्वपूर्ण हितों की सेवा करने के मामले में मुसलमान किसी दूसरे समुदाय से पीछे नहीं रहेंगे। श्वेत-पत्र की निन्दा करने के लिए किसी विशेष दलील की जरूरत नहीं है। श्वेत पत्र के प्रस्तावों को पढ़ लेना ही काफी है।"

जिन्ना ने मुसलमान समर्थन को इधर से उधर ले जाने वाली अस्थिर रणनीति अपनाए रखी। जिसके तहत वे कभी उसे कांग्रेस की तरफ भी ले जाते थे। उनका सत्ता हस्तानान्तरण के लिए सौदेबाजी का रास्ता बहुत लम्बा और कठिन था।

लेकिन इस दौरान जिन्ना इस प्रभावी दूरगामी तकनीक से हर मुकाम पर मुसलमानों के लिए बड़ी-बड़ी रियासतें हासिल करने में सफल रहे। वह उन दिनों लंदन में थे, किन्तु बम्बई शहर के मुसलमानों द्वारा उन्हें नई दिल्ली की विधान सभा में अपनी नुमाइन्दगी के लिए चुना गया। इस बार उन्हें विधान सभा की सदस्यता निर्दलीय नेता के रूप में प्राप्त हुई थी।

सन् 1934 ई० दिसम्बर माह को समुद्री मार्ग द्वारा वे लंदन वापस आ गए और सन् 1935 ई० के जनवरी माह में दिल्ली पहुँचे। इसके बाद उन्होंने कांग्रेस के तत्कालीन नेता डॉ० राजेन्द्र प्रसाद से मुलाकात की। राजेन्द्र प्रसाद के अनुसार जिन्ना से उनकी वार्ता निष्फल हुई। इस प्रकार एक मुसलमान नेता जिन्ना, कांग्रेस से पूरी तरह कट गए।

फरवरी, सन् 1935 ई० में जिन्ना ने नई दिल्ली की विधान-सभा में भारतीय संवैधानिक सुधारों पर बहस के शुरू में ही एक संशोधन प्रस्ताव रखा। इस प्रस्ताव के तीन भाग थे।

इसके बाद जिन्ना, भारत के अव्वल सांसद के रूप में उभरकर सामने आए। जिन्ना ने बहस के दौरान जो दलीलें दीं उनका परिणाम यह निकला कि सदन ने 15 के मुकाबले 64 वोटों से उनके संशोधन का पहला हिस्सा पारित किया।

अप्रैल माह सन् 1935 ई० में जिन्ना एक बार फिर लंदन पहुँच गए। वहाँ उन्होंने छः महीने तक अपनी वकालत को पूरा-पूरा समय दिया। फलस्वरूप उनकी

वकालत खूब चमक उठी।

चुनाव में मुस्लिम लीग की मदद करने के लिए जिन्ना अक्टूबर सन् 1935 ई० में भारत लौट आए। इस चुनाव के जरिए भारत सरकार अधिनियम सन् 1935 ई० के तहत गठित भारत की प्रान्तीय और केन्द्रीय विधायिकाओं में नए प्रतिनिधि चुने जाने थे। यह अधिनियम, 2 अगस्त, सन् 1935 ई० को कानून के रूप में पारित हुआ।

अखिल भारतीय महासंघ बनाने का प्रावधान करने वाले इसके हिस्से को कार्यान्वित नहीं किया गया था।

सन् 1935 ई० में नई दिल्ली विधान-सभा में अखिल भारतीय महासंघ बनाने के प्रावधान की जिन्ना ने सबसे ज्यादा आलोचना की। इधर, गाँधी जी ने विगत वर्ष के सितम्बर माह में कांग्रेस से रिटायरमेंन्ट लेकर सर्वोदय समाजवाद लाने के लिए छुआछूत निवारण और ग्राम सुधार कार्य शुरू कर दिया था।

सन् 1935 ई० के सितम्बर माह में पंडित जवाहरलाल नेहरू जेल से रिहा हुए थे और उन्हें क्षय रोग से लड़ रही अपनी पत्नी कमला के पास विदेश जाने की छूट मिल गई। कमला उन दिनों जर्मनी में थीं।

28 फरवरी सन् 1936 ई० को कमला का देहान्त हो गया। तब तक नेहरू विदेश में ही रहे। भारत लौटने पर राजेन्द्र प्रसाद के हाथ से कांग्रेस की अध्यक्षता एक बार फिर उनके हाथ आ गई।

□



# जिन्ना का चार सूत्रीय मसविदा

अप्रैल सन् 1936 ई० में मुस्लिम लीग ने बम्बई में बैठक की। इस जलसे से लीग एक बिखरी हुई छोटी सी पार्टी से जन-आन्दोलन में बदलने की ओर धीरे-धीरे बढ़ी।

पूरे देश में जिला स्तर पर शाखाएँ खुलने लगीं। जिन्हें, चुनाव में खड़े होने वाले उम्मीदवार नामजद करने का हक दिया गया। इन शाखाओं ने लीग का सन्देश दक्षिण एशिया के प्रत्येक मुसलमान आबादी वाले नगर और गाँव में फैलाया। साथ ही आवश्यकता पूर्ति के लिए लीग कौंसिल ने पाँच लाख का आरम्भिक कोष भी जमा किया। अलीगढ़ व अन्य विश्व विद्यालयों से छात्रों को स्वयं सेवक के रूप में भर्ती किया गया।

जिन्ना ने एक चार सूत्रीय मसविदा तैयार किया उसके आधार पर जिन्ना सभी राजनीतिक पार्टियों के साथ भारत में एक गोलमेज़ सम्मेलन करना चाहते थे। ये चार सूत्र इस प्रकार थे—

पहला—मौजूदा शासन व्यवस्था की जगह व्यस्क मताधिकार पर आधारित एक लोकतान्त्रिक उत्तरदायी सरकार की स्थापना।

दूसरा—सभी काले दमनकारी कानूनों की वापसी, बोलने की स्वतन्त्रता का हक और प्रेस व संगठन को स्वतन्त्रता देना।

तीसरा—किसानों को तुरन्त आर्थिक सहायता, शिक्षित और अशिक्षित बेरोजगारों को राजकीय प्रावधान, आठ घंटे का कार्य दिवस और मजदूरों के लिए न्यूनतम मजदूरी का निर्धारण।

चौथा—मुफ्त अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा का प्रावधान। जिन्ना का विचार था कि संवैधानिक आन्दोलन के जरिए ही अंग्रेजों पर इस योजना को बदलने के लिए दबाव डाला जा सकता है, क्योंकि हथियार बन्द क्रान्ति करना असम्भव है और असहयोग आन्दोलन असफल हो चुका है।

लीग को सुदृढ़ बनाने, सौदेबाजी करने की उसकी ताकत और बेहतर बनाने की तथा चुनाव लड़ने की तैयारी के उद्देश्य से, बम्बई की बैठक में जिन्ना को नए केन्द्रीय संसदीय बोर्ड तथा उससे सम्बन्धित बोर्डो की नियुक्ति तथा अध्यक्षता का हक दिया गया। मई के उत्तरार्ध तक जिन्ना 54 प्रमुख मुसलमान नेताओं को केन्द्रीय संसदीय बोर्ड का सदस्य बनाने को तैयार कर दिया। इस बोर्ड की पहली बैठक लाहौर में 8-11 जून सन् 1936 ई० में हुई।

जिन्ना ने अपनी तरफ से प्रयास करके डॉ० इकबाल का समर्थन प्राप्त कर लिया।

इसी तरह इसी वर्ष जिन्ना ने इस्पहानी को लीग की केन्द्रीय संसदीय बोर्ड

की सदस्यता ग्रहण करने का निमन्त्रण दिया, जिसे पाकर इस्पहानी बहुत हैरान हुए, किन्तु उन्होंने यह निमन्त्रण तुरन्त स्वीकार कर लिया।

मिर्जा अबुल हसन इस्पहानी की जिन्ना से प्रथम भेंट सन् 1920 ई० में, कैम्ब्रिज में अपना पहला सत्र बिताते समय हुई थी।

वह कलकत्ता के बहुत रईस वाणिज्यिक और वित्तीय घराने एम० एम० इस्पहानी लिमिटेड के उत्तराधिकारी थे।

सन् 1936 ई० में बंगाल के मुसलमानों की निष्ठा प्राप्त करने के लिए मुस्लिम लीग के मुकाबले में, ढाका के नवाब की यूनाइटेड मुस्लिम पार्टी और फजलुल हक की कृषक प्रजा समिति, नामक दो पार्टी खड़ी थी। नवाब ने कलकत्ता के टाउन हॉल में अपनी पार्टी का तीन दिवसीय अधिवेशन अगस्त के शुरू में किया। लेकिन अबुल हसन और उनके दोस्तों ने उसमें झगड़ा खड़ा कर दिया।

यह विवाद इतना बढ़ा कि पूरा सम्मेलन ही भंग हो गया। इस विवाद को निपटाने के लिए जिन्ना को बुलाया गया। वे एक हफ्ते बाद कलकत्ता पहुँचे। जिन्ना ने टाउन हॉल में बंगाली नेताओं की एक मीटिंग को सम्बोधित किया। नवाब अपनी पार्टी को लीग में विलय करने के लिए राज़ी हो गए।

फजलुल हक भी तैयार थे तथा जिन्ना ने उन्हें केन्द्रीय संसदीय बोर्ड के लिए नामजद भी कर दिया, मगर एक सितम्बर तक उनका इरादा बदल गया। हक ने बंगाल की मुस्लिम सीटों पर अपने उम्मीदवार खड़े किए और जिन्ना की, लीग के बराबर की सीटें जीतीं।

□



# चुनाव मैदान में मुस्लिम लीग

जनवरी-फरवरी माह, सन् 1937 ई० में हुए चुनावों में लीग के उम्मीदवारों का घोषणा-पत्र भी लगभग वैसा ही था जैसा कांग्रेस का। इनमें दूरगामी चरित्र वाली राष्ट्रवादी माँगे भी शामिल की गईं थीं।

जवाहरलाल नेहरू की भारतीय गरीबी को देखकर समाजवादी उपायों में आस्था बढ़ती जा रही थी। मगर जिन्ना की रुचि अचल सम्पत्ति में ज्यादा बढ़ रही थी। उनकी जायदादों की सूची में निरन्तर बढ़ोत्तरी हो रही थी। पर, भारत बंटवारे के बाद जिन्ना की तमाम निजी सम्पत्ति भारत में ही रह गई।

उधर, पाकिस्तान नेशनल मूवमेंन्ट के संस्थापक रहमत अली ने अंग्रेज लार्डो से एक अपील की। 7 जुलाई, सन् 1935 ई० को रहमत अली ने लिखा—

"पाकिस्तान की जनता की तरफ से इस नाजुक पल में मैं श्रीमान से अपील करना चाहता हूँ कि प्रस्तावित महासंघ में पाकिस्तान को जबरन मिला देने के खिलाफ चल रहा हमारी किस्मत का फैसला करने वाली जद्दोजेहद के साथ श्रीमान हमदर्दी और समर्थन रखते हैं। भारत की संघीय योजना पर आधारित गवर्नमेंन्ट ऑफ इंडिया एक्ट के कारण पाकिस्तान के राष्ट्रीय जीवन में भारी संकट पैदा हो गया है। एक सर्वोच्च मसला सामने आ गया है जो पाकिस्तान के राष्ट्रीय भविष्य के लिए जीवन मौत का मसला है।"

कैम्ब्रिज के केन्द्र से, उसके आन्दोलन को अच्छी खासी मदद मिल रही थी। उस समय तक जिन्ना का रहमत अली से कोई सम्बन्ध नहीं था। लेकिन धीरे-धीरे उसके कदम उसी तरफ बढ़ रहे थे।

खिलाफत आन्दोलन के दौरान जमायत का गठन हुआ। चुनाव में जमायत के संयुक्त प्रान्त में मुस्लिम कांफ्रेस पार्टी का विलय करके 'मुस्लिम यूनिटी बोर्ड' के रूप में चुनाव लड़ा। इसके मन्त्री खलीकुज्जमा और उनके बोर्ड के सदस्य, फरवरी सन् 1937 ई० में दिल्ली में जिन्ना से मिले। जिन्ना ने सिर्फ एक माँग रखी, 'यूनिटी बोर्ड' के सभी उम्मीदवार मुस्लिम लीग के नाम पर चुनाव लड़ेंगे।'

जिन्ना का राजनीतिक दांव, साल के अन्त में काफी लाभदायक सिद्ध हुआ। पूरे भारत में लीग ने कुल 109 सीटें प्राप्त कीं। हालांकि कांग्रेस न 716 सीटें प्राप्त की। लेकिन उसमें मुसलमान उम्मीदवार कुल 26 थे। यह कांग्रेस का कमजोर पहलू था।

सन् 1937 ई० के चुनाव में नेहरू ने मुस्लिम लीग तथा साम्प्रदायिक समस्या को गम्भीरता से न लेने की गलती कर दी।

मुस्लिम लीग, संयुक्त प्रान्त की विधायिका में अलग गुट की तरह सक्रिय

रहना चाहती थी। किन्तु कांग्रेस इसके लिए राज़ी नहीं थी। कांग्रेस ने लीग को सिर्फ मुसलमानों का गुट बताकर पूछा–

"मुस्लिम लीग का लक्ष्य क्या है?"

जिन्ना की ज़िन्दगी का यह एक महत्वपूर्ण मोड़ था। मार्च माह में नेहरू ने कांग्रेस की अध्यक्षता करते हुए, दिल्ली में राष्ट्रीय सम्मेलन बुलाया। इसमें तय किया जाना था कि अप्रैल सन् 1937 ई० को नया संविधान लागू होने के पश्चात् कांग्रेस के जीते हुए उम्मीदवारों को प्रान्तीय सरकारों में हिस्सा लेना है अथवा नहीं।

नेहरू कांग्रेस कार्य समिति को सदस्यों व गाँधी जी के कहने पर संविधान को आजमाने का फैसला कर लिया गया किन्तु सम्मेलन में मुस्लिम लीग अथवा किसी भी गैर-कांग्रेस पार्टी के विजयी उम्मीदवारों को सरकार बनाने में शामिल करने से इन्कार कर दिया।

इस बात की खलीकुज्जमा को आशा थी कि संयुक्त प्रान्त का शासन चलाने के लिए कांग्रेस-लीग गठजोड़ सरकार बनेगी, जिसमें वह खुद भी शामिल होंगे। किन्तु ऐसा नहीं हुआ।

कांग्रेस कार्यसमिति में मौलाना अबुल कलाम आजाद अकेले मुसलमान सदस्य थे, उन्होंने सन् 1936 ई० की मई माह के मध्य में जमायत के उलेमाओं को अपनी तरफ मिला लिया।

इस प्रकार अबुल कलाम, नेहरू की कृतज्ञता व विश्वास का पात्र बनते चले गए। आज़ाद की राजनीतिक गद्दारी ने उन्हें जिन्ना की नज़रों में गिरा दिया। जिन्ना ने कहा–"यह तो पीठ में छुरा भोकना है।"

खलीकुज्जमा को भी, अबुल कलाम ने कांग्रेस में मिलाने की पूरी कोशिश की मगर सफल नहीं हुए।

□



# जिन्ना का भारत विभाजन की ओर पहला कदम

सन् 1937 ई० के अक्टूबर माह में लीग का अधिवेशन लखनऊ में होना था। उस दौरान जिन्ना की तबियत कुछ अधिक ही खराब थी। उन्हें जबरदस्त खाँसी की शिकायत थी। दरअसल उनके फेफड़े खराब हो चुके थे।

ऐसी स्थिति में भी जिन्ना 13 अक्टूबर, सन् 1937 ई० की शाम को लखनऊ पहुँचे। स्टेशन पर खलीकुज्जमा और महमूदाबाद ने लीग के कार्यकर्ताओं के साथ जिन्ना का स्वागत किया और भारी जुलूस निकाला। इसी दौरान एक स्थान पर लीग के कार्यकर्ताओं से कुछ गर्म मिजाज कांग्रेसियों की झड़प हो गई।

लखनऊ पहुँचकर जिन्ना ने पंजाब के सर सिकन्दर हयात खान से भेंट की, और उनकी शक्तिशाली युनियनिस्ट पार्टी को लीग में मिलाने की शर्तें भी सुनीं। जिन्ना ने तहेदिल से उनकी शर्तों का स्वागत किया। उसी दिन फजलुल हक ने भी लीग का साथ देने का निर्णय कर लिया था। जिससे दक्षिण एशियाई मुसलमानों के निर्माणाधीन राष्ट्र में एक पूर्वी शाखा भी जुड़ गई।

शाम होते-होते जिन्ना समझ गए कि उन्होंने जिस दूसरे लखनऊ करार को जन्म दिया है, वह पूरे दक्षिण एशिया को विभाजित कर देगा।

उस रोज जिन्ना काफी जोश में थे। उन्होंने लखनऊ अधिवेशन के लिए एक खास पोशाक का चुनाव किया था, जो उनकी छवि से स्थानीय रूप से जुड़ गई। 15 अक्टूबर सन् 1937 ई० की सुबह उन्होंने लम्बी पंजाबी शेरवानी पहनी और सिर पर ईरानी भेड़ के चमड़े से बनी टोपी पहनी।

भविष्य में यह टोपी जिन्ना टोपी के नाम से प्रसिद्ध हो गई। इस पोशाक को पहनकर जिन्ना ने लीग के लखनऊ अधिवेशन की अध्यक्षता की। राजा महमूदाबाद के बाग में देश भर के प्रान्तों से पाँच हजार मुसलमान प्रतिनिधि आकर जमा हुए, जिनके सामने जिन्ना ने कहा–

"अखिल भारतीय मुस्लिम लीग का यह अधिवेशन इस पार्टी की जिन्दगी का अहम जलसा है।"

उसके बाद उन्होंने भाषण दिया, जिसमें मुसलमानों को एकजुट होकर आगे बढ़ना था। इस तरह जिन्ना, मुसलमानों के महान नेता बन गए।

सन् 1938 व 1939 ई० में जिन्ना को एक जन-आधारित पार्टी खड़ी करने की धुन सवार रही। लखनऊ अधिवेशन में लीग का संकल्प था–

"पूरी तरह स्वतन्त्र भारत की स्थापना के लिए ही लीग काम करेगी, जो आज़ाद लोकतान्त्रिक राज्यों का ऐसा महासंघ होगा, जिसमें मुसलमानों व अन्य अल्पसंख्यकों के अधिकारों की सुरक्षा की जाएगी।"

कांग्रेस पार्टी के गीत 'वन्दे मातरम्' की आलोचना करते हुए लीग का कहना था–

"यह गीत अपनी भावना में न केवल इस्लाम विरोधी और मूर्तिपूजक है, बल्कि

भारत में सच्चे राष्ट्रवाद के विकास के विरुद्ध भी है। हिन्दी के स्थान पर हम उर्दू को भारत की सार्वभौमिक भाषा बनाने की भरपूर कोशिश करेंगे।"

साथ ही लीग ने सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक सुधार करने का भी संकल्प किया।

दिसम्बर, सन् 1937 ई० में जिन्ना को कलकत्ता जाकर ऑल इंडिया मुस्लिम स्टूडेंटस फेडरेशन का उद्घाटन करना था। इसलिए उन्होंने लीग की कौंसिल बैठक वहीं करने का फैसला किया। मुस्लिम छात्रों का यह महासंघ लखनऊ मुस्लिम स्टूडेंट्स कांफ्रेस अलीगढ़ मुस्लिम यूनिवर्सिटी, यूनियन और ऑल बंगाल मुस्लिम स्टूडेंट्स लीग के मिश्रण से बना था।

फेडरेशन के संविधान में उसके उद्देश्यों में ये बातें शामिल की गईं कि—

"मुसलमान विद्यार्थियों में राजनीतिक चेतना पैदा करना और देश की आजादी के लिए की जा रही जद्दोजेहद में उचित भागीदारी के लिए उन्हें तैयार करना, मुसलमानों की सामाजिक आर्थिक बेहतरी के लिए काम करना, इस्लाम धर्म और उसे सुदृढ़ करने के लिए इस्लाम विरोधी शक्तियों का सामना करने के लिए इस्लामी संस्कृति व उसके अध्ययन को लोकप्रिय बनाना।"

सन् 1938, में जनवरी माह में बम्बई आने के कुछ दिन बाद जिन्ना अलीगढ़ गए। वहाँ छात्रों ने उनका शाही स्वागत किया। विश्वविद्यालय के परिसर में जिन्ना ने अत्यन्त जोशीले लहजे में भाषण दिया। अपने भाषण में जिन्ना ने मुसलमानों को ब्रिटिश सरकार के अतिरिक्त हिन्दू सरकार का गुलाम बताया। जिन्ना भारत में सभी मुसलमानों को अधिकारपूर्वक नुमाइन्दगी करने वाले एकमात्र राजनीतिक संगठन के रूप में, लीग को मान्यता दिलाना चाहते थे। साथ ही उनकी इच्छा भी थी कि गाँधी सभी हिन्दुओं के नेता के रूप में सामने आएँ। कांग्रेस को इन दोनो में से कोई बात पसन्द नहीं थी।

जिन्ना किसी भी हालत में कांग्रेस से समझौता करना नहीं चाहते थे, क्योंकि इस तरह भले ही जिन्ना को बम्बई व दूसरी प्रान्तीय सरकारों में कुछ सीटों का फायदा तो हो सकता था; मगर पाकिस्तान उनके हाथ से निकल जाता। इधर जिन्ना अपनी बीमारी को लेकर फिक्रमन्द थे। उनके फेफड़ों में आती खराबी की सूचना अगर फैल जाती तो उनकी पूरी योजना पर पानी फिर सकता था। इस कारण से उन्होंने अपनी बीमारी को छिपाए रखना मुनासिब समझा।

सन् 1938 ई० को, अप्रैल माह में कलकत्ता की फ्लडलाइटों की रोशनी में नहाए हुए एम्फी थिएटर में जिन्ना ने कहा था—

"कांग्रेस मुख्य रूप से एक हिन्दू संगठन है। मुसलमान कई बार स्पष्ट कह चुके हैं कि धर्म-संस्कृति, भाषा-विवाद कानून आदि के अतिरिक्त भी एक प्रश्न है, जो उनके लिए जिन्दगी और मौत का सवाल बन चुका था। उनका भविष्य व नियति इस बात पर निर्भर है कि उन्हें उनके राजनीतिक अधिकार और राष्ट्रीय जीवन में, देश में प्रशासन में उनकी जायदाद में से हिस्सेदारी मिलती है या नहीं।"

वे इस बात के लिए आखरी सांस तक लड़ते रहेंगे, हिन्दू राज स्थापित करने का कोई भी सपना और विचार कामयाब नहीं होने दिया जाएगा। मुसलमानों पर

कोई हावी नहीं हो सकता और जब तक उसमें जरा भी दम बाकी है वे हथियार नहीं डालेंगे।

मुस्लिम लीग व जिन्ना ने कांग्रेस की हुकूमत वाले प्रान्तों के मुसलमानों का समर्थन पाने के लिए उनकी लिखित व मौखिक शिकायतें जमा करनी आरम्भ कर दीं।

उन्हीं दिनों गाँधी जी ने एक तार भेजकर जिन्ना को एक बैठक करने का आग्रह किया। उस बैठक में अबुल कलाम भी आते। इसलिए जिन्ना ने गैर लीगी मुसलमान के साथ कोई भी बात करने से इन्कार कर दिया।

तब गाँधी जी अकेले, 28 अप्रैल, सन् 1938 ई० में बम्बई स्थित जिन्ना के निवास स्थान पर गए। दोंनों के बीच हुई तीन घन्टे की बातचीत का कोई हल नहीं निकला। उसके बाद कांग्रेस के नए अध्यक्ष सुभाष चन्द्र बोस ने भी जिन्ना से बातचीत की। उसका भी कोई हल नहीं निकला।

कांग्रेस और लीग के बीच बढ़ती हुई मतभेद की खाई सार्वजनिक रूप से स्पष्ट हो गई।

जिन्ना ने लीग की कार्यसमिति गठित कर 4 जुलाई, सन् 1938 ई० में उसकी बैठक की। लीग को कार्य-समिति को भी, कांग्रेस या ब्रिटिश लेबर पार्टी की तरह छाया मन्त्री-परिषद का रूप मिल गया था। जिन्ना केन्द्रीय विधान सभा के अधिवेशन के लिए अगस्त माह में शिमला पहुँचे। वहाँ 16 अगस्त, सन 1938 ई० मंगलवार की शाम को बम्बई व फिर बंगाल के पूर्व गवर्नर कार्यकारी वायसराय लॉर्ड ब्रेबोन ने जिन्ना व सिकन्दर हयात से बात की।

मुसलमान भारत के नेताओं के साथ हुई इस अहम खुफिया शिखर वार्ता ने सन् 1935 ई० के गवर्नमेंट ऑफ इंडिया एक्ट के केन्द्रीय प्रावधान यानी स्वायत्त ब्रिटिश प्रान्तों व देशी रियासतों का महासंघ बनाने के प्रावधान की किस्मत तय कर दी।

जिन्ना की मदद से सरकार को अपना कानून पारित करने के लिए पर्याप्त वोट मिल गए। सबसे अधिक अहम बात यह हुई कि युद्ध की पूर्व संध्या पर जिन्ना द्वारा की गई यह तरफदारी अंग्रेजों को भारत में अगले दस साल टिके रहने में मददगार सिद्ध हुई। कांग्रेस के सभी नेता यहाँ तक कि गाँधी जी भी ब्रिटेन के पक्ष में नहीं थे और जिन्ना को अंग्रेजों की तरफ सहायता के लिए हाथ बढ़ाने से भी नहीं रोक सकते थे।

सन् 1938 ई० को 8 अक्टूबर के दिन मुस्लिम लीग व नेताओं का कराची के जिला बोर्ड ने औपचारिक स्वागत किया। सर सिकन्दर हयात ने लीग का हरा झण्डा लहराया, जिस पर रुपहला चाँद तारा बना हुआ था। उसके बाद चाँदी की एक तश्तरी में उर्दू में लिखे एक अभिनन्दन-पत्र के साथ जिन्ना को कराची शहर की कुंजी भेंट की गई।

जिन्ना ने बहुगुटीय मुस्लिम विधान सभा के तमाम सदस्यों को एकजुट कर मुस्लिम लीग के संरक्षण में ले लिया। किन्तु उनमें से एक अल्लाबख्श, (सिन्ध की यूनाइटेड पार्टी के मुख्यमन्त्री) कांग्रेस में जा मिले। सन् 1943 ई० में अल्लाबख्श की हत्या कर दी गई, पर हत्यारा कभी नहीं पकड़ा गया।

□



# पाकिस्तान प्रस्ताव

10 दिसम्बर सन् 1943 के दिन दिल्ली के मुसलमान दैनिक 'अल-अमान' के सम्पादक मौलाना मजहरूद्दीन अहमद ने अपने अखबार में प्रस्ताव किया कि एक महान् नेता के रूप में, जिन्ना को मान्यता देने के लिए सभी मुसलमान उन्हें 'कायद-ए-आज़म' कहकर पुकारें। उसी माह के सालाना अधिवेशन के समय पटना सिटी के रेलवे स्टेशन पर लोगों की भीड़ ने पहली बार सार्वजनिक रूप से ऊँची आवाज़ में कायदे-ए-आज़म के सम्बोधन से जिन्ना का अभिनन्दन किया।

सन् 1938 ई०, 26 दिसम्बर को रात के समय जिन्ना ने भाषण में गाँधी जी पर कांग्रेस को बर्बाद कर देने का खुला आरोप लगाया। गाँधी जी पर इतना निन्दात्मक सार्वजनिक हमला जिन्ना ने पहली बार किया था। इसके अलावा जिन्ना ने मुसलमानों के एकजुट रहने पर जोर दिया। पटना में मुस्लिम लीग ने जिन्ना की बहन फातिमा जिन्ना के नेतृत्व में मुसलमान औरतों की एक उपसमिति गठित करने का निर्णय किया।

जिस समय लीग एकजुटता की तरफ बढ़ रही थी, उस समय कांग्रेस में सत्ता संघर्ष चल रहा था।

सन् 1939 ई० में, जनवरी माह में आगा खान के आग्रह पर गाँधी जी लीग से समझौता बातचीत करने को तैयार थे, किन्तु जिन्ना कांग्रेस के कट्टर विरोधी थे उनकी नज़रों में कांग्रेस हिन्दुओं की संरक्षक थी।

इधर पंजाब नेता सर सिकन्दर ने लॉर्ड लिनलियगो से कहा—"जिन्ना और उनके दोस्त कुछ भी कहें, पंजाब और बंगाल युद्ध प्रयास में सरकार का पूरा साथ दें।"

जब जिन्ना को इस बात का पता चला तो उन्होंने कहा—

"सर सिकन्दर, अकेले ही सरकार का मकसद पूरा नहीं कर सकते हैं। मेरे पास अपने साथियों को दिखाने के लिए कुछ सकारात्मक होना चाहिए, ताकि युद्ध प्रयासों के लिए मुसलमानों का समर्थक जुटाने में मदद मिल सके।"

जिन्ना ने लिनलिथगो से पूछा—"क्या आप कांग्रेस की बर्खास्तगी चाहते हैं? हाँ, उन्हें एकदम बर्खास्त कर देना चाहिए, तभी उन्हें अक्ल आएगी उनकी तरफ से आपको समर्थन कभी नहीं मिलेगा।" जिन्ना बोले।

सन् 1939 ई० में चार सितम्बर को वायसराय से बातचीत करते हुए जिन्ना ने कहा—

"मेर यकीन के मुताबिक भारत समस्या का एकमात्र राजनीतिक हल विभाजन में निहित है।"

सन् 1939 ई०, 1 नवम्बर को जिन्ना ने लिनलिथगो, गाँधी व राजेन्द्र प्रसाद से भेंट की। इसके बाद वायसराय आवास में साम्प्रदायिक समस्या पर शिखर वार्ता


*26 दिसम्बर, 1938 को भाषण देते जिन्ना*

हुई, जिसका कोई हल नहीं निकला, क्योंकि जिन्ना ने बहुत पहले ही भारत के मुसलमानों के लिए एक अलग और समान राष्ट्र के पक्ष में फैसला कर लिया था। हिन्दू-मुस्लिम एकता का वाहक पूरी तरह से पाकिस्तान के महान नेता के रूप में बदलता जा रहा था।

शनिवार, 23 मार्च की सुबह लाहौर अधिवेशन के बाद विषय समिति की बैठक हुई। तब तक सर सिकन्दर भारत विभाजन के विरुद्ध थे, लेकिन 23 मार्च की दोपहर तक सभी एकमत हो गए। भारतीय सभी अखबारों में अगले दिन छपा था–

"लाहौर में पारित किया गया प्रस्ताव 'एक पाकिस्तान' की माँग करता है।"

उसी दिन से यह प्रस्ताव 'पाकिस्तान प्रस्ताव' के नाम से प्रसिद्ध हो गया।

बम्बई में जिन्ना ने अपनी कार्य-समिति की बैठक मध्य जून सन् 1940 ई० में बुलाई। तीन दिन की बहस के बाद कार्यसमिति ने जिन्ना के विचारों को स्वीकार कर लिया। 27 जून सन् 1940 ई० को शिमला के वायसरीमाल पैलेस में जिन्ना ने लिनलिथगो के साथ लम्बी बातचीत की।

बातचीत के बाद ज्ञापन लिखा, जिसमें लाहौर के पाकिस्तान प्रस्ताव की पुष्टि करते हुए कहा गया कि वह भारत के मुसलमानों की सार्वभौमिक आस्था बन चुका था। वायसराय ने वायदा किया–

"भारत के मुसलमानों की स्वीकृति के बिना ब्रिटिश सरकार नए संविधान की कोई अन्तरिम या अंतिम योजना अंगीकार नहीं की जाएगी। इसके अतिरिक्त भारत को सभी संसाधनों का प्रयोग करने के लिए उचित कार्य किए जाने की सहमति भी दी। जिससे आंतरिक सुरक्षा व शान्ति तथा बाहरी आक्रमण रोका जा सके।"

जिन्ना ने आग्रह किया–"यह लक्ष्य तभी हासिल किया जा सकता है जब ब्रिटिश सरकार केन्द्र और अन्य सभी प्रान्तों के शासन में मुसलमानों को समान भागीदारी देने के लिए राज़ी हो। हिन्दुओं के बराबर संख्या में ही मुसलमानों को भी उसका सदस्य बनाया जाना चाहिए, अन्यथा लीग द्वारा चुने हुए मुसलमानों का परिषद् के अलावा सदस्यों के बीच बहुमत हो।"

इसी समय गाँधी ने प्रत्येक अंग्रेज के लिए एक खुला पत्र जारी किया, जिसमें युद्ध विराम की अपील की गई।

इस अपील पर लिनलिथगो ने जिन्ना को युद्ध प्रयासों में बाधा डालने वाला बताया। तब जिन्ना ने तीन तरफा आक्रमण करना शुरू किया। जिन्ना ने लिनलिथगो से कहा था—

"आपने मेरी आँखों में धूल झोंकी है।"

हिन्दुओं के बारे में जिन्ना ने कहा—"महाराष्ट्र के हिन्दू नेता मुसलमानों से जर्मन यहूदियों जैसा सुलूक करते हैं।"

"कांग्रेसी मुसलमान उनकी नज़र में महज दिखावटी प्रतीत होते हैं।"

फरवरी, सन् 1941 ई० के शुरू में शाह नवाज खान ने पाकिस्तान क्या है? विषय पर जिन्ना के लिए एक गोपनीय ज्ञापन तैयार किया। इसमें भारत के उत्तर-पश्चिमी और उत्तर-पूर्वी मुसलमान परिक्षेत्रों के प्रत्येक प्रान्त का जनसंख्या मूलक विश्लेषण था।

साथ ही भारतीय राज्यों के बारे में एक रणनीतिक सलाह भी दी गई थी। इसमें जिन्ना के सामने यह स्पष्ट हो गया कि पंजाब की भू-क्षेत्रीय सीमाओं का दोबारा समायोजन करना ही पड़ेगा।

13 अप्रैल, सन् 1941 ई० में लीग का सालाना अधिवेशन मद्रास के पीपुल्स पार्क में आरम्भ हुआ। लेकिन स्वास्थ्य ज्यादा खराब होने के कारण से जिन्ना उद्घाटन सत्र को सम्बोधित नहीं कर सके, किन्तु अगले दिन उन्होंने अपना अध्यक्षीय भाषण दिया और उसमें कहा—

"मुगल साम्राज्य के पतन के बाद, मेर विचार से न तो भारत के मुसलमान आज से पहले इतने अच्छे ढंग से संगठित ही थे और न ही उनमें इतना जोश था, साथ ही वे राजनीतिक रूप से सचेत भी न थे। हमारा अपना झण्डा मुसलमान भारत का अपना झण्डा स्थापित हो चुका है। हमें एक साधारण मंच स्थापित करने में सफलता मिल चुकी है। जिस पर समस्त भारत सर्वांग रूप से अपना और अपनी सम्पूर्ण एकता का प्रदर्शन कर रहा है। भारत के मुसलमान अपनी जिस मंजिल को अँधेरे में तलाश कर रहे हैं हमने उसे सबसे अधिक स्पष्ट भाषा में परिभाषित करके सामने रख दिया है और वह मंजिल है—पाकिस्तान।"

सर रोजर ने 20 जुलाई सन 1941 ई० में जिन्ना को एक गुप्त रूप से पत्र लिखा, जिसमें उन्होंने बताया कि हिज मेंजेस्टी द्वारा गठित एक नेशनल डिफेंस कौंसिल में उन्हें नहीं बुलाया जाएगा। यह पत्र पढ़कर जिन्ना गुस्से से भर उठे।

जिन्ना ने फौरन अगस्त माह में लीग की कार्य समिति की बैठक बुलाई। जिन्ना ने बम्बई में हुई इस बैठक में कार्य-समिति के सदस्यों से कहा कि या तो कौंसिल से इस्तीफा देना होगा या फिर लीग से। कुछ लोगों ने लीग से इस्तीफा दे दिया।

अक्टूबर माह में ईद के शुभ अवसर पर दिए गए सन्देश में जिन्ना ने कहा—

"हमारा विरोध नाकाम करने के लिए सरकार ने चालाकी से कुछ सदस्यों को इस योजना के साथ जोड़कर हमसे फोड़ लिया है।"

जिन्ना ने उसी दौरान केन्द्रीय विधायिका से लीग के निर्वाचित सदस्यों को पहले से भी ज्यादा जोरदार ढंग से वापस बुला लिया। जिससे सरकार के बर्ताव

के विरुद्ध उनकी नाराजगी वायसराय के सामने जरा भी प्रकट न हो सके। उन्होंने माँग की थी–

"ब्रिटिश नीति, मुसलमान देशों के बारे में अपना रवैया स्पष्ट रूप से घोषित करे। ग्रेट ब्रिटेन को सार्वभौम मुस्लिम सम्प्रभुता और स्वतन्त्रता में हस्तक्षेप न करने की नीति का ऐलान करना चाहिए।"

10 फरवरी के दिन जिन्ना बम्बई से कलकत्ता के लिए रवाना हो गए। एक जोशीली भीड़ ने हावड़ा स्टेशन पर उनका स्वागत किया, और एक शानदार जलूस में उन्हें मुहम्मद अली पार्क ले गई। वहाँ जिन्ना ने 23 फरवरी, सन् 1942 ई० को मुस्लिम लीग का झण्डा फहराया।

उस समय विश्वयुद्ध की आग में पूरा विश्व झुलस रहा था। सन् 1942 ई० 15 फरवरी के दिन, जापानियों ने सिंगापुर पर अधिकार जमा लिया था। एक ब्रिटिश भारतीय छावनी के 60,000 सिपाहियों ने एक भी गोली खर्च किए बिना हथियार डाल दिए। इस घटना से ब्रिटिश सराकर कांप गई। फरवरी के उत्तरार्द्ध में एमरी ने लिनलियगो को लिखा–

"हकीकत में मुश्किल मुद्दा तो समझौता करने सम्बन्धित हमारे संकल्प का तालमेल इस निन्दा से बैठाने का है, कि हमने अल्पसंख्यकों को ब्लैकमेलिंग का वीटो देकर जान बूझकर सारी प्रगति रोक दी है।"

एमरी ने प्रधानमन्त्री को राय दी–"भविष्य की किसी भी भारतीय-नीति घोषणा में यह निर्विवाद रूप से स्पष्ट होना चाहिए कि मुसलमानों और रजवाड़ों को दिए गए सन् 1940 ई० के भरोसे पर, हम अब भी कायम हैं। उन्हें किसी भी भारतीय सरकार की अधीनता जबरन स्वीकार करने के लिए विवश नहीं किया जाएगा, जो उन्हें मान्य नहीं होगी। मौजूदा हालात के लिहाज से यह मसला अहम है, क्योंकि इसका भारतीय सेना के मुसलमान तत्वों पर प्रभाव पड़ेगा।"

इससे पहले के हिज मेजेस्टी भारतीयों के मुताबिक नए भारतीय संघ की घोषणा करते, जिसे आज़ाद समान हैसियत वाले स्वतन्त्र उपनिवेश का दर्जा हासिल हो; जापान की बमबारी के सामने रंगून ने घुटने टेक दिए।

दिल्ली में हुई कार्य-समिति की बैठक में 22 फरवरी को जिन्ना ने कहा–

"अगर सप्रू द्वारा प्रस्तावित सुधारों की एकात्मक सवैधानिक योजना अंग्रेजों ने मान ली तो उसके विरुद्ध फौरन बगावत कर दी जाएगी।"

22 मार्च को दिल्ली में 'पाकिस्तान दिवस' अर्थात् लाहौर प्रस्ताव की दूसरी वर्षगांठ मील भर लम्बे जुलूस के साथ मनाई जा रही थी। उसी दिन क्रिप्स को भारत की जनता की सहमति प्राप्त करने के लिए भेजा गया था।

□



# क्रिप्स की समझौता वार्ता

क्रिप्स ने, 25 मार्च, सन् 1942 ई० को मौलाना आज़ाद से भेंट की। क्रिप्स ने बताया—

"ढाई साल पहले अपने भारत दौरे में मुस्लिम लीग व पाकिस्तान प्रस्ताव को गम्भीरतापूर्वक नहीं लिया गया था, किन्तु इस बार भारत में साम्प्रदायिक भावनाओं का परिवर्तन और पाकिस्तान आन्दोलन के विश्वास के कारण उनका विचार बदल गया है।"



*1942 ई० में दिल्ली में सर क्रिप्स से हाथ मिलाते मुहम्मद अली जिन्ना*

यह बात कहकर क्रिप्स ने जिन्ना को यह दस्तावेज पेश किए, जो उनके अनुसार पाकिस्तान की माँग पूरी करने में सहायक थे। जिन्ना काफी आश्चर्य चकित हुए, किन्तु उन्होंने कोई जल्दबाजी नहीं दिखाई थी। जिन्ना ने कहा—

"मैं इस मामले को दिल्ली में अपनी कार्यसमिति के सामने रखूँगा और फिर आपसे मिलूँगा।"

उसके बाद क्रिप्स की भेंट जवाहर लाल नेहरू व गाँधी जी से हुई। लेकिन उससे कोई लाभ नहीं हुआ। उल्टा क्रिप्स के अंग्रेज आत्मविश्वास का करारापन भारत की पेचीदगियों, अस्पष्टताओं तथा वास्तविकता से परे जाने वाले संशयों का शिकार होकर ढीला पड़ गया। भारत की साम्प्रदायिक समस्या अत्यन्त विकट हो चुकी थी। इस समस्या को अपने दम पर सुलझा देने का यकीन करके क्रिप्स ने बहुत बड़ी भूल की थी।

सन् 1942 ई० 2 अप्रैल गुरुवार के दिन जिन्ना इलाहाबाद पहुँच गए। अगले दिन उन्होंने लीग के सालाना अधिवेशन की अध्यक्षता करते हुए कहा—

"मुसलमान भारत में तब तक सन्तुष्ट नहीं हो सकता जब तक उसके राष्ट्रीय आत्मनिर्णय का अधिकार निर्विवाद रूप से स्वीकार नहीं कर लिया जाता।"

सन् 1942 को 10 अप्रैल के दिन कांग्रेस ने प्रस्ताव का संशोधित प्रारूप भी खारिज कर दिया। क्रिप्स ने काफी प्रयास किए कि समझौता बातचीत सफल हो

जाए लेकिन उसकी एक न चली।

जिन्ना ने अन्य पार्टियों से अलग कांग्रेस व क्रिप्स के बीच हुई सभी समझौता बातचीत भी ठुकरा दी और कहा—

"अगर सभी पार्टियाँ पाकिस्तान या विभाजन के लिए उठाई जा रही मुसलमानों की माँग या मुसलमानों के आत्म-निर्णय के अधिकार पर तैयार हो जाती है, तो इसके ब्यौरे युद्ध के पश्चात तय किए जा सकते हैं, ऐसे हालात में मौजूदा स्थिति के लिए हम किसी भी किस्म के उचित समायोजन के लिए राज़ी हैं।"

12 अप्रैल, सन् 1942 ई० को क्रिप्स ने चर्चिल को तार भेजा—

"समझौते की अब कोई उम्मीद नहीं बची है, इसलिए में रविवार को स्वदेश लौट रहा हूँ।"

क्रिप्स के इस प्रस्ताव को कांग्रेस द्वारा ठुकरा दिए जाने के बाद जल्द ही मुस्लिम लीग की कार्य समिति ने इस सम्बन्ध में अपना प्रस्ताव पारित कर दिया। प्रस्ताव था—

"हालांकि समिति को इस बात पर सन्तोष है कि भारत के दो या दो से अधिक स्वाधीन संघों की स्थापना का प्रावधान करके पाकिस्तान की सम्भावना अन्तर्निहित रूप से मान ली गई है; किन्तु उसे अफसोस है कि किसी तरह के वैकल्पिक प्रस्ताव नहीं माने गए। इसलिए बुनियादी बातों पर किसी प्रकार के परिवर्तन की गुंजाइश नहीं है। चूँकि इस बारे में हिज मेंजेस्ट्री की सरकार के गैर लचीले रवैये की रोशनी में कमेटी के पास यह कहने के अतिरिक्त कोई रास्ता नहीं है कि वह मौजूदा रूप में इन प्रस्तावों को नामंजूर करती है।

अपनी भावी नियति तय करने वाले महत्वपूर्ण प्रश्नों पर इस प्रकार के ऐलान से मुसलमान सन्तुष्ट नहीं हो सकते। वे इस. बारे में एकदम साफ व सुनिश्चित ऐलान की माँग करते हैं। असली मुद्दे से कतराकर भारत की आगामी समस्याएँ हल करने की कोई भी कोशिश बरबादी के निमन्त्रण के अलावा कुछ नहीं हो सकती।"

उस समय जिन्ना की दृष्टि में पाकिस्तान की माँग जायज माँग थी।

□



# जिन्ना की नई ऊँचाइयाँ

दिन-प्रतिदिन जिन्ना की अहमियत बढ़ती ही जा रही थी। उनकी अहमियत लंदन में ही नहीं; बल्कि नई दिल्ली व शिमला की दृष्टि में भी नई ऊँचाइयों को छूने लगी थी।

सन् 1942 ई० को 22 अप्रैल के दिन क्रिप्स ने लंदन में प्रेस सम्मेलन को बताया कि उन्हें भारतीय नेताओं से पूरे सहयोग का आश्वासन मिला है; किन्तु फिर भी क्रिप्स को पूरा विश्वास था कि अगर नेहरू व जिन्ना को लंदन आने का निमन्त्रण दिया जाता तो मौजूदा हालात में कोई भी भारत से आने को राज़ी नहीं होता।

उन्हीं दिनों मद्रास में चक्रवती राजगोपालाचारी ने कांग्रेस विधायक दल के 46 सदस्यों की बैठक की और दो प्रस्ताव रखे—

पहला—अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी से अनुरोध किया गया कि वह मुस्लिम लीग द्वारा किए जा रहे पृथक होने के दावे को स्वीकार कर ले; ताकि उसके सभी संशय व भयों का निवारण हो जाए।

इस प्रस्ताव के अनुसार मौजूदा आपातस्थिति का मुकाबला करने के लिए राष्ट्रीय सरकार की स्थापना के लिए लीग को समझौता बातचीत का निमन्त्रण दिया जाना चाहिए था।

दूसरा प्रस्ताव—इसमें अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी से इजाजत माँगी गई थी कि मद्रास कांग्रेस को मुस्लिम लीग व अन्य प्रान्तीय पार्टियों को एकताबद्ध होने दिया जाए, जिससे मद्रास में गठजोड़ सरकार का फिर से शासन स्थापित किया जा सके।

ये दोनों प्रस्ताव भारी बहुमत से पारित हो गए। असहयोग में जुटी कांग्रेस की कतारों में यह पहली बड़ी फूट थी। वास्तव में जिन्ना और अंग्रेजों की नीति की महत्वपूर्ण विजय गाँधी व नेहरू को मिली सीधी चुनौती थी।

अगले सप्ताह अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी की बैठक में चक्रवर्ती और उसके मद्रास प्रस्तावों की भर्त्सना कर दी गई। सन् 1942, 30 अप्रैल के दिन चक्रवर्ती ने कार्यसमिति से इस्तीफा दे दिया।

उसके बाद गाँधी जी ने इलाहाबाद की बैठक में एक प्रस्ताव भेजा, जो इस प्रकार था—

"अंग्रेजों को भारत छोड़कर चले जाना चाहिए।"

जून के महीने में अमेरिकी पत्रकारों ने गाँधी जी का वर्धा में इंटरव्यू लिया और पूछा—

"मिस्टर जिन्ना कहते हैं कि हिन्दू हुकूमत मुसलमानों को स्वीकार नहीं, इस सूरत में आज़ाद भारत का क्या होगा।"

गाँधी जी ने जवाब दिया—"भले ही अंग्रेज, कांग्रेस या हिन्दुओं के स्थान को अथवा भारत को भगवान के भरोसे छोड़ दे जिसे आधुनिक शब्दों में अराजकता कहते हैं, इस हालात में सारी पार्टियाँ या तो एक दूसरे के विरुद्ध कुत्तों की तरह लड़ेगी या फिर कदाचित जिम्मेदारी आ पड़ने पर एक वाजिब समझौता कर लें। मुझे आशा है, अत्यवस्था के मार्ग से अहिंसा का जन्म होगा।"

'दि हिन्दू' के एक संवाददाता ने कहा—"आप तो सदैव हिन्दू-मुसलमान एकता के बिना स्वराज को नकारते रहे हैं, फिर आज क्यों कहते हैं कि जब तक भारत को आज़ादी नहीं मिलती तब तक एकता सम्भव है?"

इस पर गाँधी जी ने जवाब दिया, जो इस प्रकार था—

"वक्त एक बेरहम दुश्मन है, मैं इस सवाल से जूझता रहा हूँ कि आखिर मेंने और सभी लोगों ने मिलकर सच्चे दिल से जो प्रयास किए थे, उनके बावजूद एकता की कोशिशें असफल क्यों हुई? साथ ही मेरी गरिमा भी पूरी तरह खत्म हो गई। यही नहीं, कुछ मुसलमान अखबारों ने मुझे भारत में इस्लाम का कट्टर दुश्मन घोषित कर दिया। इसका एक ही कारण है, तीसरी ताकत सच्ची एकता नहीं देने देगी, इसलिए नतीजे के तौर पर में इस निर्णय पर पहुँचा हूँ कि भारत में ब्रिटेन सत्ता का जैसे ही अन्त हो जाएगा, दोनों समुदाय एक हो जाएँगे।"

गाँधी जी के इस बयान को सुनकर जिन्ना ने फौरन अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त की—

"मुझे खुशी है कि मिस्टर गाँधी ने आखिरकार खुलकर मान लिया है कि भारत को आजादी मिले बिना हिन्दू-मुसलमान एकता असम्भव है। इस प्रकार उन्होंने वह लबादा उतार दिया है जिसके पीछे वे बाइस सालों से छिपे बैठे थे।"

अगस्त के आरम्भ में अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी की यह बैठक फिर से हुई। जिसमें सरदार पटेल ने ब्रिटिश सेना द्वारा भारत छोड़ने के लिए राज़ी होने की सूचना दी। 8 अगस्त को गाँधी जी ने लिखा जो इस प्रकार था—

"अगर मुस्लिम लीग कांग्रेस से पूरी तरह सहयोग करते हुए तुरन्त बिना किसी आपत्ति के स्वतन्त्रता की माँग करने के लिए तैयार हो जाएँ तो ब्रिटिश सरकार द्वारा लीग को पूरे भारत के नाम पर सभी अधिकार देने पर कांग्रेस को कोई ऐतराज नहीं होगा। जनता के नाम पर मुस्लिम लीग जो भी सरकार बनाएगी, कांग्रेस उसके काम-काज में कोई बाधा नहीं डालेगी और राजतन्त्र चलाने के लिए सरकार में भी शामिल होगी। यह बात पूरी ईमानदारी और गम्भीरता से कही जा रही है।"

लेकिन जिन्ना को गाँधी जी पर विश्वास नहीं था। वे पहले ही प्रेस को बता चुके थे—

"मिस्टर गाँधी के विचारों का आज़ाद भारत हमारी धारणा से बुनियादी रूप से अलग है। मिस्टर गाँधी के लिए आजादी का मतलब है, 'कांग्रेस राज'। में मिस्टर

गाँधी से कहता हूँ कि वे मुसलमानों को यह कहकर बेवकूफ बनाना छोड़ दें कि हम पाकिस्तान हासिल करने के लिए अंग्रेजों पर निर्भर हैं, उन्हें मुसलमानों से कोई मदद नहीं मिलने से कोई मतलब नहीं होना चाहिए।"

8 अगस्त तक भारत का विशाल तन्त्र पूरी तरह तैयार हो चुका था। 8 अगस्त, सन् 1942 ई० की शाम को गाँधी जी ने 'अंग्रेजों भारत छोड़ो' का प्रस्ताव पारित कर दिया, साथ ही अपने अनुयायियों को मन्त्र दिया—'करो या मरो।'

जिन्ना ने गाँधी जी के सत्याग्रह के प्रति 9 अगस्त को काफी खेद प्रकट किया। 16 अगस्त को जिन्ना ने लीग की रणनीति बनाने के लिए बम्बई में कार्य समिति की बैठक बुलाई। चार दिन तक चली इस बैठक में भारतीय कांग्रेस कमेटी द्वारा किए गए खुले बगावत के फैसले की भर्त्सना करने का प्रस्ताव पारित किया गया था।

इधर ब्रिटिश सरकार ने गाँधी जी को गिरफ्तार कर लिया था। उसके कुछ दिन पश्चात ही बम्बई में हिंसा शुरू हो गई और देखते ही देखते संयुक्त प्रान्त, दिल्ली और बिहार में फैल गई।

सरकार ने सूरज निकलने से पूर्व जिस रफ्तार और गोपनीयता से कार्यवाही की, उसका हर जगह पर जोरदार असर पड़ा। ब्रिटिश सरकार ने दमनकारी नीति का सहारा लिया। ब्रिटिश कार्रवाही से बम्बई और दिल्ली की स्थिति कुछ बेहतर हो चुकी थी।

इस मौके का फायदा उठाते हुए जिन्ना ने ब्रिटिश सरकार और कांग्रेस के समक्ष रखी अपनी शर्तों में बढ़ोत्तरी कर दी।

अगस्त के उत्तरार्द्ध में अमेंरिका स्थित राजदूत लॉर्ड होलिफेक्स ने वाशिंगटन से एक अत्यन्त गोपनीय सन्देश मन्त्री एन्थनी इडने को भेजा। इस सूचना के अनुसार पता चला कि मुस्लिम लीग की वित्तीय मदद करने वाले भारतीय राजे-रजवाड़े जिनमें हिन्दू भी हैं और मुसलमान भी, बड़े-बड़े मुसलमान जमींदार और खासकर कलकत्ता के अंग्रेज व्यापारी समुदाय थे।

मुस्लिम लीग को दी गई इस मदद का अमेंरिकी उद्देश्य भारत के प्रतिनिधियों को सत्ता मिलने से रोकना था।

जैसे-जैसे विश्वयुद्ध आगे बढ़ रहा था, अमेंरिकी सरकार पर जनमत का दबाव बढ़ता ही जा रहा था। अमेंरिकी लोग यह चाहते थे कि ब्रिटेन से भारत का कुछ न कुछ करने का आग्रह किया जाए। इधर ब्रिटेन भारत को किसी भी हालत में हाथ से जाने नहीं देना चाहते थे; क्योंकि उस पर भारत का पाउंड स्टर्लिंग का कर्ज बढ़ता ही जा रहा था, जो युद्ध के सभी मोर्चों पर भारतीय माल के तेजी से बढ़ते हुए निर्यात की वजह से जमा हो गया था। यह रकम करीब चालीस करोड़ पाउंड तक पहुँच गई थी।

□



# लीग का झण्डा और मानचित्र

सन् 1942 ई० को अक्टूबर माह में भारतीय गतिरोध को हल करने की योजना लेकर उपस्थित हुए राजगोपालाचारी का सुझाव था कि छोटे अल्पसंख्यक समुदायों का संरक्षण करने के लिए तीन अन्य लोगों को भी सरकार में लिया जा सकता है। उन्हें इस बात का पूरा यकीन था कि कांग्रेस व लीग में से कोई भी इस योजना को खारिज नहीं करेगा। वरना उनके हाथ से नेतृत्व निकल सकता है।

किन्तु जिन्ना ने इस योजना को एक हवाई सुझाव कहकर फौरन खारिज कर दिया। लिनलिथगो को सन् 1942 के उत्तरार्द्ध में एक काफी भरोसेमन्द गोपनीय रिपोर्ट मिली जिसमें जिन्ना के साथ हुई हाल की बातचीत दर्ज थी। इस रिपोर्ट में पाकिस्तान मुद्दे पर जिन्ना ने अधिक जोर दिया था कि वे किसी भी अन्तरिम सरकार में हिन्दुओं के साथ समान हैसियत दिए जाने पर ही शामिल होंगे, क्योंकि इसी कार्य दिशा के आधार पर वे पाकिस्तान की माँग पर रह सकते थे।

बंगाल के हालात भी इधर काफी खराब चल रहे थे। वहाँ के लोग दोहरे आतंक से काफी परेशान हो चुके थे। एक तरफ जापान के हमले का डर था तो दूसरी तरफ अकाल का भय बना हुआ था।

उस समय गाँधी जी ब्रिटिश सरकार की नज़रबन्दी में थे। 9 फरवरी सन् 1943 को अनशन व्रत शुरू कर दिया गया था। उनका यह उपवास ब्रिटिश हुकूमत की दमनकारी नीति के विरुद्ध था।

जैसे ही वायसराय की परिषद को गाँधी जी के उपवास की सूचना मिली तो सभी गाँधी जी को रिहा कर देने के पक्ष में हो गए। इस तरह भारत सरकार ने फैसला लिया कि इस प्रस्तावित अनशन की अवधि में गाँधी जी को छोड़ने की पेशकश की जाएगी।

इस निर्णय की जानकारी लार्ड लिनलियगो को तार के जरिए लंदन भेजी, अगले सप्ताह लंदन में मन्त्री-परिषद ने एक आपात बैठक की, जिसकी जानकारी देते हुए एमरी ने लिखा जो इस प्रकार था—

"ऐसे हालात में हम उस जिद्दी से दयनीय बूढ़े के सामने घुटने नहीं टेकेंगे जो सदा से ही हमारा दुश्मन बना हुआ था।"

गाँधी जी के उपवास के बारे में जिन्ना के विचार भी कुछ-कुछ चर्चिल की तरह कठोर थे। गाँधी जी के उपवास का एक सप्ताह गुजरने के बाद लार्ड लिनलियगो ने खुशी के साथ यह सूचना दी—

"मुसलमान अभी भी अलग खड़े हुए हैं और जिन्ना का अखबार 'डॉन' उपहास तथा आलोचना में लगा है।"

पूरे भारत देश में गाँधी जी के इस उपवास के कारण विरोध और अशान्ति की बाढ़-सी आ गई थी; लेकिन मुस्लिम लीग ने खुद को इस माहौल से अलग किए रखा। सप्रू ने नई दिल्ली में होने वाले प्रमुख नेताओं के एक सम्मेलन में जिन्ना को आमन्त्रीत किया।

इस प्रकार वह जिन्ना से गाँधी जी के उपवास पर चर्चा करना चाहते थे, किन्तु जिन्ना ने उसमें जाने से साफ़ मना कर दिया।

इस बारे में रिपोर्ट देते हुए लिनलियगो ने अपनी बेहद खुशी जताते हुए कहा—

"अब तो यह हिन्दू नेताओं के विचार का ही मामला रह गया है।"

21 फरवरी को गाँधी जी के छः डॉक्टरों के दस्तखतों से जारी किया गया बुलेटिन चेतावनी देने लगा—

"महात्मा का स्वास्थ्य शंकाग्रस्त हो चुका है, उल्टी के जबरदस्त दौरे पड़ रहे हैं, करीब-करीब बेहोशी की हालत है और नब्ज टटोलना मुश्किल हो रहा है।"

किन्तु उस समय सभी हैरान रह गए थे जब इतनी बुरी हालत में भी गाँधी जी की मृत्यु नहीं हुई। चर्चिल को सन्देह हुआ कि कहीं न कहीं चालाकी की गई है। अवश्य ही डॉक्टरों ने गाँधी जी को ग्लूकोज या पौष्टिक पदार्थ दिया है। चर्चिल के कहने पर लिनलियगो ने बहुत खोजबीन की मगर गाँधी जी के इलाज में उन्हें कोई गड़बड़ी नहीं मिली। 3 मार्च को गाँधी जी ने उपवास तोड़ा।

इधर 25 मार्च को फजलुल हक की सरकार गिर गई और उनके सदस्य मुस्लिम लीग से जा मिले। सन् 1943 अप्रैल माह में लीग ने दिल्ली में अपना सालाना अधिवेशन किया। इस जलसे के मंच पर पाकिस्तान का मानचित्र लगा हुआ था और उसके ऊपर लहराते हुए झण्डे पर लिखा हुआ था—

"भारत की आज़ादी पाकिस्तान में निहित है।"

जिन्ना ने इस बात का दावा किया कि मुसलमान जनता पूरी तरह मुस्लिम लीग के साथ है। उन्होंने गाँधी जी पर आरोप लगाया—

"महात्मा पूरे देश को अपने हिन्दू आन्दोलन में बदल देना चाहते हैं।"

उसके बाद जिन्ना ने शिखर वार्ता के अन्तर्गत गाँधी जी के सामने पेशकश रखी—

"अगर मिस्टर गाँधी इस समय भी पाकिस्तान के आधार पर मुस्लिम लीग के साथ समझौता करने के लिए आगे आते हैं तो मुझसे ज्यादा इसका स्वागत दूसरा कोई नहीं करेगा।"

लीग के अधिवेशन की कार्रवाई सुनने वाले एक ब्रिटिश जासूस के अनुसार जिन्ना का खेमा और ज्यादा हमलावर, चुनौतीपूर्ण व निरवुंश होता जा रहा था।

जिन्ना भारत देश के सबसे अधिक चालाक राजनेताओं में से एक थे। वह अपनी शक्ति और समय का उपयोग पार्टी शासित प्रदेशों में लीग को प्रभावी और जनता की आवश्यकताओं व माँगों के अनुसार बनाने में अधिक करते थे।

मई माह के अन्त में पंजाब के एक गवर्नर की रिपोर्ट में कहा गया—

"पाकिस्तान का नारा गति पकड़ रहा है।"

सन् 1943 ई० को जून माह में चर्चिल ने अपने मन्त्री परिषद में फील्ड मार्शल वैवेल को भारत का नया वायसराय बनाने की सिफारिश की जो मंज़ूर हो गई। अपनी तरफ से चर्चिल ने वैवेल को हिदायत दी थी—

"आप भारत में किसी भी तरह के सुधारों से दूर ही रहेंगे और गाँधी जी से किसी भी तरह का समझौता नहीं करेंगे।"

भारत का चार्ज सँभालने के लिए लंदन से उड़ान भरने से पहले वैवेल ने भारत की समस्याओं को केन्द्र में रखकर की गई कई मीटिंगों में भी हिस्सा लिया था। इन्हीं मीटिंगों में एक समस्या इंग्लैंड पर युद्ध का कर्जा चढ़ जाने की भी थी। सन् 1943 ई० के मध्य तक यह कर्जा 30 करोड़ पाउंड हो चुका था।

□



# जिन्ना पर जानलेवा हमला

23 जुलाई सन् 1943 ई० की घटना है—शुक्रवार का दिन था जब जिन्ना वापस बम्बई लौटे।

उसके बाद 26 जुलाई के दिन लाहौर का एक कट्टरपंथी मुसलमान युवक खाकसार रफीक साबिर मजनगवी जिन्ना के माउंट प्लीजेंट रोड स्थित घर में घुस आया। रफीक ने जिन्ना के सचिव एम० एच० सैय्यद से कहा—

"मैं महान् नेता से बातचीत करना चाहता हूँ।"

लेकिन उन दिनों जिन्ना काफी व्यस्त थे। उन्होंने अपने सेक्रेटरी के दफ्तर में घुसते हुए रफीक को देख लिया था। इसलिए उन्होंने पूछा—

"यह कौन है और क्या चाहता है?"

यह कहते हुए जिन्ना जैसे ही बाहर निकले, रफीक तेजी से उन पर झपट पड़ा और अपने घूंसे से जिन्ना के बाएँ जबड़े पर वार किया। जिन्ना लड़खड़ाते हुए पीछे की तरफ हट गए।

उसी समय रफीक ने अपनी कमर में छिपा चाकू निकाल लिया। उसके हाथों में चमचमाता हुआ चाकू देखकर जिन्ना को खुद को बचाने का विचार आया। उन्होंने तुरन्त अपना हाथ बढ़ाकर उसकी कलाई पकड़ ली मगर फिर भी चाकू का फल उनके जबड़े के बाएँ हिस्से को छूता हुआ चला गया। बाएँ कन्धे की तरफ से उनका कोट भी फट गया था। इसके अतिरिक्त उनकी बायीं उगँली भी घायल हो गई।

रफीक के इस प्रकार अचानक हमला कर देने से जिन्ना के सेक्रेटरी का दिमाग जैसे कुछ कुन्द-सा कर दिया था। पलक झपकते ही रफीक ने जिन्ना पर वार किया था। जैसे ही सेक्रेटरी के होश कायम हुए उसने झपटकर रफीक के हाथ से चाकू छीनने की कोशिश की।

उसी समय जिन्ना का चौकीदार वहाँ आ गया। उसने हमलावर से चाकू छीनने में सेक्रेटरी की मदद की; फिर वहाँ पुलिस भी आ गई।

अदालत में आरोपी ने अपना बचाव स्वयं ही किया था। उसने बताया कि सन् 1935 से 1939 के बीच वह लाहौर की मुस्लिम लीग का सदस्य था मगर आखिर में उसने पार्टी छोड़ दी। उसका बयान था—

"लीग केवल बातें करने के अतिरिक्त न तो मुसलमानों के लिए कुछ कर रही थी और ना ही इन्सानियत के लिए उसके पास करने के लिए कुछ है।"

रफीक ने इस बात का दावा किया कि वह जिन्ना से काम और मदद देने की अपील करने गया था न कि उनकी हत्या करने।

लेकिन अदालत ने उस पर जिन्ना के कत्ल का प्रयास करने और घायल करने के इल्ज़ाम लगाए। इसलिए उसे पाँच साल की सजा सुनाई गई। इस वारदात की जांच सब-इंस्पेक्टर अब्दुल कादिर शेख कर रहे थे। जांच के दौरान कादिर जिन्ना के इस कदर मुरीद बन गए कि बाद में पाकिस्तान जाकर उन्होंने कायदे-ए-आजम के मददगार की भूमिका निभाई।

हमले के पीछे साजिश के अंदेशों की बड़ी बारीकी से जाँच की जा रही थी।

किन्तु रफीक के किसी सहयोगी के बारे में कोई सुराग नहीं मिला जबकि उस हिंसक हमले ने जिन्ना को झकझोर दिया था और खून बह जाने के कारण से उनमें शारीरिक कमजोरी भी आ गई थी; किन्तु इस घटना से न तो उनके जोश में कमी आई थी और ना उनकी शक्ति क्षीण हुई।

इस्पहानी जैसे करीबी दोस्तों को जिन्ना ने तार भेजकर सान्त्वना दे दी थी—

"फिक्र करने की कोई बात नहीं, खुदा की मेंहरबानी से में ठीक हूँ।"

इतने खौफनाक हमले से जिन्ना का चमत्कारी ढंग से बच निकलना उनके प्रशंसकों की दृष्टि में दैवीय कृपा से कम नहीं था। भारत के मुसलमानों ने उनके बच जाने पर खुशियाँ मनाई।

जिन्ना लगातार अपने मित्रों तथा अनुयायियों से सार्वजनिक रूप से शान्त और संयमित रहने की अपील करते हुए उन्हें तसल्ली दे रहे थे।

बंगाल में अकाल की स्थिति—जुलाई माह के अन्तर्गत जिन्ना ब्लूचिस्तान के दौरे पर निकले और लीग के तीसरे प्रान्तीय सम्मेलन को सम्बोधित किया। उस सम्मेलन में शहर के सभी प्रतिष्ठित लोगों के साथ पच्चीस हजार लोग सम्मिलित हुए।

जिन्ना ने भाषण देते हुए कहा—"ब्लूचिस्तान के मुसलमानों को अपना आलस्य त्यागकर पूरे राष्ट्र के साथ कदम से कदम मिलाकर चलना होगा। आपको आपसी जलन, छोटी-छोटी बातों से जुड़े तबकाई हितों, मतभेदों, छोटे-छोटे झगड़ों और कबीलाई सोच को त्यागना होगा।"

उन्होंने पाकिस्तान के संघर्ष के आरम्भ से पहले की योजना दोहराते हुए कहा—

"अलगाव की माँग रखने से पहले हमें सुधार और विकास की बुनियाद रखनी है। छात्रों से मेरी गुजारिश है कि सस्ते नारों और जुमलेबाजी के चक्कर में न पड़े। पूर्ण रूप से अपना ध्यान शिक्षा पर लगाएँ। पहले कार्रवाही करने लायक योग्यता हासिल करें जितनी योग्यताएँ तुममें होगी कामयाबी के मौके भी उतने ही ज्यादा होंगे।"

जिस समय जिन्ना भारत के पिछड़े किन्तु खाद्यान्न से परिपूर्ण पश्चिमी सीमान्त पर बोल रहे थे उस समय पूर्वी बंगाल के मेंदानों में घोर अकाल पड़ा हुआ था। तब तक बंगाल का अकाल करीब दस लाख जानें ले चुका था; किन्तु वायसराय को अकाल से ज्यादा गाँधी जी का डर परेशान कर रहा था। उन्हें डर था कि कहीं महात्मा अगस्त माह में अनशन आरम्भ न कर दें।

सन् 1943 ई० के मध्य में सितम्बर माह को लार्ज बैवेल ने जिन्ना का एक खुफिया आंकलन किया जिसके अनुसार यह कहना कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी कि जिन्ना और मुस्लिम लीग एक दूसरे के पर्याय थे। वे एक घमंडी, शक्की और महत्वाकांक्षी व्यक्ति थे। नए वायसराय ने गाँधी जी के बारे में कहा था—

"जिन्ना और गाँधी जी दोनों ही तानाशाह हैं, गाँधी जी इसलिए कि उन्होंने सच का जामा पहन रखा है और जिन्ना इसलिए कि उनकी पार्टी में उनके बराबर काबिल व्यक्ति कोई नहीं है।"

उस समय बैवेल की नज़र में पाकिस्तान की योजना बहुत गम्भीर थी।

उसी समय जिन्ना ने शिमला के अन्दर खिजर रिवाना के साथ 'असंमाप्त' शिखर वार्ताओं का आरम्भ किया। इधर इस्पहानी ने जिन्ना से अनुरोध किया कि वे कलकत्ता आकर लीग की एक कौंसिल मीटिंग करें। उसके अनुसार नाजिमुद्दीन एक कमजोर मुख्यमन्त्री थे। जो लीग की सरकार की तरफ से हिन्दू महासभा का सामना नहीं कर पा रहे थे। इस्पहानी ने अकाल की त्रासदी के लिए आंशिक रूप से सरकार को भी जिम्मेदार ठहराया।

लेकिन उस वक्त जिन्ना शिमला से बम्बई लौटते समय उस कठिन और खतरनाक साबित हो सकने वाले जोखिम उठाने के लिए राज़ी नहीं थे। अक्टूबर महीने में उन्होंने बम्बई से अपना एक बयान जारी किया, जिसमें उन्होंने ब्रिटिश प्रशासन से बंगाल के लोगों के लिए तुरन्त मदद व राहत भेजने को कहा।

नवम्बर माह के मध्य में दिल्ली की विधानसभा में खाद्यान्न के प्रश्न पर बोलते हुए यूरोपियन पार्टी के नेता सर हेनरी रिचर्डसन को आड़े हाथों लिया। रिचर्डसन का मानना था कि बंगाल के अकाल पर सरकार पर प्रत्यारोप लगाने का कोई लाभ नहीं है इस पर जिन्ना बोले—

"जब हम इस मुल्क को चला रही सरकार से उसके कामकाज की सफाई माँगते हैं तो आप उसे प्रत्यारोप लगाना कहते हैं। क्या यह देखना हमारा अधिकार नहीं है कि सरकार ने अपनी जिम्मेदारी ठीक से निभाई है या नहीं?

देखना पड़ेगा कि असली चोर कौन है? इस हकीकत से कोई इन्कार नहीं कर सकता। हजारों की बात तो छोड़ दीजिए इंग्लैंड में अगर कुछ लोग भूख से मर जाते हैं या हर हफ्ते भुखमरी का शिकार हो जाते हैं तो क्या चर्चिल सरकार चौबीस घन्टों भी बनी रह सकती है और यहाँ बिना माथे पर शिकन लाए हमसे कहा जा रहा है कि प्रत्यारोप मत लगाइए। हमारी बदकिस्मती यह है कि हम एक ऐसी शासन प्रणाली में रहे हैं जो हटाई नहीं जा सकती तथा गैर जिम्मेदार हैं। में तो यह भी कहूँगा कि यह हुकूमत किसी भी बड़े मुद्दे से निपटने के योग्य है ही नहीं।"

प्रथम विश्वयुद्ध के बाद पारित हुए 'रौलेट एक्ट' के बाद जिन्ना का ब्रिटिश सरकार पर यह सबसे जबरदस्त हमला था।

□



# पाकिस्तान की जिद्द

सन् 1943 ई०, दिसम्बर माह में लीग का इक्कतीसवाँ अधिवेशन कराची में हुआ जिसमें दस हजार मुसलमान प्रतिनिधि जमा हुए। भाषण के बाद जिन्ना ने तीन सदस्य संसदीय बोर्ड की नियुक्ति की घोषणा कर दी थी।

चुनावों के दौरान इसी बोर्ड को पूरे देश में लीग के उम्मीदवारों के बारे में अंतिम निर्णय लेना था। उन्होंने एक नई कार्रवाई समिति बनाने की भी पेशकश की। इस समिति का कार्य पाकिस्तान के लिए शैक्षिक, आर्थिक और सामाजिक नियोजन करना था। 27 दिसम्बर, सन् 1943 ई० को जिन्ना द्वारा इन सबकी औपचारिक नियुक्ति कर दी गई।

अपने गार्डों की जिन्ना ने एक निजी सेना भी बना ली थी। जिनका कराची में मार्च भी कराया था।

सन् 1944 ई० को, फरवरी माह में बम्बई से लौटकर जिन्ना ने मुस्लिम स्टूडेंट फेडरेशन से कठोर परिश्रम, उद्यम और परीक्षा के स्तम्भ खड़े करने का अनुरोध किया। जिससे उनके ऊपर पाकिस्तान का आधार बनाया जा सके।

मार्च के अन्त में वे विधानसभा के उद्‌घाटन सत्र के लिए दिल्ली पहुँचे। वहाँ वायसराय वैवेल ने अपने भाषण में जोर देकर कहा कि युद्ध के बाद बनने वाले भारत के संविधान केन्द्र में उसकी भौगोलिक एकता रहेगी। इस पर जिन्ना को लगा कि वैवेल, क्रिप्स के प्रस्तावों में अन्तर्निहित पाकिस्तान की पेशकश खारिज करने का प्रयास कर रहे हैं। इसी कारण जिन्ना ने उसी महीने अलीगढ़ यूनियन के सामने वायसराय के भाषण को भड़काऊ और मुसलमानों के नज़रिए की उपेक्षा करने वाला बताया।

वैवेल द्वारा गवर्नरों से सलाह माँगने पर मध्य प्रान्त के सर हेनरी टिवनैम ने उन्हें चेतावनी देते हुए कहा—

"आप जिन्ना को नाराज़ न करें। मैं जानता हूँ कि जिन्ना के बारे में कई खराब बातें कही जाती हैं मगर में सोचता हूँ कि अगर कांग्रेस का समर्थन करने से जिन्ना पीछे न हटे होते तो हमारा क्या हाल होता?"

बिहार के कार्यकारी गवर्नर फ्रांसिस मडी ने लिखा—"जिन्ना का खेल तो वास्तव में हिन्दुओं को एवज में कुछ दिए बिना पाकिस्तान प्राप्त करना है। सरकार को चाहिए कि वह पाकिस्तान को बिना शर्त संवैधानिक स्वीकृति देने की घोषणा कर दे।

दरअसल जिन्ना का तर्क है कि जनमत संग्रह करना वक्त की बरबादी होगी, जिसका परिणाम केवल पंजाब व बंगाल में दंगों के रूप में निकलेगा।"

जिन्ना को लेकर वैवेल भारी उलझन का शिकार बने हुए थे। भारत के पूर्वी मोर्चे पर अभी युद्ध जारी था और बंगाल अकाल की मार से घायल था। ऐसे में वायसराय जिन्ना जैसे व्यक्ति की माँग पर पाकिस्तान देने को तैयार नहीं थे। इधर

वैवेल गाँधी जी से बात करने के इच्छुक थे; किन्तु नज़रबन्द गाँधी जी का स्वास्थ्य बहुत खराब था।

वैवेल ने मई माह में एमरी से गाँधी को बिना शर्त रिहाई की सिफारिश करते हुए चेतावनी दी—

"अगर गाँधी की हिरासत में मृत्यु हो गई तो गम्भीर परेशानियाँ उत्पन्न हो जाएँगी।"

अब राजनीति में गाँधी जी का सक्रिय भूमिका निभाना कठिन समझकर चर्चिल ने 5 मई सन् 1944 ई० में गाँधी जी को रिहाई दे दी। गाँधी जी को उनकी पुरानी मित्र लेडी ठाकरसी के घर भेज दिया गया। जहाँ उनकी हालत में आश्चर्यजनक सुधार होने लगा था।

चर्चिल को महसूस हो रहा था कि जिसे वे नंगा फकीर कहते थे, उसने उन्हें चकमा दे दिया।

रिहा हो जाने के दो हफ्ते बाद गाँधी जी ने जिन्ना से बातचीत करने की इच्छा जाहिर की। जिन्ना उन दिनों कश्मीर में स्वास्थ्य लाभ कर रहे थे। गाँधी जी के बुलावे पर जिन्ना उनसे आकर अपने बम्बई स्थित आवास में मिले। गाँधी जिन्ना की समझौता बातचीत की सूचना से चर्चिल काफी झुँझलाए हुए थे।

केवल वैवेल ही नहीं बल्कि हिन्दू महासभा के नेता गुरु वीर सावरकर भी महात्मा के इस कदम से परेशान थे। उन्होंने चेतावनी देते हुए एमरी को तार किया—

"हिन्दू सभा वाले अपनी पितृभूमि और पुण्यभूमि के रूप में भारत संघ का बंटवारा कभी बर्दाश्त नहीं करेंगे।"

9 सितम्बर के दिन शिखर वार्ता शुरू हो गई। गाँधी जी के मुताबिक जिन्ना का कहना था कि अगर पाकिस्तान मिलता है तो वे जेल जाने के लिए और यहाँ तक कि गोलियों का सामना करने के लिए भी तैयार हैं। जिन्ना को पाकिस्तान अभी चाहिए आज़ादी के बाद नहीं।

जिन्ना ने कहा—"हम पाकिस्तान और हिन्दुस्तान के लिए आज़ादी लेंगे। पहले हमें इस पर समझौता कर लेना चाहिए और फिर सरकार के पास जाकर उसे मानने के लिए कहना चाहिए। उसे मानने के लिए विवश करना चाहिए। मुसलमान पाकिस्तान चाहते हैं, लीग मुसलमानों की संरक्षक है और वह बंटवारा चाहती है।"

शिखर वार्ता के दूसरे दौर में जिन्ना ने पाकिस्तान सरकार की लुभावनी तस्वीर खींची और दावा किया कि वहाँ सच्चा लोकतन्त्र होगा। तब गाँधी जी ने याद दिलाया कि जिन्ना कई बार यह बात कह चुके हैं कि लोकतन्त्र भारतीय दशा के अनुकूल नहीं है।

इस पर जिन्ना ने कहा—"यह बात तो थोपे गए लोकतन्त्र के बारे में कही गई थी।"

जिन्ना समझ गए कि गाँधी जी से हुई बातचीत व्यर्थ थी, इसलिए उन्होंने 13 सितम्बर को गाँधी जी को तीखे लहजे में लिखा—

"डियर मिस्टर गाँधी! 12 सितम्बर की सुबह बातचीत शुरू करने से पहले आपने मुझे बताया था कि आपको मेर 11 सितम्बर का पत्र पढ़ने का अवकाश

नहीं मिला। आज हमारी पुनः भेंट हुई, पर आपने जवाब नहीं दिया। मुझे आपके जवाब की प्रतीक्षा रहेगी, इसलिए मेंहरबानी करके मेर पत्र में दर्ज मुद्दे का जल्दी जवाब दीजिए।

आपका एम० ए० जिन्ना!"

14 सितम्बर के दिन गाँधी जी ने जवाब भेजा। उसे पढ़कर जिन्ना को महसूस हुआ कि गाँधी जी पर उनकी बातों का अनुकूल प्रभाव पड़ा है। इस पत्र का जवाब जिन्ना ने अत्यन्त शिष्ट भाषा में दिया। जिसकी प्रतिक्रिया में मिला गाँधी जी का पत्र इस प्रकार था।

"डियर, कायदे-ए-आज़म! कुछ देर के लिए मेंने राजा जी के फार्मूले को दरकिनार कर दिया है और आपकी मदद से मुस्लिम लीग द्वारा पारित लाहौर के मशहूर प्रस्ताव पर गम्भीरता से दिमाग खपा रहा हूँ। प्रस्ताव में अपने आप में द्वि-राष्ट्र का कोई हवाला नहीं देता, वैसे भी यह सिद्धान्त पूरी तरह काल्पनिक है। मुझे इतिहास में ऐसी कोई मिसाल नहीं मिलती कि धर्म बदलने वालों और उनके वंशजों के किसी समूह ने अपने मूल स्त्रोत से  अलग राष्ट्र होने का दावा किया हो। अगर इस्लाम आने से पहले भारत एक राष्ट्र था तो अपनी बहुत-सी सन्तानों द्वारा धर्म परिवर्तन कर लेने के बाद भी वह एक राष्ट्र ही रहना चाहिए।"

गाँधी जी के इस उत्तर ने जिन्ना की आशाओं पर पानी फेर दिया। दो दिन पश्चात जिन्ना ने गाँधी जी को लिखा—

"मैं आपको लाहौर प्रस्ताव के बारे में समझाना चाहूँगा। मेरा यह प्रस्ताव बहुसंख्यक गैर-मुस्लिम भारतीयों व विदेशियों को भी पसन्द आया है। अगर मैं आपको इस प्रस्ताव का कायल कर सका, तो हिन्दू भारत पर आपका जबरदस्त प्रभाव देखते मुझे इससे बहुत बड़ी सहायता मिलने की उम्मीद है। हम मानते हैं कि हिन्दू व मुस्लिम, राष्ट्र की किसी भी कसौटी या परिभाषा के अनुसार दो प्रमुख राष्ट्र हैं। हाँ अन्तर्राष्ट्रीय कानून के किसी भी सिद्धान्त के मुताबिक हम एक राष्ट्र हैं, यह पूरी तरह स्पष्ट है कि आप सिर्फ हिन्दुओं के संरक्षक हैं। मुझे यकीन है कि लाहौर प्रस्ताव द्वारा बंटवारे की पेशकश के मुताबिक भारत विभाजन से केवल मुसलमानों का ही नहीं, वरन शेष भारत का भी सच्चा कल्याण होगा। आप सोचिए, क्या आपकी नीति व कार्यक्रम पूरे भारत की बर्बादी और जनता के उसी दुःखद व गिरावट का मुख्य कारण नहीं है, जिसकी आपने चर्चा की है और जिसकी मैं सबसे ज्यादा भर्त्सना करता हूँ।"

अगले दिन हुई उनकी बहुचर्चित वार्ता का भी कोई परिणाम न निकला। गाँधी जी ने जिन्ना को लिखा—

"जितना में द्वि-राष्ट्र सिद्धान्त के बारे में सोचता हूँ यह मुझे उतना ही खतरनाक लगता है।"

गाँधी जी को इस बात का डर था कि एक बार इस सिद्धान्त को स्वीकार कर लेने का मतलब होगा भारत को दस राष्ट्रों में बांटने की रहमत अली की दीवानगी को तर्क मिल जाएगा। यह भय कांग्रेस के नेताओं को भी लगा हुआ था।

सन् 1944 ई० को 23 सितम्बर ईद के शुभ अवसर पर जिन्ना और गाँधी की

शिखर बातचीत अपने अंजाम तक पहुँच गई। जिन्ना ने गाँधी जी को लिखा था—

"आपकी अभिलाषाओं का आदर करते हुए मैंने हर दिन पूरी कोशिश की, कि हमारी लम्बी बातचीत व पत्र व्यवहार से आप मेर कायल हो जाएँ मगर दुर्भाग्य से मैं असफल रहा।"

गाँधी जी की भी यही राय थी मगर उन्होंने स्पष्ट रूप से कुछ नहीं कहा, लेकिन उन्होंने जिन्ना को हताश भी नहीं किया।

ऐसा महसूस हो रहा था कि जैसे गाँधी जी एक बहुत बड़ा कदम उठाकर जिन्ना व मुस्लिम लीग के करीब पहुँच जाना चाहते हों मगर जिन्ना ने तिरस्कार व अभिमान वश गाँधी जी की एक बात नहीं सुनी। उन्होंने कहा—

"आपकी दृष्टि में भारत के मुसलमान एक राष्ट्र नहीं हैं। आप नहीं मानते कि पाकिस्तान सोलह प्रान्तों से बनने वाले दो परिक्षेत्रों, उत्तर-पश्चिम तथा उत्तर-पूर्व से मिलकर बना है। हमारे बीच हुई बातचीत व पत्र-व्यवहार से भी मुझे लगता है



*पत्र लिखते महात्मा गाँधी*

कि आप भारत पाकिस्तान विभाजन की बात सिर्फ मुँह से कहते हैं।

अब अचानक ऐन मौके पर आप एक नया सुझाव लेकर आ गए हैं अगर विभाजन होना ही है तो दो भाइयों के बीच बंटवारे के तौर पर किया जाए— लेकिन आपने अब खुद-ब-खुद अपने आधार पर नया प्रस्ताव रखा है इस पर तब तक विचार करना मुश्किल है जब तक आप इसे प्रतिनिधि की हैसियत से नहीं रखते।"

इस पर गाँधी जी ने जिन्ना को लिखा—"एक ऐसी पेशकश खारिज करने से पहले पचास बार सोचें जो पूरी तरह साम्प्रदायिक एकता के हित में की गई है।"

जिन्ना ने इसका जवाब गाँधीं जी के प्रत्येक प्रस्ताव को खारिज करके दिया था।



# शिमला कान्फ्रेंस

सन् 1944 ई०, 25 दिसम्बर के दिन जिन्ना ने बम्बई में अपना सड़सठवाँ जन्मदिन बड़ी सादगी के साथ मनाया। दो दिन बाद उन्होंने गृह नगर के मुसलमान 'चैम्बर्स ऑफ कॉमर्स' के सदस्यों से अपील की—

"मुसलमान व्यापारी समुदाय को तैयार और सक्रिय रहना चाहिए। किसी भी राष्ट्र का सबसे मजबूत स्तम्भ उसकी आर्थिक स्थिति ही होती है। पाकिस्तान वाले इलाकों में आपके लिए एक सम्भावनाओं का विशाल मैंदान पड़ा है। केवल आप ही उन सम्भावनाओं को समझकर उनका पूरा प्रयोग कर सकते हैं।"

सन् 1945 ई०, फरवरी माह में जिन्ना की तबियत थकान के कारण से कुछ ज्यादा ही खराब रहने लगी थी। मजबूर होकर उन्हें फरवरी व मार्च के सभी कार्यक्रम रद्द करने पड़े। गाँधी जी ने जनवरी के महीने से ही बिस्तर पकड़ लिया था।

इधर केन्द्रीय विधान परिषद के चतुर कांग्रेसी नेता भूल भाई देसाई और लियाकत अली खान केन्द्र में एक अंतरिम सरकार बनाने पर सहमत हो गए। जिसमें लीग व कांग्रेस को मन्त्री-परिषद् में सदस्यता और नियन्त्रण के हिसाब से चालीस- चालीस प्रतिशत हिस्सेदारी का प्रावधान किया गया था। शेष बीस प्रतिशत सिखों व अछूतों के लिए छोड़ दिया गया था।

वायसराय व सेनाध्यक्ष के पद अंग्रेजों के पास रहने थे मगर जब जिन्ना को इस बात की जानकारी मिली तो उन्होंने कहा—

"मुझे देसाई की योजना के बारे में कोई जानकारी नहीं है। सम्भवतः नवाबजादा लियाकत अली खान और मिस्टर मूला भाई देसाई के बीच हुई बातचीत से मेरा जोड़ा जाना एकदम आधारहीन है।"

सन् 1945, 25 जून की सुबह 11 बजे के समय लार्ड वैवेल ने अधिकारिक रूप से शिमला कांफ्रेस का उद्घाटन किया। वहाँ भारत के 22 राजनेताओं ने शिरकत की। कांग्रेस की तरफ से उसके अध्यक्ष आजाद ने अपनी पार्टी के गैर-साम्प्रदायिक चरित्र पर जोर दिया। इस पर जिन्ना ने कहा—

"कांग्रेस सिर्फ हिन्दुओं की नुमाइंदगी करती है। लीग पाकिस्तान के बुनियादी उसूल के अतिरिक्त किसी और संविधान पर तैयार नहीं होगी। सहयोग करने की स्थिति से पहले पाकिस्तान के ऊपर फौरी तौर पर सहमति हो जानी चाहिए।"

29 जून की सुबह कांग्रेस की कार्रवाही पुनः शुरू हो गई। वायसराय ने सभी पार्टी के नेताओं से नामों की सूची माँगी। इस पर आज़ाद फौरन तैयार हो गए लेकिन जिन्ना ने इन्कार कर दिया। वह बोले—

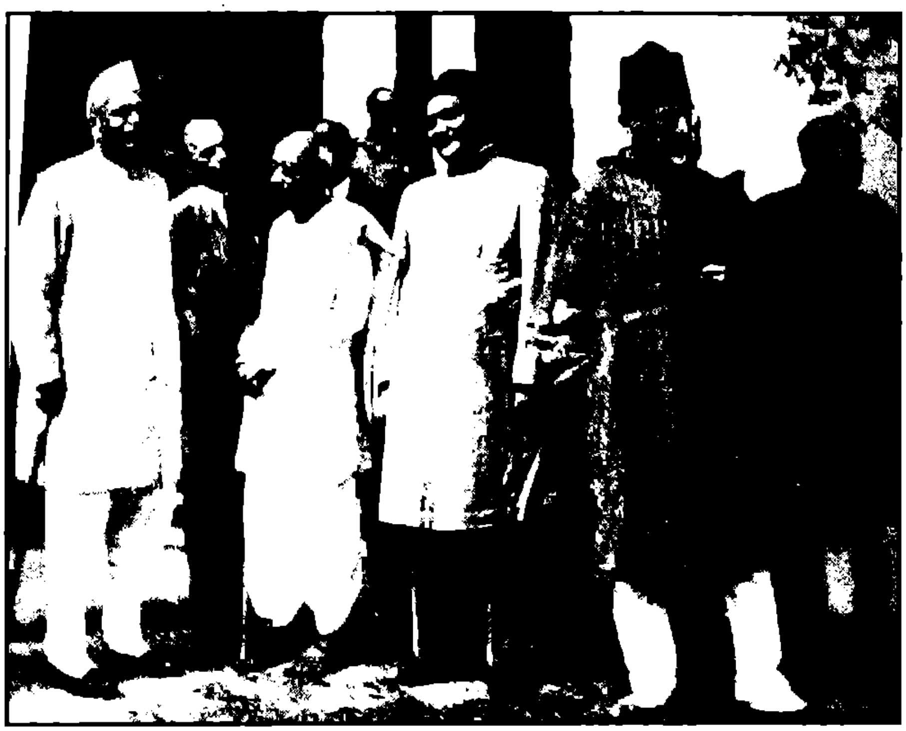
"मैं अपनी कार्यसमिति से परामर्श लिए बिना नामों की सूची नहीं दे सकता।"

14 जुलाई तक कान्फ्रेंस स्थगित हो गई।

9 जुलाई को जिन्ना ने वायसराय को पत्र लिखा—"इस मसले पर बहुत ध्यानपूर्वक गौर करने के बाद कमेटी ने मुझे यह बताने के लिए कहा है कि महामहिम प्रस्तावित कार्रवाई परिषद के सभी मुसलमान सदस्य मुस्लिम लीग के ही होने की गारन्टी देने में नाकाम हैं। कमेटी इसे अपने बुनियादी उसूलों में से एक मानती है और इन हालातों में मुझे खेद है कि मैं नाम भेजने की हालत में नहीं हूँ। अपने बुनियादी उसूलों से हटना मेर लिए असम्भव है।"

वैवेल की शिमला कान्फ्रेस पूरी तरह असफल हो चुकी थी और एक बार फिर भारत की प्रमुख राजनीतिक समस्या के रूप में साम्प्रदायिक समस्या की जटिलता सामने आ गई। पूरे देश के मुसलमानों में पाकिस्तान की माँग का समर्थन बढ़ता ही जा रहा था। साथ-साथ लीग के अध्यक्ष के रूप में जिन्ना की स्थिति मजबूत होती जा रही थी।

14 जुलाई को कांफ्रेस के समापन सत्र में जिन्ना ने कहा—



*शिमला कांफ्रेंस के समय भारतीय नेताओं के साथ जिन्ना*

"पाकिस्तान और एकताबद्ध भारत एक दूसरे के एकदम खिलाफ हैं। भारत के मुसलमानों ने पाकिस्तान प्राप्त करने के लिए कमर कस रखी है।"

अपनी इस हार से थकान महसूस करते हुए वैवेल ने एमरी को लिखा—

"पार्टियों के बीच समझदारी कायम करने के मेर प्रयास नाकाम हो गए हैं और इससे पता चलता है कि खाई कितनी चौड़ी है। सिर्फ समय ही जानता है कि

मेरी कोशिशों से लाभ हुआ है या नुकसान। जिन्ना ने इस मसले पर बहुत गलती की है। वे तंग नज़र और हेकड़ हैं। कांग्रेस डर और उसके प्रति अविश्वास ही जिन्ना की चालाक शक्ति है। संवैधानिक रूप से दूसरे पक्ष के साथ दोस्ताना सहयोग करना उनके वश की बात नहीं है।"

एमरी ने इसके जवाब में लिखा—"शिमला कान्फ्रेस बेकार नहीं गई है। कांग्रेस के नेताओं को एक बार फिर इस हकीकत का एहसास हुआ है कि आप या मैं नहीं, बल्कि मुस्लिम लीग उनकी आकांक्षाओं के रास्ते में रोड़ा है। या तो उन्हें पाकिस्तान की माँग माननी पड़ेगी या फिर किसी न किसी तरह जिन्ना के खिलाफ मुसलमानों का समर्थन हासिल करना पड़ेगा। महज कांग्रेसी मुसलमानों के चेहरे चमकाने से उन्हें कोई फायदा नहीं होने वाला।"

भारत मन्त्री ने सर्दियों में चुनाव कराने का सुझाव देते हुए कहा—

"इसका यह अर्थ बिल्कुल नहीं है कि जिन्ना मुसलमान बहुल प्रान्तों में अपने विरोधियों का सफाया कर देंगे पर यदि ऐसा हो गया तो कौंसिल में सभी मुसलमान सदस्य लीग के ही होने के उनके दावे का विरोध करना कठिन हो जाएगा।"

खुद एमरी, हॉल में ही अपना पहला चुनाव लड़कर हार चुके थे। युद्ध के बाद हुए चुनावों में लेबर पार्टी की जबरदस्त जीत हुई थी।

□



# सन् 1945-46 के चुनाव

सन् 1945 ई०, अगस्त माह में द्वितीय विश्व युद्ध समाप्त हो चुका था। शिमला कान्फ्रेस के बाद नई दिल्ली में गवर्नरों की एक बैठक हुई। जिसमें वैवेल और व्हॉइट ह्यूल को अपना अगला राजनीतिक कदम तय करना था। सर्दियों में होने वाले चुनाव के विरुद्ध उस बैठक में पंजाब के गवर्नर ग्लैंसी ने कहा–

"अगर मुस्लिम लीग को पाकिस्तान के थोड़े संस्करण से अलग नहीं किया गया तो पंजाब में गृहयुद्ध छिड़ जाएगा।"



एकांत मुद्रा में बैठे मुहम्मद अली जिन्ना

यह मानना बंगाल के गवर्नर का भी था; किन्तु इधर जिन्ना को किसी करवट चैन ही नहीं था। उनके दिमाग पर गाँधी जी और उनके तौर तरीकों से घृणा बुरी तरह हावी थी।

जिन्ना के अनुसार गाँधी जी का मतलब था 'जहर और कड़वाहट'। उनका सबसे घृणित उद्देश्य 'ठोक-पीटकर' नीचा दिखाकर हतोत्साहित करना या जिन्ना की उपेक्षा करना तथा उन्हें दरकिनार करना था।

लीग के लिए चुनावी चन्दा जमा करने के लिए जिन्ना ने अगस्त में फिर से अपने गृह नगर में भाषण दिया। उन्होंने कांग्रेस पर आरोप लगाया–

"हर हथकंडा अपनाकर वह मुसलमानों को अखिल भारतीय संघ में फंसा देना चाहती है। कांग्रेस चाहती है कि ब्रिटिश संगीनें उसका काम कर दें और इसीलिए वह एक के बाद एक तरह-तरह के तरीके अपना रही है। कभी वह ब्रिटिश सरकार को मस्का लगाती है, कभी गालियाँ देंती है, कभी मिमियाती है तो कभी धमकियाँ देती हैं; लेकिन हम किसी ऐसे बन्दोबस्त पर राज़ी नहीं होंगे जिसका मतलब हिन्दुओं के लिए आजादी और हिन्दू राज की स्थापना हो। साथ ही जिसका अर्थ मुसलमानों के लिए गुलाम हो।"

श्रोताओं ने जिन्ना को तीन लाख रुपये चन्दा करके दिए।

लेबर पार्टी के पेथिक लॉरेंस ने वैवेल को लिखा–

"निश्चित रूप से अपनी आस्था और सार्वजनिक वक्तव्यों में लेबर पार्टी भारतीय समस्या का समाधान करने के लिए सब कुछ करने को प्रतिबद्ध है। मुझे यकीन है कि मेर साथ ही चुनाव कराने के अपने प्रस्ताव का स्वागत करेंगे। यह प्रस्ताव अपने समर्थन के साथ में एक प्रपत्र के रूप में उनके पास भेज रहा हूँ जिस पर अगले कुछ दिनों तक विचार होगा।"

ग्लैंसी का पूरा प्रयास था कि चुनाव जल्दी न हो, उन्हें पाकिस्तान से डर था।

उन्हें इस बात का पूरा विश्वास था कि मुसलमानी चुनाव पूरी तरह फर्जी मुद्दों पर लड़े जाएगे।

ग्लैंसी विभाजन के बाद होने वाले बड़े पैमाने पर खून-खराबे को देख रहे थे। किन्तु उनकी दूरदर्शिता पर किसी ने ध्यान नहीं दिया।

20 अगस्त, सन् 1945 ई० को नई मन्त्री-परिषद के साथ विचार विमर्श करने के लिए वैवेल को लंदन आने का निमन्त्रण दिया गया।

साथ ही अगली सर्दियों में उन्हें भारत में चुनावों की घोषणा करने का भी अधिकार दिया गया। वैवेल अगस्त खत्म होने से पहले लंदन जा पहुँचे। भारत मन्त्री पोथिक लॉरेंस से उनकी व्हाइट हॉल में डेढ़ घन्टे तक बातचीत होती रही।

वायसराय की दलील के अनुसार सन् 1942 ई० के बाद से भारतीय राजनीतिक दल अपने-अपने नज़रिए को लेकर अत्यन्त कठोर होते चले गए। भारत का कोई भी दल क्रिप्स के प्रस्ताव को स्वीकार करने के लिए राज़ी नहीं है, जहाँ तक संविधान सभा का सवाल है, मुसलमान उनका तब तक बायकाट करते रहेंगे जब तक कि उनकी पाकिस्तान की माँग नहीं मान ली जाती। अगर मान ली गई तो इसका नतीजा हिन्दुओं द्वारा बायकाट से निकल सकता है।

इधर जिन्ना हर वक्त भाषणों में एक सहज और सीधा संदेश देते–

"मुस्लिम लीग ही पूरे भारत के मुसलमानों की अकेली अधिकारिक और प्रतिनिधि पार्टी है तथा लीग की एकमात्र माँग है– पाकिस्तान!"

अक्टूबर माह के अन्तिम सप्ताह में अहमदाबाद की एक जनसभा में उत्साह के साथ नारेबाजी लगाती भीड़ को जिन्ना ने भरोसा दिलाया–

"पाकिस्तान हमारे लिए जिन्दगी और मौत का सवाल है। मेंने चुनाव लड़ने के लिए चाँदी के कारतूसों (धन) की माँग की है जिसके जवाब में बम्बई कहीं अधिक धनी शहर है, के बाद अहमदाबाद का नम्बर है। हर मुसलमान एक ही अल्लाह और एक ही राष्ट्र में विश्वास करता है। वे पाकिस्तान चाहते हैं और वे उसे लेकर ही रहेंगे।

वह उनका तावीज है, उनका मन्त्र है जो उनकी ताकत और शान में बढ़ोत्तरी करेगा पाकिस्तान का चाँद चमक रहा है और हम हर हाल में उस चाँद तक पहुँचकर ही दम लेंगे।"

जिन्ना को इस सभा में मुसलमानों ने दो लाख रुपये भेंट में दिए थे। जिन्ना का कहना था कि हमारा अगला कदम ब्रिटेन से पाकिस्तान के लिए मान्यता की माँग करने का होगा। नवम्बर को जिन्ना ने भविष्यवाणी की–

"मुस्लिम लीग चुनाव में विरोधियों का 'सूपडा' साफ कर देगी।"

इधर कांग्रेस पूरे भारत के लिए तुरन्त स्वाधीनता की माँग करने लगी थी। तब तक बोस का देहान्त रमूसा से ऊपर हुई एक हवाई दुर्घटना में हो चुका था। लेकिन उनके तीन प्रमुख सहयोगी राष्ट्रीय नायकों की तरह उभर आए थे।

इनमें एक हिन्दू, एक सिक्ख और एक मुसलमान था। हथकड़ी, बेड़ियों में जकड़कर इन्हें दिल्ली लाया गया था। जिसके विरोध में बोस की जन्मभूमि कलकत्ता

में दंगे शुरू हो गए। तीस से ज्यादा जानें चली गईं तथा सैकड़ों घायल भी हो चुके थे और न जाने कितनी सम्पत्ति आग व बरबादी की भेंट चढ़ चुकी थी।

उन तीनों का मुकद्दमा शुरू होते ही अंग्रेजों को इस बात का एहसास हो गया था कि आज़ाद हिन्द फौज को इतना प्रचार व इतना प्रमुख मंच देकर उन्होंने कितनी जबरदस्त भूल की है।

जनरल सर कलोड ऑचिनलेक ने 24 नवम्बर, सन् 1945 ई० को एक अत्यन्त गोपनीय पत्र में वैवेल को लिखा था—

"हमें मिल रही लगातार जानकारी इसी तरफ संकेत कर रही है कि अधिकतर फौज रियायती रवैये अपनाने के हक में हैं। अगर आप सहमत हों और इन मुकद्दमों के अन्त में यह प्रमाण मिल जाए कि इन अफसरों ने जो किया, अपना फर्ज समझकर किया, तो इनकी सजा कम भी की जा सकती है।"

इस पत्र से वैवेल को पूरा विश्वास हो गया था कि भारत में ब्रिटिश राज के गिने चुने दिन रह गए हैं। भले ही विश्वयुद्ध जीत लिया हो लेकिन भारत हाथ से निकल गया था।

सन् 1945 ई० को 24 नवम्बर के दिन जिन्ना ने पेशावर में एक मुस्लिम सम्मेलन में भाषण दिया—

"हमारा कोई दोस्त नहीं है, न अंग्रेज और ना ही हिन्दू! इस विषय में हमारा दिमाग एकदम साफ है कि हमें दोनों से लड़ना है। अगर दोनों हमारे खिलाफ हो जाते हैं तो हमें डरना नहीं है। हम उनकी ताकतों से लड़ेंगे और इंशाअल्लाह फतेह हासिल करेंगे।"

दिसम्बर माह में लीग ने केन्द्रीय विधानसभा की सभी तीस सीटों पर जीत हासिल की, जिसमें जिन्ना की सीट भी शामिल थी। हालांकि कांग्रेस को 55 सीटों के साथ बहुमत मिला। मगर वास्तव में चार सीटों पर उसकी हार हुई थी।

खुशियाँ मनाते हुए अपने समर्थकों को जिन्ना ने इस प्रकार आश्वस्त किया—

"वह दिन अब दूर नहीं जब पाकिस्तान तुम्हारे कदमों पर होगा।"

लेबर पार्टी के प्रोफेसर आर० रिचर्ड के नेतृत्व में आए प्रतिनिधि मण्डल से जिन्ना ने नई दिल्ली में 10 जनवरी सन् 1946 में मुलाकात की।

भारत के बंटवारे को लेकर हिन्दुस्तान ही नहीं बल्कि ब्रिटेन भी चिन्तित था। इन विकट हालातों में दक्षिण भारत के ज्यादातर भाग में सूखे की स्थिति अकाल में बदलने लगी थी। जिससे भारत की समस्याएँ और पेचीदा हो गई थी।

बंगाल से शुरू होकर अनाज की कमी सीमान्त तक पर अपना प्रभाव डाल रही थी। वैवेल ने जिन्ना और गाँधी से कहा—

"आप सरकार द्वारा अमेंरिका और संयुक्त राष्ट्र भेजे जा रहे खाद्य प्रतिनिधि मण्डल के साथ जाने के लिए अपने लोगों को नामजद करें।"

स्थिति इतनी बिगड़ चुकी थी कि खाद्यान्न का राशन घटकर प्रतिदिन बारह औंस तक आ गया था। इलाहाबाद से शुरू करके भारत के प्रमुख शहरों में विरोध स्वरूप जुलूस निकाले जाने लगे।

सन् 1946 ई० को 18 फरवरी के दिन बम्बई बन्दरगाह में रॉयल इण्डियन नेवी के ज्यादातर सैनिकों ने बेहतर वेतन की माँग पर हड़ताल कर दी।

अंग्रेजों की नज़र में सभी सैनिक विद्रोही थे। एच० एम० आई० एस० तलवार और एच० आई० एस० लाहौर नामक जहाजों पर कांग्रेस के झण्डे लहराने लगे। बहुत से नौसैनिकों ने अपनी टोपी में कांग्रेस के झण्डे टांग लिए थे। तब वल्लभ भाई पटेल ने दोनों जहाजों पर स्वयं जाकर विद्रोहियों का कोई फायदा किए बिना समर्पण के लिए मनाया।

इस दौरान चुनाव जारी रहे। फरवरी माह के उत्तरार्द्ध में पंजाब के चुनावी नतीजों के हिसाब से लीग को 88 मुसलमान सीटों में से 15 पर सफलता हासिल हुई थी। सिन्ध में भी लीग की यही हालत थी। असम व बंगाल में भी उसे भारी जीत मिली किन्तु सीमान्त प्रान्त में वह हार गई। वहाँ उसे 38 में से 17 सीटें मिली।

कुल मिलाकर लीग को 88 प्रतिशत से ज्यादा वोट मिली जो दुनिया के सामने पाकिस्तान की माँग की वैधता प्रमाणित करने के लिए बहुत थी। महात्मा गाँधी ने कहा–

"ये सब भारत में जन्में लोगों के वंशज हैं, जिन्ना एक ईमानदार इंसान हैं। पर उनका तर्क पूरी तरह से गलत है। विशेष रूप से इसलिए कि वह एक तरह के उन्माद की गिरफ्त में हैं क्योंकि खुद मुझे भी उन्मादी और शक्की कहा जाता है। इसलिए में जिन्ना की उन्मादी होने की इज्जत करता हूँ।

अगर मेरा बेटा मुसलमान बन जाए तो उसकी राष्ट्रीयता बदल जाएगी। मिस्टर जिन्ना को पहली सरकार गठित करने दी जाए और वे निर्वाचित प्रतिनिधियों में से अपनी सरकार के कारकुन चुनें। उनकी औपचारिक नियुक्ति वायसराय करें मगर वे जिन्ना के ही चुने हुए हों, अगर वो ऐसा करने को तैयार न हों तो सरकार बनाने का मौका कांग्रेस को दिया जाए। अन्तरिम सरकार पूरी तरह से राष्ट्रीय हो, मिस्टर जिन्ना, जिन्हें चाहें अपनी सरकार के लिए चुने। उन्हें विधानसभा सदस्यों के बीच से चुना जाएगा और विधानसभा के बहुमत के प्रति वे जवाबदेह रहेंगे।"

पेथिका लॉरेंस ने कहा–"जिन्ना की पार्टी के पास विधानसभा में बहुमत तो है ही नहीं। सरकार गठित करने की सूरत में उनके ज्यादातर मन्त्री दूसरी पार्टी के भी होंगे।"

इस पर गाँधी जी का जवाब था–"इन हालातों से बचा नहीं जा सकता।"

अगली सुबह दस बजे जिन्ना का मिशन से सामना हुआ तो जिन्ना बोले–

"भारत अपने लम्बे इतिहास में शायद ही कभी एकताबद्ध रहा हो। किसी भी मुसलमान से हाथ मिलाने के बाद हिन्दू हमेंशा अपने हाथ धोता है।"

जबकि खुद जिन्ना को किसी से हाथ मिलाने के बाद हाथ धोने की आदत थी–

"कोई भी हिन्दू मुझे अपनी इमारत का कमरा नहीं देगा। हिन्दू समाज व दर्शन से ज्यादा बहिर्वेशनकारी दुनिया में कुछ नहीं है। भले ही आप दस करोड़

मुसलमानों को 25 करोड़ ऐसे लोगों के साथ कैसे रख सकते हैं जिनकी जीवन शैली एकदम अलग है। मुसलमानों का एक ही अल्लाह पर यकीन है वे इन सारी बराबरी और मानवीय भाईचारे में आस्था रखते हैं। हिन्दुओं की इनमें से किसी उसूल पर आस्था नहीं होती।"

क्रिप्स व पेथिक लॉरेंस ने अपनी तरफ से प्रतिरक्षा के सवाल पर जिन्ना को घेरने की पूरी कोशिश की मगर जिन्ना ने वकालती दृढ़ता दिखाते हुए पूरी सम्प्रभुता प्राप्त पाकिस्तान की माँग नहीं छोड़ी।

तब क्रिप्स ने लीग व कांग्रेस के सामने एक प्रस्ताव रखा, जो तीन भागों में था। पहला भाग भारत को तीन हिस्सों में बाँटता था—हिन्दू बहुल प्रान्त, मुसलमान बहुल प्रान्त और राजे रजवाड़ों का प्रान्त, इनके हाथों में प्रतिरक्षा, वैदेशिक मामले और संचार के विभाग रहने थे।

प्रस्ताव के दूसरे भाग में हिन्दुस्तान में से पाकिस्तान व भारत दो भागों की रचना होनी थी। भारतीय राज्यों से कहा जाता था कि वे इनमें से किसी के साथ भी संघबद्ध हो जाएँ। पाकिस्तान की सीमाएँ उत्तर-पश्चिम और उत्तर पूर्व के क्षेत्रों की आबादी की धार्मिक पहचान के आधार पर निर्धारित होनी थी।

पाकिस्तान का विधेय केवल धर्म पर आधारित द्वि-राष्ट्र सिद्धान्त होने से प्रस्ताव का दूसरा भाग यह कहता था—

"अगर पाकिस्तान को बेहतर आर्थिक आधार देने के लिए उनमें गैर मुस्लिम आबादी के इलाके जोड़े गए तो यह द्वि-राष्ट्र सिद्धान्त के विरुद्ध चला जाएगा। अगर बड़े-बड़े अल्पसंख्यक समूह उनकी इच्छा के बिना उनमें शामिल कर दिए गए, तो इससे पाकिस्तान की स्थिरता में कोई वृद्धि नहीं होगी।

वक्त बहुत कम था, इसलिए क्रिप्स ने सभी पार्टियों के नेताओं के सामने ये दोनों योजनाएँ रखने का प्रस्ताव करते हुए कहा—

"कुछ दिनों के अन्दर पहली या दूसरी योजना स्वीकर करने के बारे में अपनी प्रतिक्रिया से मिशन को अवगत करा दें। अगर दोनों में से कोई भी योजना समान सहमति प्राप्त करने में असफल रहती है तो हमें उस योजना पर फौरन अमल करना चाहिए जिस पर सबसे ज्यादा सहमति बनी है। आम सहमति के अभाव में हमें अपना सारा प्रभाव वह योजना लागू करने में लगाना चाहिए जिसे अपेक्षाकृत सबसे ज्यादा समर्थन प्राप्त हुआ हो।"

सन् 1946 ई० को 16 अप्रैल के दिन पेथिक लारेंस ने जिन्ना से कहा—

"आपके द्वारा की जा रही पाकिस्तान की माँग स्वीकार लिए जाने का अवसर न के बराबर है। आपको ऐसी कोई उम्मीद नहीं करनी चाहिए कि आपको वे दोनों क्षेत्र दे दिए जाएँगे जिनके ज्यादातर हिस्से में गैर मुस्लिम रहते हैं और जिनके लिए उन्होंने पूर्ण सम्प्रभुता का अनिवार्य दावा किया है।"

यह बात कहकर पेथिक लॉरेंस ने पहली और दूसरी योजना जिन्ना के सामने रखते हुए पूछा—

"आपको दोनों में से कौन-सी पसन्द है?"

जिन्ना ने पूछा—"ऑल इंडिया यूनियन की प्रस्तावित योजना के तहत पाकिस्तान का क्या बनेगा?"

भारत मन्त्री ने कहा—"पहला प्रस्ताव एक छोटे पाकिस्तान का है जिसके पास सम्प्रभुता होगी और सन्धि आधारित बन्दोबस्त भी होगा—एक बड़े पाकिस्तान का। दूसरा पाकिस्तान हिन्दुस्तान की समानता की शर्तों पर एक ऑल इंडिया यूनियन के तहत बनेगा।

दूसरे विकल्प के तहत दो महासंघ बनाए जाएँगे जिन्हें एक संघीय केन्द्र के जरिए आपस में जोड़ा जाएगा। केन्द्र दोनों राज्यों की मौजूदगी के बावजूद साम्प्रदायिक सन्तुलन कायम रखेगा। महासंघ संघीय कार्यपालिका के सदस्यों को चुनेंगे।"

जिन्ना ने पूछा—"अगर प्रतिनिधित्व बराबर हो गया तो फिर फैसले करने का ढंग क्या होगा?"

सर क्रिप्स ने उत्तर दिया—"अगर किसी बात पर सहमति नहीं हो सकी तो यह मामला महासंघों के पास भेज दिया जाएगा।"

जिन्ना के मन में इस बन्दोबस्त को लेकर शक था। उन्हें यह बात जँची नहीं। उन्होंने कहा—

"कागज पर कितनी भी समानता का प्रावधान कर दिया जाए, वह कारगर नहीं होगी। क्या नौकरियों में प्रत्येक समुदाय को समान हिस्सेदारी मिलेगी?"

इस बारे में भारत मन्त्री ने पूछा—"लगता है आप दूसरे विकल्प पर विचार कर रहे हैं?"

जिन्ना ने जवाब दिया—"अगर एक बार पाकिस्तान पर उसूली सहमति हो जाती तो उसके भू-क्षेत्र पर विचार किया जा सकता है। हमारा दावा छः प्रान्तों पर है। मैं इलाकों के सवाल पर चर्चा कर सकता हूँ।"

भारत मन्त्री ने कहा—"हम स्पष्ट करना चाहते हैं कि प्रतिनिधिमंडल यह मानकर नहीं चल रहा है कि कांग्रेस इन दोनों विकल्पों को स्वीकार कर लेगी।"

जिन्ना बोले—"मेर ख्याल से कांग्रेस को कोई भी हानि नहीं होगी। भारत की एकता तो एक बहाना है।"

तीनों अंग्रेजों ने जिन्ना से अपनी बात मनवाने की पूरी कोशिश की, मगर पेथिक लॉरेंस क्रिप्स और एलेक्जेंडर (भारत मन्त्री) उनके कानूनी कौशल के सामने कुछ नहीं कर पाए।

अप्रैल माह सन् 1946 ई० के आरम्भ में प्रान्तीय और केन्द्रीय विधान सभाओं के लिए चुने गए मुस्लिम लीग के सभी विधायक एक औपचारिक शपथ लेने और उस पर हस्ताक्षर करने के लिए दिल्ली में जमा हुए थे। परोपकारी और रहमदिल अल्लाह के नाम पर प्रत्येक व्यक्ति ने अपने संकल्प के साथ घोषणा की—

"भारतीय उपमहाद्वीप में मुसलमान राष्ट्र की सुरक्षा मुक्ति और नियति केवल पाकिस्तान प्राप्त करने में निहित है। मुझे पूरा यकीन है कि मेरा लक्ष्य न्यायपूर्ण और उचित है। अगर मुझे किसी खतरे, इम्तिहान अथवा कुर्बानी से भी गुजरना पड़े तो में हरगिज नहीं हिचकूँगा।"

जोरदार नारों के साथ लीग के प्रत्येक सदस्य ने एक स्वर में यह हलफ उठाया।

उसके पश्चात जिन्ना ने उन्हें याद दिलाया—"हमने इस महान् और ऐतिहासिक अधिवेशन में एक पाक हलफ उठाया है कि हम अच्छी से अच्छी उम्मीद करेंगे और बुरे से बुरे के लिए तैयार रहेंगे।"



पत्र पढ़ते मुहम्मद अली जिन्ना

उसी रात शपथ प्रस्ताव पेश करते हुए बंगाल के नवाब सुहरावर्दी ने एक सवाल पूछते हुए अपनी बात आरम्भ करते हुए कहा—

"अब आगे कौन-सा कदम उठाया जाए? आज में ईमानदारी से ऐलान करता हूँ कि बंगाल के मुसलमान जंग करने के लिए तैयार हैं। वे इसके लिए अपनी जान भी दे सकते हैं।"

खलीकुज्जमा बोले—"अब अपनी नियति मुसलमान खुद ही तय करेंगे।"

ममदोत के नवाब जो कि पंजाब से आए हुए थे, उन्होंने अपना हाथ उठाकर कहा—

"हमसे पूछा जा रहा है कि हम पाकिस्तान की हिफाजत कैसे करेंगे। में कहता हूँ कि अगर पंजाब के लम्बे चौड़े सिपाही हमले से ब्रिटेन की हिफाजत कर सकते हैं तो वे अपना घर-परिवार भी बचा सकते हैं।"

नेता खान अब्दुल कय्यूम खान ने दहाड़कर इस बात का दावा किया था—

"खुदा के फज़ल से हमारे पास संघर्ष करने के लिए पाकिस्तान के रूप में एक झण्डा, एक नेता, एक मंच और एक आदर्श है। हम तो अन्तिम आदेश का इन्तिज़ार कर रहे हैं कि पाकिस्तान को हासिल करने के लिए जो भी किया जा सकता है, वह किया जाए।"

इधर सरदार शौकत हयात खान ने जिन्ना को आश्वस्त किया था—

"में पंजाब के फौजियों की तरफ से बोल रहा हूँ और कहता हूँ कि मोर्चे से वापस भेजे गए साढ़े सात लाख फौजी पाकिस्तान हासिल करने का हलफ उठा चुके हैं। सर, केवल आप हमें रोके हैं हमें आदेश दीजिए। सन्देह रखने वालों को हम दिखाना चाहते हैं कि अपने पाकिस्तान की हिफाजत के लिए हम क्या कर सकते हैं?"

सर फिरोज़ खान नून ने कहा—"न अंग्रेजों को इसका इमकान है और न हिन्दुओं को कि पाकिस्तान प्राप्त करने के लिए हम किस हद तक जा सकते हैं।"

अपने वफादार साथियों की बात सुनकर जिन्ना ने उन्हें समझाया कि पाकिस्तान को प्राप्त करने के लिए उन्हें क्या करना होगा?

24 अप्रैल के दिन मन्त्री परिषद मिशन ने बातचीत का दूसरा दौर शुरू किया।

शिमला वार्ता में सबने एक ही बात की—

"लीग की दृष्टि में राजनीतिक जीवन का आधार द्वि-राष्ट्र सिद्धान्त था और कांग्रेस एकात्मक सरकार के दर्शन पर चल रही थी।"

छः मई को सुबह सवेरे ही जिन्ना व नेहरू के बीच घमासान बहस छिड़ गई। सन् 1946 ई० को 8 मई के दिन पेथिक लॉरेंस ने लीग व कांग्रेस की सहमति के लिए नौ प्रस्तावित बिन्दुओं की प्रतियाँ भेजी।

गाँधी जी ने सहमति के लिखित बिन्दुओं को ख़ारिज कर दिया। जिसका अन्जाम यह हुआ कि मन्त्री परिषद मिशन फिर से नई सिरे से नई योजनाएं बनाने के लिए मजबूर हो गया लेकिन उसका भी कोई परिणाम नहीं निकला था। गतिरोधों के इस खेल में अब मिशन के लिए अंतिम से अंतिम समाधान पेश करने की नौबत आ चुकी थी।

अब निर्णय अधिक टाला नहीं जा सकता था। प्रधानमन्त्री भी अपने मंत्रियों से प्रगति का ब्योरा माँग रहे थे।

बृहस्पतिवार की रात 19 मई सन् 1946 ई० को मन्त्री-परिषद मिशन ने नई दिल्ली से अपनी योजना का सारी दुनिया के लिए प्रसारण भेजा—

"पाकिस्तान के पूरी तरह स्वाधीन सम्प्रभु राज्य के विकल्प की समीक्षा की और उसे विभिन्न कारणों से अस्वीकार किया। उसमें एक वजह यह भी थी कि इससे अल्पसख्यकों की साम्प्रदायिक समस्या हल होने के बजाए ऐसी ही अन्य समस्याएँ जैसे कि सिख समस्या उत्पन्न हो जाएगी।

इसके अलावा पाकिस्तान बनाने से वह फौजी आर्थिक तथा प्रशासनिक एकता अन्तिम रूप से भंग हो जाएगी।"

मन्त्री-परिषद मिशन ने अपनी अन्तिम योजना का उपसंहार करते हुए कहा—

"भारत की जनता तथा नेताओं के सामने अब पूर्ण स्वाधीनता का उपयोग करने का अवसर है। हम अन्त में उनसे यह कहना चाहते हैं—हमें, हमारी सरकार तथा देशवासियों को आशा थी कि भारत की जनता अपनी इच्छानुसार नया संविधान बनाने की पद्धति पर सहमत हो जाएगी लेकिन भारतीय पार्टियों के साथ मिलकर हमारे काफी प्रयास के बावजूद यह मुमकिन नहीं हो पाया। यही काम अब किया गया है। इसलिए हम आपके सामने यह प्रस्ताव रखते हैं जिसके मुताबिक हमें यकीन है कि आप कम से कम वक्त में स्वाधीनता प्राप्त कर सकते हैं और आन्तरिक अशान्ति का खतरा भी नहीं रहेगा।

हो सकता है कि सभी पार्टियाँ इन प्रस्तावों से पूरी तरह सन्तुष्ट हों लेकिन इन प्रस्तावों को न मानने की सूरत में जो हो सकता है उस पर विचार कीजिए। इसके लिए अराजकता हिंसा और गृहयुद्ध के खतरे का सामना भी करना पड़ सकता है।

यह अशान्ति कितनी लम्बी चलेगी, उसका क्या अन्जाम होगा? इस बात का अनुमान किसी को भी नहीं। लेकिन इतना निश्चित था कि यह अपने साथ लाखों स्त्रियों, पुरुषों व बच्चों की तबाही लेकर आएगी।

हम उन सभी लोगों से अपील करते हैं कि जिनके दिल में भारत के अच्छे

भविष्य की कल्पना है, वे अपने समुदाय और अपने हित के परे जाकर सोचें और चालीस करोड़ भारतवासियों पर ध्यान दें।

हम आपके साथ मिलकर उम्मीद करते हैं कि दुनिया के महान राष्ट्रों के बीच आपकी समृद्धि भी बढ़ेगी और आपका भविष्य आपके अतीत से भी शानदार होगा।

जिन्ना ने 18 मई को श्रीनगर से फोन करके बताया कि मिशन के वक्तव्य के खिलाफ मुसलमानों में जबरदस्त प्रतिक्रिया हो रही है।

इधर गाँधी जी ने अपने पत्र में मिशन से पूछा जो इस प्रकार था—

"क्या प्रस्तावित संविधान सभा की सिफारिश मानने के लिए उसके सदस्य बाध्य होंगे, इस बारे में आप क्या सोचते हैं? कानूनी स्थिति तो में जानता हूँ, में तो यह प्रश्न घटक विरोध का आदर करने के लिहाज से पूछ रहा हूँ।"

वैवेल का विचार था कि यह पत्र लिखकर कांग्रेस द्वारा प्रान्तों के घटक समूहों की अवधारणा खारिज करने के लिए पहला कदम उठा दिया गया है।

5 जून के दिन लीग की कौंसिल हुई जिसमें मिस्टर जिन्ना ने कहा—

"मैं और कार्यसमिति के दूसरे सदस्य चिंतित हैं। यदि मुस्लिम लीग ने प्रस्ताव स्वीकार कर लिए और कांग्रेस ने न किए तो क्या होगा?"

वायसराय ने कहा था—"कांग्रेस का हम कोई भी इंकार सहन नहीं कर सकते और अगर कांग्रेस ने सहमति नहीं दी तो अन्तरिम सरकार मुस्लिम लीग के सुपुर्द करके उसे हर तरह का आवश्यक समर्थन देंगे।"

दूसरे दिन जिन्ना ने अपनी लीग कौंसिल में बोलते हुए कहा था—

"अब मुस्लिम राष्ट्र की संसद के रूप में यह फैसला करना आपका कार्य है। मैं फिर कहता हूँ—देर से न तो ब्रिटिश सरकार को लाभ होगा और ना ही हिन्दुओं को। अगर वे आज़ाद होना चाहते हैं तो उन्हें जल्द समझना होगा कि पाकिस्तान देने के लिए तैयार हो जाना ही इसका सबसे आसान रास्ता है।

ज्यादातर भारत में हिन्दुओं के दिमाग में अल्लम-गल्लम भरा हुआ है। इस बीमारी का कोई उपाय भी नहीं हो सकता। अगर कोई इंसान विभ्रम का शिकार है तो फिर उसके लिए पागलखाना ही बचता है। हिन्दुओं की हेकड़ी उत्पीड़नकारी प्रवृत्ति तथा निरकुंशता के पीछे यही विभ्रम है। मगर मुझे लगता है कि उसका यह रवैया ढर्रे पर आ जाएगा। अगर नहीं आता तो फिर हमें इसके लिए कुछ करना होगा।"

छः जून से पहले ही मुस्लिम लीग की कौंसिल ने मन्त्री-परिषद मिशन की योजना भारी बहुमत से स्वीकार कर ली। विगत वर्ष शिमला में कांग्रेस समतुल्यता पर तैयार हो गई थी लेकिन अब स्थिति दूसरी थी। युद्ध के कारण एक आपात्कालीन सरकार की आवश्यकता थी क्योंकि कांग्रेस सामान्य सीटों पर जीत चुकी थी, अतः लीग के लिए समतुल्यता का कोई सवाल ही नहीं उठ रहा था।

वायसराय से जिन्ना ने एक घन्टा बातचीत की। यह बातचीत 7 जून को हुई। जिन्ना ने कहा कि वे पाँच लीग सदस्यों तथा दो अन्य सदस्यों से गठित अन्तरिम

सरकार में खुद अपने लिए प्रतिरक्षा विभाग और अपने दो अनुयायियों के लिए विदेश व नियोजन विभाग चाहते हैं।

जिन्ना ने वायसराय से पूछा—"अगर वे अन्तरिम सरकार के सदस्य हो गए तो फिर उनकी विधानसभा की सीट का क्या होगा?"

यह सुनकर वायसराय ने जवाब दिया—"यदि आप अन्तरिम सरकार के अंग बन गए तो आपके मुस्लिम लीग के अध्यक्ष बने रहने पर आपत्ति नहीं की जाएगी।"

आज़ाद और नेहरू ने दस जून को मन्त्री-परिषद से बातचीत की। दोनों ने समतुल्यता के सिद्धान्त का विरोध किया। उसके बाद क्रिप्स ने अन्तरिम मन्त्री-परिषद में दो उपराष्ट्रपति बनाने का सुझाव रखा। उनका विचार था—जिन्ना व नेहरू बारी-बारी से पद सम्भालें लेकिन इस पर जिन्ना बोले—

"मैं मिस्टर नेहरू या कांग्रेस के किसी भी नेता से अन्तरिम सरकार के बारे में तब तक बात नहीं करूंगा जब तक कि कांग्रेस मिशन के प्रस्तावों को स्वीकार न कर ले।"

जिन्ना यह जानते थे कि कांग्रेस समतुल्यता प्रस्ताव नहीं मानेगी। इसीलिए वह इस प्रस्ताव पर जोर दे रहे थे ताकि खुद को पाक-साफ साबित कर सकें।

कांग्रेस और लीग के मध्य घमासान चल रहा था। यह देखकर गाँधी जी ने वैवेल से कहा—

"मेरे ख्याल से आप दो घोड़ों पर सवारी करना चाहते हैं मगर इसमें आपको कामयाबी नहीं मिल सकती। या तो कांग्रेस के नामों की सूची चुन लीजिए या फिर लीग की। मगर ईश्वर के लिए ऐसा बेतुका मिश्रण मत बनाइये कि उसे बनाने के चक्कर में भीषण विसफोट हो जाए। जैसा भी हो आप अपना समय निर्धारित कीजिए और जब वह पूरा हो जाए तो हमसे कहिए कि आप लोगों का वक्त ख़त्म हो गया है। मुझे उम्मीद है कि आप समझ गए होंगे।"

लेकिन वैवेल की दृष्टि में गाँधी जी एक बेहद चालाक राजनीतिज्ञ थे। इधर लंदन में ब्रिटिश मन्त्री-परिषद भारत में चल रही बातचीत भंग होने के फौजी परिणामों पर विचार कर रही थी।

मन्त्री-परिषद इस बात को स्वीकारा नहीं कर रही थी कि कांग्रेस द्वारा मिशन के साथ असहयोग करने पर दक्षिणी भारत को आजाद कर देना चाहिए और उत्तर-पश्चिम व उत्तर-पूर्व पर निर्भर होते हुए पाकिस्तान को अपने हाथ में रखना चाहिए।

किसी न किसी तरह मन्त्री मिशन नई दिल्ली में एक अन्तरिम सरकार स्थापित करना चाहता था। जिन्ना, गाँधी व नेहरू की पेथिक लॉरेंस, क्रिप्स और वैवेल से बातचीत होती रही। जिसकी एक भी बैठक नहीं हो पाई थी।

गाँधी जी कांग्रेस में सभी समुदाय के लोगों को शामिल करना चाहते थे क्योंकि वह किसी एक सम्प्रदाय के नेता नहीं थे। जबकि जिन्ना केवल मुस्लिम समुदाय के नेता थे। वे कांग्रेस से समझौता करने के लिए चाहते थे कि कांग्रेस के मुस्लिम सदस्यों को मान्यता न दी जाए ताकि कांग्रेस साम्प्रदायिक रूप से एकता का प्रतीक

नहीं उठाया। आज कांग्रेस और ब्रिटेन की मिली-भगत से हमें मजबूरन यह कदम उठाना पड़ रहा है। हम पर दो मोर्चों से हमला हो रहा है। आज हमने संविधानों और संवैधानिक तौर तरीकों को अपना आखिरी सलाम कह दिया है। हम जिन दो पक्षों से समझौता बातचीत कर रहे थे उन्होंने पूरी बातचीत के दौरान हम पर पिस्तौल तान रखी थी। एक की पिस्तौल के पीछे सत्ता और मशीनगनें थीं तो दूसरे की पिस्तौल के पीछे असहयोग और सविनय अवज्ञा आन्दोलन शुरू करने की धमकी दी। हमें इन हालातों का मुकाबला करना ही होगा। हमारे पास भी एक पिस्तौल है।"

जिन्ना के बारे में उग्र बातों को जानकर पेथिक लॉरेंस चिन्तित हो उठे। लेकिन वैवेल, जिन्ना के क्रोध और लीग की हिंसक कार्रवाही की अहमियत कम करके आंक रहे थे।

वैवेल ने पेथिक लॉरेंस से कहा—"आप मन्त्री-परिषद को बता दें कि जिन्ना को अभी बुलाना उचित नहीं होगा। अगर मैंने जिन्ना को अभी बुलाया तो इसे धमकी के कारण घबराहट में उठाया गया कदम माना जाएगा। इस प्रकार जिन्ना का रुतबा बढ़ेगा, मेरी राय है कि जिन्ना को अकेले छोड़ देना चाहिए।"

लीग की कौंसिल की बैठक के बाद डेली टेलीग्राफ के एक संवाददाता ने मिस्टर जिन्ना से पूछा—

"आपका सीधी कारवाई से क्या-क्या मतलब है?"

जिन्ना ने उत्तर दिया—"सामूहिक तौर पर गैर कानूनी आन्दोलन किया जाएगा।"

लेकिन उस संवाददाता के द्वारा लंदन में भेजे गए तार में जिन्ना ने 'गैर कानूनी' की जगह गैर संवैधानिक लिख दिया था।

शुक्रवार 16 अगस्त, सन् 1946 ई० को लीग की कार्यसमिति ने 'आम मुस्लिम हड़ताल' करने का फैसला किया। वायसराय के सचिव ने वैवेल को सतर्क करने की कोशिश की मगर वैवेल लापरवाह बना रहा।

सन् 1946 ई० 6 अगस्त को वैवेल ने कांग्रेस अध्यक्ष के रूप में नेहरू को सरकार बनाने का निमन्त्रण दिया जिसे नेहरू ने स्वीकार कर लिया।

नेहरू ने 13 अगस्त को जिन्ना से अस्थायी गठजोड़ कर सरकार गठन के लिए सहयोग माँगा। फलस्वरूप, जिन्ना के आवास पर नेहरू व जिन्ना में 15 अगस्त की शाम को छः बजे बातचीत होना तय हो गया; लेकिन उन दोनों की बातचीत कामयाब न हो पाई क्योंकि जिन्ना अपनी जिद्द पर अड़े थे कि मन्त्री-परिषद में कांग्रेस के मुस्लिम सदस्य शामिल नहीं होंगे।

सन् 1946 ई०, 16 अगस्त शुक्रवार के दिन हावड़ा की जूट मिलों में काम करने वाले मुसलमानों मजदूरों का शहर में आगमन आरम्भ हो चुका था। वे सीधे कार्रवाही दिवस मनाने के लिए ओकटर लूनी के नीडिल स्मारक पर होने वाली विशाल जनसभा की तरफ बढ़ रहे थे। इस सभा को बंगाल के मुख्यमन्त्री सुहार

वर्दी और लीग के अन्य नेता सम्बोधित करने वाले थे।

इधर हिन्दुओं ने तांगा और बैलगाड़ियाँ पुलों के समीप मुसलमानों को रोकने के लिए अवरोध खड़ें कर दिए थे, पर कलकत्ता का फौजी दस्ता अपने ब्रिगेडियर जे० पी० सी० मेकिनले के हुक्म पर बैरकों में पड़ा था। भारत का सबसे बड़ी आबादी वाला और साम्प्रदायिक दृष्टि से सर्वाधिक संवेदनशील शहर कलकत्ता असुरक्षित पड़ा था। सुहारवर्दी ने भी सरकारी कर्मचारियों को तीन दिन की असाधारण छुट्टी पर भेज दिया था।

परिणामतः पूरे शहर में साम्प्रदायिक अशान्ति फैल गई। दंगा हो गया। शाम के छः बजे दंगा प्रभावित क्षेत्रों में कर्फ्यू लगा दिया गया। मेंजर लिवरमोर के अनुसार—

"कलकत्ता युद्ध के मेंदान में बदल चुका था, एक तरफ भीड़ की हुकूमत थी दूसरी तरफ सभ्यता और भद्रता का हिंसाग्रस्त इलाके में ज्यादातर निर्धन, नीची जाति के निरक्षरों की जान गई थी या उन लोगों को जान से हाथ धोना पड़ा था। जो लुटेरों और चील कौवों की भांति टूट पड़ने वाली भीड़ से जान-माल की हिफाजत करने के मामले में कमजोर साबित हुए थे।"

भारत की पूर्वी कमान के इन्चार्ज लेफ्टिनेंट जनरल सर फ्रांसिस टकर को मिली खुफिया रिपोर्ट के अनुसार उस दिन दोपहर बाद लूनी के स्मारक पर जमा मुसलमानों की भीड़ को सम्बोधित करके सुहरावर्दी ने कहा—

मन्त्री-परिषद मिशन एक धोखा था, अब हम देखेंगे कि अंग्रेज मिस्टर नेहरू से बंगाल पर कैसे हुकूमत करवाते हैं। मुक्ति हासिल करने के लिए सीधी कार्रवाही दिवस मुसलमानों के संघर्ष का पहला कदम साबित होगा। आप सभी लोग जल्द से जल्द अपने घर लौट जाएँ। मेंने सभी प्रबन्ध कर दिए ताकि पुलिस हमारे रास्ते में बाधा न उत्पन्न कर सके।"

इस रिपोर्ट में आगे बताया गया—"हमारे गश्ती खुफिया दलों ने देखा है कि उस भीड़ में मुसलमान गुण्डे-भारी संख्या में थे। सभा समाप्त होते ही उनकी संख्या बढ़ गई थी। सभा के समापन पर वह भीड़ बाजारों की तरफ बढ़ गई और तुरन्त हिन्दू घरों व दुकानों को जलाने, लूटने में लग गए।

शाम सवा चार बजे कोर्ट स्थित मुख्यालय ने 'रेड' कोडवर्ड प्रसारित किया। जिसका मतलब था—पूरे कलकत्ता में वारदातें हो रही हैं।

19 अगस्त सोमवार के दिन मेंजर लिवरमोर की प्लाटून ने एक चौराहे से डेढ़ सौ से ज्यादा लाशें हटाईं। एक कम्पनी सेक्टर से कुल पाँच सौ सात लाशें मिलीं। उस दिन की रात तक सड़ती हुई लाशों से कलकत्ता इतना विचलित हो चुका था कि बंगाल की सरकार ने एक लाश को ठिकाने लगाने के लिए सैनिकों को पाँच रुपये देने की घोषणा कर डाली थी।

कलकत्ता में हुए खौफनाक हत्याकाण्ड में जितने लोग मारे गए थे इसकी अनुमानित संख्या 16 से 20 तारीख तक 16 हजार के आस-पास लगायी जाती

है। कई दिनों तक मर्दों, औरतों, बच्चों और घरेलू जानवरों की भीड़ हावड़ा रेल रोड स्टेशन की तरफ जाती दिखाई दे रही थी।

जब ट्रेनों में जगह नहीं बची तब मुसलमान और हिन्दू अलग-अलग होकर कंक्रीट के फर्श पर जा बैठे। यह भारत पाकिस्तान के बंटवारे की पहली झलक थी।

अगस्त माह के उत्तरार्द्ध में एक विदेशी संवाददाता ने जिन्ना से कलकत्ता के नरसंहार के बारे में पूछा तो उन्होंने कहा–

"अगर कांग्रेस की हुकूमत मुसलमानों का दमन और उत्पीड़न करती रही तो अशान्ति पर काबू पाना मुश्किल हो जाएगा। मेरी सलाह में पाकिस्तान की स्थापना के अलावा कोई विकल्प नहीं है। हम पाकिस्तान के गैर मुसलमान और हिन्दू जाति अल्पसंख्यकों की देखभाल करने की गारण्टी लेते हैं। इनकी संख्या करीब ढाई करोड़ होगी।

इनके हित की हर तरीके से हिफाजत की जाएगी। भारत को जल्दी से जल्दी सच्ची आज़ादी दिलाने और उपमहाद्वीप में रहने वाले सभी लोगों के कल्याण और खुशी का यही ढंग हो सकता है।"

□



# जिन्ना की हाँ और ना

वैवेल ने 24 अगस्त के दिन घोषणा की—

"जवाहर लाल नेहरू और उनकी पसन्द की तेरह सदस्यीय अन्तरिम सरकार सितम्बर की शुरुआत से कार्य करना शुरू कर देगी।"

मन्त्री-परिषद में नेहरू की तीन गैर-लीग मुसलमान भी थे। इनमें से सर शराफात अहमद खान को शिमला में मुस्लिम लीग के दो युवा कट्टरपंथियों ने एक हमले में चाकू से सात बार गोद डाला था।

इधर जब जिन्ना ने वैवेल की घोषणा सुनकर यह ऐलान किया—

"वायसराय ने मुस्लिम लीग और मुसलमान भारत पर भारी चोट की लेकिन मुझे विश्वास है कि भारत के मुसलमान दृढ़ता और साहस के साथ इसे झेल लेंगे। इस अन्तरिम सरकार में अपने न्यायपूर्ण और सम्मानजनक भागीदारी हासिल करने में नाकाम रहने से उन्हें सबक मिलेगा। में अभी भी कहता हूँ कि उन्होंने जो कदम उठाया है उसमें न तो कोई अक्लमन्दी दिखाई है और न ही राजनीतिज्ञता का परिचय दिया है।"

इसके खतरनाक और गम्भीर नतीजे निकल सकते हैं ऊपर से उन्होंने तीस मुसलमानों की नामौजूदगी करके हमारे आहत मन को और अपमानित किया है जबकि उन्हें पता है कि उन्हें मुस्लिम लीग का विश्वास हासिल नहीं है।

इसके बाद वैवेल ने नेहरू और गाँधी से अपील की कि वे घटक समूह बनाने का नया प्रस्ताव स्वीकार कर लें लेकिन गाँधी जी ने साफ इन्कार कर दिया। इधर घनश्याम दास बिड़ला ने क्रिप्स को लिखा—

"जब तक जिन्ना को यह महसूस होता रहेगा कि वे वायसराय के जरिए अपना वीटो इस्तेमाल करते रहेंगे; उनका दुराग्रह खत्म होने वाला नहीं है। लीग के समर्थकों में यह एहसास दिखाई देने लगा है कि जिन्ना का नेतृत्व उन्हें वीरानगी की तरफ धकेल रहा है।"

उधर ईद के शुभ अवसर पर 29 अगस्त के दिन बम्बई में जिन्ना ने अपने समर्थकों से यह अपील की थी—

"आप सब लीग के इर्द गिर्द गोलाबन्द हो जाएँ। आइए, इस डण्डे के नीचे एकताबद्ध राष्ट्र के रूप में एक मंच पर खड़े हों, बुरे से बुरे हालात का सामना करने के लिए दृढ़तापूर्वक तैयारी करते हुए हमारा उद्देश्य होना चाहिए—एकता, आस्था और अनुशासन के साथ-साथ खुदा हमारे साथ हैं और अब हम सफलता पाकर ही रहेंगे।"

कांग्रेस द्वारा अन्तरिम सरकार की बागडोर सँभालने के बाद सितम्बर को पूरा बम्बई साम्प्रदायिक दंगों से दहशत खा चुका था। रेंडहर्क्ट रोड पर मुसलमानों के घरों पर काले झण्डे लहरा रहे थे। प्रशासन ने हालातों पर काबू पाने के लिए कर्फ्यू

लगा दिया। चप्पे-चप्पे पर फौजी तैनात थे लेकिन दंगे की घटनाएँ बन्द होने का नाम नहीं ले रही थीं।

कराची में भी हिंसा छिड़ चुकी थी। भारत के इन बिगड़ते हुए हालातों से वायसराय वैवेल बहुत चिन्तित थे। उन्होंने पेथिक लॉरेंस को तार भेजा—

"डेढ़ साल बाद पूरे भारत पर शासन करना असम्भव होगा।"

वैवेल की इच्छा थी कि अंग्रेजों द्वारा भारत छोड़ने की घोषणा का 1 जनवरी को सार्वजनिक रूप से ऐलान कर देना चाहिए। मगर इंग्लैंड में बैठे हुक्मरान ऐसा करने को तैयार नहीं थे। उन्होने कहा—

"अंग्रेजों द्वारा भारत छोड़ने की घोषणा को सुनते ही हर कोई भारत की सत्ता हथियाने की होड़ में जुट जाएगा।"

कलकत्ता और बम्बई दंगों की आग में झुलस रहे थे और दिल्ली की बागडोर नेहरू के हाथों में थी। आग्रह पर वायसराय 9 दिसम्बर को संविधान सभा का 'अस्थायी आयोजन' करने के लिए तैयार हो गए। वैवेल को आशा थी कि 9 दिसम्बर तक लीग से कोई न कोई समझौता हो जाएगा।

वैवेल ने जिन्ना से 25 सितम्बर के दिन दो घण्टे बातचीत की। 26 सितम्बर को उन्होंने नेहरू से भी बातचीत की।

वैवेल चाहते थे कि जिन्ना व नेहरू मन्त्री-परिषद में उपराष्ट्रपति पद पर बारी-बारी से साझेदारी करें। इधर जिन्ना को भी पूरी उम्मीद थी कि कांग्रेस अपनी शुभ इच्छा दिखाने के लिए किसी गैर लीगी मुसलमान की नियुक्ति करेगी लेकिन इस बात के लिए कांग्रेस जरा भी तैयार नहीं थी।

इसके बाद वायसराय ने जिन्ना को मनाकर मुसलमान सीटों के लिए पाँच नाम माँगे ताकि मुस्लिम लीग को सरकार में शामिल किया जा सके। वायसराय की यह पेशकश स्वीकार कर ली गई।

वैवेल इस बात से बहुत खुश थे मगर वह यह नहीं जानते थे कि उनकी खुशी कुछ ही देर की है। जिन्ना के होठों पर कुछ और तथा मन में कुछ और था।

लीग अन्तरिम सरकार में शामिल होने के लिए तैयार थी। जिन्ना अपने पाँच मुसलमान नामों के साथ एक अनुसूचित जाति सदस्य का नाम भी पेश करने वाले थे। वह थे बैरिस्टर जे० एन० मंडल, जो उस समय बंगाल के कानून मन्त्री थे। जब यह बात वैवेल को पता लगी तो उन्होंने इस बात का खंडन किया।

जिन्ना निजी तौर पर सरकार से बाहर रहना चाहते थे। बम्बई के आई० आई० चुदरीगर, सीमा प्रान्त के अब्दुर-रबनश्तर और पंजाब के गजनफर अली खान को मिलकर बनी लीग की टीम का नेतृत्व लियाकत अली खान के हाथ में था। जिन्ना के लोगों को मन्त्री बनाने के लिए नेहरू ने अपने दो मुसलमान मंत्रियों, शाफात खान और सैय्यद जहीर और सुभाष बोस के भाई शरत बोस को मन्त्री पद से हटा दिया था।

यह नया गठजोड़ 15 अक्टूबर को किया गया। उस समय बंगाल से उत्तर-पश्चिम सीमान्त तक साम्प्रदायिक दंगे हो रहे थे जिसकी वजह से कांग्रेस

लीग सरकार का उद्घाटन काफी संकटग्रस्त प्रतीत हो रहा था। एक सबसे बड़ी बाधा यह भी उत्पन्न हो रही थी कि लीग तीन सबसे ताकतवर मन्त्रालयों में से एक पर दावा ठोक रही थी। ये मंत्रालय थे—विदेश मंत्रालय (नेहरू), गृहमंत्रालय (पटेल) और प्रति रक्षा मंत्रालय (बलदेव सिंह)। कांग्रेस इन तीनों मंत्रालयों को अपने पास रखना चाहती थी।

इसके अलावा नेहरू काफी विचलित थे क्योंकि 20 अक्टूबर को कराची में लियाकत अली ने भाषण दिया था, जो इस प्रकार था—

"लीग ने सरकार में जाने का फैसला इसलिए किया क्योंकि कांग्रेस दिल ही दिल में लीग की भागीदारी के विरुद्ध थी। इसलिए मुसलमानों को अपना लक्ष्य पाकिस्तान हासिल करने के लिए संघर्ष जारी रखना होगा।"

जवाहर लाल नेहरू ने तुरन्त ही इस भाषण के वापसी की माँग की और लीग के दीर्घकालीन इरादों के बारे में सफाई भी माँगी।

जवाहर लाल नेहरू लीग की तरफ से सहयोग और मिल-जुल कर काम करने का निश्चित आश्वासन चाहते थे। इसके साथ ही नेहरू ने कहा—

"अगर गृहमंत्रालय लीग के हिस्से में गया तो कांग्रेस सरकार से इस्तीफा दे देगी।"

जिन्ना से वायसराय से भेंट कर उनके सामने वित्त मंत्रालय की पेशकश रखी, जिसे जिन्ना ने मन्जूर कर ली। 26 अक्टूबर को सरकार के नए सदस्यों ने शपथ ली मगर उस अल्पजीवी केन्द्रीय सरकार में न कभी समरसता हो पाई और न कभी एकता की सच्ची भावना ही दिखाई दी।

वैवेल की बात मानकर जिन्ना ने सरकार में भागीदारी तो स्वीकार कर ली लेकिन वह उनकी एक चाल थी। उन्हें लीग की शक्तियों को फिर से संगठित करने के लिए कुछ समय चाहिए था।

जिस समय पूरा भारत साम्प्रदायिक दंगों की आग में झुलस रहा था, उस समय जिन्ना कांग्रेस को सीधी टक्कर देने के लिए और पाकिस्तान का कठिन लक्ष्य हासिल करने के लिए अपनी योजना को अमली जामा पहनाने में लगे थे।

9 दिसम्बर सन् 1946 ई० में संविधान सभा ने नई दिल्ली में अपनी पहली बैठक की। डॉक्टर राजेन्द्र प्रसाद संविधान सभा के सभापति चुने गए।

जिन्ना और लियाकत अली ने भारत लौटते हुए रास्ते में पैन इस्लामिक सम्मेलन में शिरकत की। 17 दिसम्बर को जिन्ना ने मिस्र के प्रधानमन्त्री नोक्राशी पांशा से मुलाकात की और कहा—

"पाकिस्तान की स्थापना के बाद भारत और मिस्र के मुसलमान वास्तव में आज़ाद होंगे, वरना मध्य पूर्व तक हिन्दू साम्राज्यवादी हुकूमत का खतरा अपनी बाहें फैलाता चला जाएगा।"

31 जनवरी सन् 1947 ई० को लीग की कार्यसमिति ने एक प्रस्ताव पारित करके मिशन को खारिज करने के कौंसिल द्वारा किए फैसले पर पुनर्विचार करने से इन्कार कर दिया। इस प्रकार संविधान सभा में लीग के शामिल होने की बाकी सम्भावनाएँ भी खत्म हो गईं।

☐



# विभाजन की योजना और विभाजन

बंगाल के मुख्यमंत्री ने पेशकश की कि कांग्रेस और फॉरवर्ड ब्लाक उनके साथ गठजोड़ सरकार बनाने के लिए तैयार हो जाएँ और अविभाजित बंगाल को एक स्वतन्त्र राष्ट्र का दर्जा दे दिया जाए।

माउंटबेटन के सामने विभाजन के अलावा कोई दूसरा रास्ता नहीं बचा था। इस दौरान कृष्ण मेंनन लगातार माउंटबेटन के सम्पर्क में थे। मेंनन ने माउंटबेटन को अमेरिका के भारत सम्बन्धी इरादों के बारे में चेतावनी दी कि वह सभी बाजारों पर कब्जा करके अंग्रेजों की जगह ले लेना चाहता है और अन्त में रूस के विरुद्ध इस्तेमाल करने के लिए भारत में फौजी अड्डे बनाने के चक्कर में है।

माउंटबेटन ने उसे समझाया कि पाकिस्तान, जो राष्ट्रमंडल में रहने के लिए उत्सुक है वह हिन्दुस्तान के मामले में कहीं ज्यादा ताकतवर सेनाएँ खड़ी कर लेगा। मेरा मानना है कि ब्रिटिश राष्ट्रमंडल के तहत कराची जैसी जगह पर एक बहुत बड़ा नौसैनिक हवाई अड्डा बन सकता है।

माउंटबेटन की बात सुनकर मेंनन कांप उठे। उन्होंने नेहरू व पटेल को भारत के लिए स्वतन्त्र उपनिवेश के दर्जे की माँग करने के लिए मानने की पूरी कोशिश की और सफल भी हुए।

जिन्ना की बहन फातिमा का रवैया भी कट्टरपंथी था। उनसे लेडी माउंटबेटन ने पूछा—

"आखिर पाकिस्तान का व्यवहारिक रूप कारगर कैसे साबित होगा?"

फातिमा बोली—"एक बार जब मुसलमानों की माँग मान ली जाएगी तो फिर ये समस्याएँ आसानी से हल कर ली जाएगी।"

19 मई सन् 1947 ई० में लंदन में माउंटबेटन ने एटली से कहा—

"यह बात स्पष्ट हो चुकी है कि अगर पाकिस्तान की माँग किसी न किसी रूप में न मानी गई तो मुस्लिम लीग हथियार उठा लेगी।"

21 मई को लंदन पहुँचकर कृष्ण मेंनन ने माउंटबेटन को बताया कि नेहरू व पटेल स्वतन्त्र उपनिवेश का दर्जा स्वीकार करने के लिए तैयार है। उन्होंने पत्र द्वारा माउंटबेटन को लिखा—

"अगर हम शान्ति की खातिर जिन्ना की विभाजन माँग को स्वीकार कर लेते हैं तो हमारे पास जो देश बचता है उसमें हम जिन्ना की कोई दखलअन्दाजी सहन नहीं करेंगे।"

सोमवार, 2 जून, सन् 1947 ई० को माउंटबेटन ने नई दिल्ली स्थित अपने आवास में भारत के राजनीतिक नेताओं से भेंट की। दो घन्टे चली उस बैठक में उन नेताओं को विभाजन की योजना बताई और उनसे कहा—"आप मुझे अपना

जवाब दें।"

तीन जून की रात को विभाजन की योजना की औपचारिक घोषणा हुई। शाम सात बजे ऑल इंडिया रेडियो पर वायसराय ने घोषणा की—

"20 फरवरी 1947 ई० को हिज मेंजेस्टी की सरकार ने सत्ता हस्तांतरण के इरादे की घोषणा की थी। जून 1947 ई० तक हमें उम्मीद थी कि सभी पक्ष सहयोग पर तैयार हो जाएँगे। मगर यह उम्मीद पूरी नहीं हुई। नीचे जिस प्रक्रिया की रूप रेखा द्री जा रही है उसमें जन-इच्छाओं की पूर्ति सुनिश्चित करने का सर्वाधिक व्यवहारिक तरीका निहित प्रतीत होता है कि सत्ता किस प्राधिकार या किन प्राधिकारों को हस्तांतरित की जानी चाहिए।"

इसके बाद वायसराय की घोषणा में पाकिस्तान के प्रान्तीय और जिलावार हिस्सों को गिनाया गया। फिर जिन्ना व नेहरू ने भाषण दिया।

नेहरू के भाषण के अन्तिम शब्द थे—'जय हिन्द'

जिन्ना के भाषण के अन्तिम शब्द थे—'पाकिस्तान जिन्दाबाद'

1 से 10 जून तक सन् 1947 ई० में ऑल इण्डिया मुस्लिम लीग अन्तिम बैठक नई दिल्ली के इम्पीरियल होटल में हुई। बैठक में विभाजन योजना पर ऐतिहासिक चर्चा होनी थी लेकिन यहाँ मौजूद कुछ लोगों का इरादा कुछ और ही था। ये सभी बालरूम के बाहर जमा होकर विभाजन योजना के खिलाफ अपनें गुस्से का इजहार कर रहे थे।

सुबह के अखबारों में यह खबर सुर्खियों के साथ छपी थी—

"जिन्ना की हत्या करने के लिए झटपटाने वाले करीब पचास लोग गिरफ्तार।

27 जून को माउंटबेटन ने पाकिस्तान स्थापना के लिए 15 अगस्त तय कर दी। ब्रिटेन के मशहूर बैरिस्टर सर सिरिल रेडक्लिफ को विभाजन सीमा आयोगों का अध्यक्ष नियुक्त किया गया।

14 अगस्त तक हजारों लोगों को यकीन था कि लाहौर भारत के हिस्से में ही आएगा मगर ऐसा नहीं हुआ। उन्हें बंटवारे के बाद सब कुछ छोड़कर जान बचाने के लिए भागना पड़ा।

जिन्ना अपने भारत स्थित घरों को बेचने में लगे हुए थे। उन्होने वहाँ काफी घर खरीद रखे थे। इस बंटवारे से पूरे देश में हलचल थी।

अगली सुबह रेडक्लिफ ने जैसे ही सीमाओं के बारे में अपना फैसला सुनाया वैसे ही भारत की संविधान सभा और लाल किले पर होने वाली आजादी के समारोह पर पानी फिर गया।

अमृतसर के अन्दर सिक्खों के और मुसलमानों के बीच फैले दंगे में दोनों एक-दूसरे को मार रहे थे। ऐसे गिरोहों का पुलिस भी साथ दे रही थी। शरणार्थियों से भरी ट्रेनों को बेरहमी से जला दिया गया था। भारत का बँटवारा हो गया था। पाकिस्तान बन गया था। शरणार्थी जान हथेली पर रख कर पाकिस्तान से हिन्दुस्तान, और हिन्दुस्तान से पाकिस्तान जा रहे थे।

इस बँटवारे के बाद, जिन्ना की शारीरिक कमजोरी बढ़ती जा रही थी। क्षय

रोग उनके फेफड़े खाए जा रहा था। पाकिस्तान के खजाने में बीस करोड़ रुपये थे जबकि उस समय चालीस करोड़ की जरूरत थी। बाकी बीस करोड़ जिन्ना ने हैदराबाद के निजाम से कर्ज लिया।

बँटवारे के बाद दोनों राष्ट्रों को परेशानी का सामना करना पड़ रहा था। दोनों के सीने वारों से जख्मी थे। ऐसी स्थिति में भारत-पाकिस्तान युद्ध भी हो सकता था।

जिन्ना पाकिस्तान को दुनिया की नज़रों में एक महान राष्ट्र बनाना चाहते थे मगर ऐसा कर पाना उनकी किस्मत में नहीं था।

इधर महात्मा गाँधी ने आमरण अनशन करके भारतीय मन्त्री-परिषद को पाकिस्तान के हिस्से के 55 करोड़ रुपये अदा करने के लिए राजी कर लिया। इस घटना से क्रोधित होकर बाद में, अवसर पाकर 30 जनवरी 1948 को नाथू राम गोडसे नामक एक उन्मादी हत्यारे ने उनकी हत्या कर दी।

महात्मा गाँधी की हत्या पर शोक सान्तवना का संदेश भेजते हुए अपने सन्देश में जिन्ना ने कहा—"वे हिन्दू समुदाय के महानतम पुत्रों में से एक थे।"

जिन्ना का यह शोक संदेश, भारत राष्ट्र के लोगों के लिए कतई-कतई स्वीकार न था। महात्मा गाँधी भारत के राष्ट्रपिता थे, हैं और रहेंगे।

□



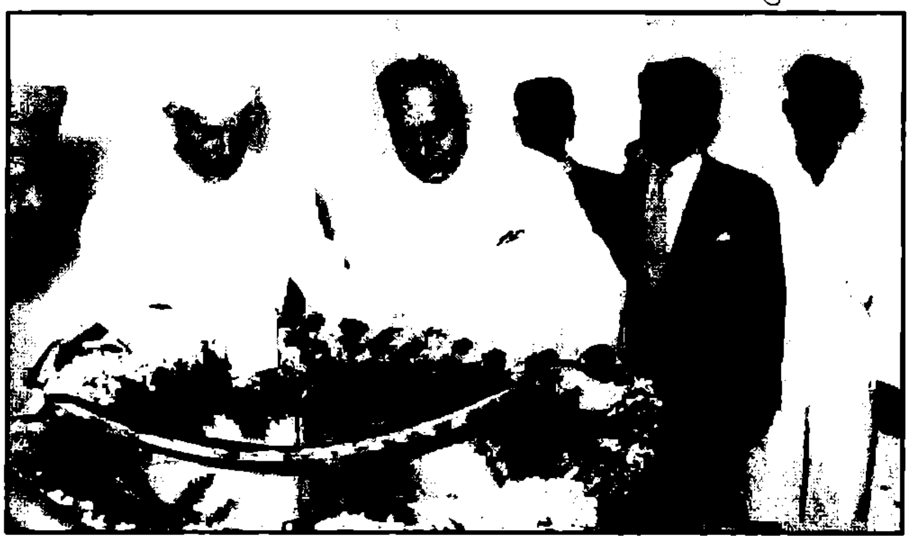
# जिन्ना का अन्तिम सफर

पाकिस्तान बनवा लेने के बाद जिन्ना को उनके फेफड़ों में पल रही बीमारी ने काफी चिड़चिड़ा बना दिया था। दिन-प्रतिदिन कमजोरी बढ़ती जा रही थी और मौत उनके करीब आती जा रही थी।

डाक्टरों की सलाह पर फातिमा जिन्ना अपने भाई को क्वेटा ले गई। वहाँ पहाड़ी पर ठण्डी हवा में जिन्ना को काफी आराम मिला। डाक्टरों ने सलाह दी कि उन्हें काफी ऊँची जगह पर ले जाया जाए।

क्वेटा से कई हजार फुट ऊपर 'जियारत' नामक एक बलूची हिल स्टेशन पर जिन्ना को ले जाया गया। वहाँ का वातावरण जिन्ना को बहुत पसन्द आया। वहाँ जिन्ना के उपचार के लिए इण्डियन मेंडिकल सर्विस के लेफ्टिनेंट कर्नल इलाही बख्श जा पहुँचे।

उन्होंने जिन्ना की जाँच की तो रिपोर्ट में उनका शक सही साबित हुआ। जिन्ना



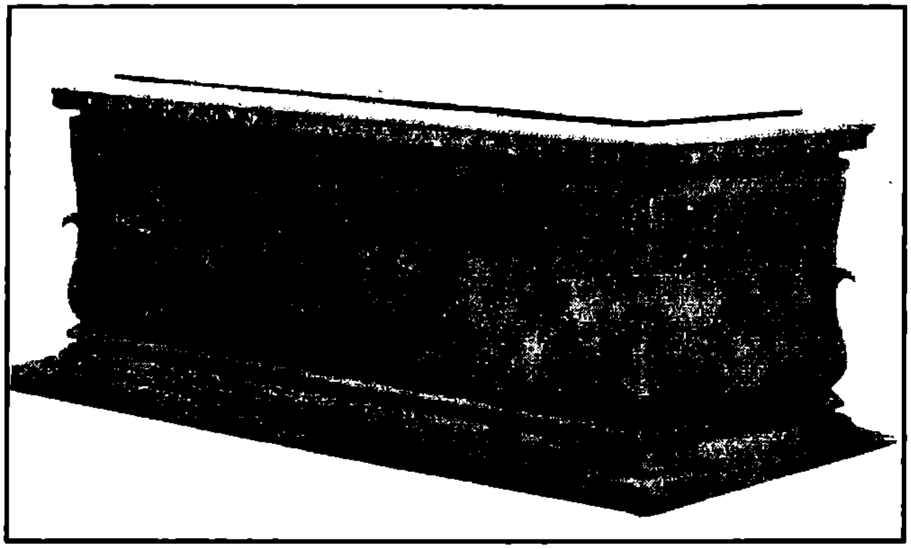
*मुहम्मद अली जिन्ना की कब्र पर फूल-माला चढ़ाते जवाहर लाल नेहरू व अन्य*

को फेफड़ों की घातक बीमारी लगी थी। बख्श ने लाहौर में अपने अस्पताल में तार भेजकर अपने तीन सबसे अच्छे विशेषज्ञों को विमान द्वारा वहाँ बुला लिया।

उधर, इस्पहानी और लियाकत अली भी जिन्ना की बीमारी को लेकर काफी चिंतित थे। हर दवा जिन्ना पर बेअसर दिखाई दे रही थी।

जिन्ना का वजन तेजी के साथ घट रहा था। बीमारी की हालत में ही उन्होंने पाकिस्तान की आज़ादी की पहली वर्षगांठ मना ली थी।

10, सितम्बर 1948 ई० तक जिन्ना को टी० बी० और फेफड़ों के कैंसर के



*पाकिस्तान के कराची शहर में मुहम्मद अली जिन्ना की कब्रगाह*

साथ-साथ निमोनिया भी हो गया था। हिल स्टेशन से एम्बुलेंस द्वारा जिन्ना को 6:10 बजे उनके आवास तक लाया गया। वहाँ आकर जिन्ना काफी गहरी नींद में सोते रहे। उनकी बहन फातिमा जिन्ना उनके पास ही बैठी थी।

पाकिस्तान में फातिमा के अलावा जिन्ना का कोई और रिश्तेदार नहीं था। उनकी इकलौती बेटी दीना ने पारसी परिवार में पैदा हुए एक ईसाई युवक नेबिल वाडिया से शादी कर ली थी। वह कभी अपने पिता के साथ रहने के लिए पाकिस्तान नहीं आई।

11 सितम्बर, 1948 ई०, गहरी नींद सोते हुए जिन्ना ने अचानक आँखें खोली और बड़बड़ाए—"फाती— ।"

इसी के साथ उनकी गर्दन दायीं तरफ ढुलक गई। आँखें बन्द हो गईं।

इस प्रकार, 11 सितम्बर सन् 1948 ई० की रात 10:20 बजे, पाकिस्तान के जन्मदाता मुहम्मद अली जिन्ना अपने जीवन का अन्तिम सफर पूरा कर इस दुनिया क़ो अलविदा कह गये थे।

**समाप्त**

मुहम्मद अली जिन्ना हिन्दुस्तान की उस हस्ती का नाम है जिसने गोखले जैसे राष्ट्रवादी को अपना गुरु माना। बाल गंगाधर तिलक जैसे इंसान की पैरवी का मुकदमा लड़ा। अपने व्यक्तित्व से सरोजनी नायडू को प्रभावित किया और महात्मा गांधी से पहले, कांग्रेस में अपने आप को प्रतिष्ठित किया। वे पूरे राष्ट्रवादी, आज़ादी के आन्दोलन की अग्रिम पंक्ति के नेता बने। पर 1940 ई. आते-आते राष्ट्रवादी इंसान पूरी तरह से अलगाववादी बन गया। पाकिस्तान से कम बंटवारे के लिए राज़ी न हुआ। ऐसी कौन सी परिस्थितियां आयीं जिसने राष्ट्रवादी को क़ायदे-आज़म बनने को मजबूर कर दिया? इस तथ्य पर पुस्तक में प्रकाश डालने का प्रयास किया गया है।

ravi

रवि पॉकेट बुक्स

उच्चस्तरीय साहित्यिक पुस्तकों के प्रकाशक

S-446

ISBN 81-7789-226-6

₹ 20/-

A.H.W. RAVI SERIES